Centre for Distance & Online Education
(CDOE)

Bachelor of Arts
(B.A.) SEM. VI

PUBA-302

ADMINISTRATIVE ETHICS IN GOVERNANCE

Guru Jambheshwar University of Science & Technology, HISAR-125001

CONTENTS

No.	Title	Author	Page
1	नैतिकता – अवधारणा और महत्व, प्रमुख अवधारणाएँ (Ethics–concept and significance, Key concepts)	Dr.Parveen Sharma	3
2	प्रशासनिक नैतिकता के विकास में कौटिल्य व महात्मा गांधी का योगदान(Contribution of Kautilya and Mahatma Gandhi in the development of administrative ethics)	Dr.Parveen Sharma	50
3	सुकरात (नैतिक सिद्धांत), और इमैनुअल कांट का कर्तव्य सिद्धांत Socrates (Moral Theory) and Immanuel Kant (Deontological theory)	Dr.Parveen Sharma	79
4	अनुप्रयुक्त नैतिकता- असमानता, गर्भपात, भ्रूण हत्या, आत्महत्या, पर्यावरण क्षरण (Applied ethics:inequality,abortion,foeticide, suicide, environmental degradation)	Dr. Parveen Sharma	107
5	मृत्युदंड और नैतिक दुविधाओं प्रकृति (Capital punishment and nature of moral dilemmas)	Dr. Parveen Sharma	146
6	सिविल सेवा तटस्थता और अनामता , शासन में नैतिक और आचारिक मूल्यों का महत्व (Civil service neutrality and anonymity, importance of ethical and moral values in governance)	Dr. Parveen Sharma	163
7	भारत में सिविल सेवाओं के लिए आचार संहिता और आचरण संहिता (code of ethics and code of conduct for civil services in india)	Dr. Parveen Sharma	184
8	लोक भ्रष्टाचार-कारण और उपाय,भारत में भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए संस्थागत व्यवस्था: सीवीसी, सीबीआई, लोकपाल और लोकायुक्त Corruption- Causes and Remedies, Institutional Arrangements to Fight Corruption in India: CVC CBI, Lokpal and Lokayuktas	Dr.Parveen Sharma	201

Subject : Public Administration -Administrative ethics in governance	
Course Code : PUBA 302	**Author :** Dr. Parveen sharma
Lesson No. : 1	**Vetter :**
नैतिकता – अवधारणा और महत्व, प्रमुख अवधारणाएँ (Ethics–concept and significance, Key concepts)	

अध्याय की सरंचना

1.1.**अधिगम उद्देश्य** (Learning Objectives)

1.2.**परिचय** (Introduction)

1.3.**अध्याय के मुख्य बिन्दु** (Main Points of the Text)

1.3.1.**नीतिशास्त्र का अर्थ व परिभाषा** (Meaning and definition of ethics)

1.3.2.**नीतिशास्त्र की विशेषताएँ** (Characteristics of ethics)

1.3.3.**राजनीतिशास्त्र और नीतिशास्त्र** (Politics and Ethics)

1.3.4.**प्रशासनिक नैतिकता** (Administrative Ethics)

1.4 **पाठ का आगे का मुख्य भाग** (Further Main Body of the Text)

1.4.1. **अधिकार** (Rights)

1.4.2. '**कर्तव्य**' (Duty)

1.4.2.1.**कर्तव्य की विशेषताएं** (Features of duty)

1.4.2.2.**मनुष्य के मूल कर्तव्य** (fundamental duties of man)

1.4.2.3.**सवैंधानिक कर्तव्य** (constitutional duties)

1.4.2.4.**कर्तव्य और अधिकार** (Duties and rights)

1.4.3.**बंधुत्व** (Fraternity)

1.4.3.1.**बंधुत्व और प्रशासनिक नैतिकता का संबंध** (Relation between fraternity and administrative ethics)

1.4.3.2.**प्रशासनिक नैतिकता में बंधुत्व की चुनौतियां** (Challenges of Fraternity in Administrative Ethics)

1.4.3.3.**बंधुत्व और प्रशासनिक नैतिकता को सुदृढ़ करने के उपाय** (Measures to strengthen fraternity and administrative ethics)

1.4.4.**कर्म सिद्धांत** (Karma theory)

1.4.4.1.**कर्म व प्रशासनिक नैतिकता** (Karma and Administrative Ethics)

1.4.4.2.**कर्म सिद्धांत और प्रशासनिक नैतिकता को मजबूत करने के उपाय** (Measures to strengthen Karma theory and administrative ethics)

1.4.4.3.**कर्म सिद्धांत की प्रशासनिक नैतिकता में प्रासंगिकता** (Relevance of Karma theory in administrative ethics)

1.4.5.**धर्म** (Religion)

1.4.5.1.**प्रशासनिक नैतिकता में धर्म का महत्व** (Importance of religion in administrative ethics)

1.4.5.2.**धर्म और प्रशासनिक नैतिकता की चुनौतियां** (The challenges of religion and administrative ethics)

1.4.5.3.**धर्म और प्रशासनिक नैतिकता को सुदृढ़ करने के उपाय** (Measures to strengthen religion and administrative ethics)

1.4.5.3.**धर्म और प्रशासनिक नैतिकता को सुदृढ़ करने के उपाय** (Measures to strengthen religion and administrative ethics)

1.4.6.**पुरुषार्थ** (Purusharth)

1.4.6.1.**पुरुषार्थ और प्रशासनिक नैतिकता** (Purusharth and administrative ethics)

1.4.6.2.**पुरुषार्थ और प्रशासनिक नैतिकता के लाभ** (Advantages of Purushaarth and Administrative Ethics)

1.4.7.**प्रशासनिक नैतिकता और समानता** (Administrative Ethics and Equity)

1.4.7.1.**प्रशासनिक नैतिकता में समानता का महत्व** (Importance of Equity in Administrative Ethics)

1.4.7.2.**समानता को सुनिश्चित करने में प्रशासनिक नैतिकता की भूमिका** (Role of administrative ethics in ensuring equality)

1.4.7.3.**चुनौतियां** (Challenges)

1.4.7.4.**समानता आधारित प्रशासनिक नैतिकता को मजबूत करने के उपाय** (Measures to strengthen equality based administrative ethics)

1.4.8.**स्वतंत्रता** (Freedom)

1.4.8.1.**स्वतंत्रता के विभिन्न प्रकार** (Different Types of Freedom):

1.4.8.2.**स्वतंत्रता के महत्व** (Importance of Independence)**:**

1.4.8.3.**स्वतंत्रता की सीमाएँ** (The limits of freedom)**:**

1.4.8.4.**प्रशासनिक नैतिकता और स्वतंत्रता**

1.4.8.5.**प्रशासनिक नैतिकता और स्वतंत्रता को प्रभावित करने वाले कारक** (Factors affecting administrative ethics and independence)

1.4.8.6.**प्रशासनिक नैतिकता और स्वतंत्रता के बीच संतुलन** (Balance between administrative ethics and independence)

1.4.8.7.**स्वतंत्रता आधारित प्रशासनिक नैतिकता को मजबूत करने के उपाय** (Measures to strengthen independence based administrative ethics)

1.5.**स्वयं प्रगति जाँच** (Check your progress)

1.6.**सारांश** (Summary)

1.7.**सूचक शब्द** (Key Words)

1.8.**स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न** (Self-Assessment Questions)

1.9.**उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच** (Answers to check your progress)

1.10.**सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें** (References / Suggested Readings)

1.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय का अध्ययन करने के बाद विद्यार्थी -

- नैतिकता की प्रकृति को जान पाएंगे;
- नीतिशास्त्र को जान पाएंगे.;
- प्रशासनिक नैतिकता को जान पाएंगे;
- प्रशासनिक नैतिकता के महत्व को जान पाएंगे ;
- प्रशासनिक नैतिकता से जुडी विभिन्न अवधारणाओं को जान पायेगें;

1.2.परिचय (Introduction)

मनुष्य के व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन से सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्नों जैसे , जब हम यह कहते हैं कि अमुक व्यक्ति अथवा उसका चरित्र अच्छा या बुरा है, अमुक कर्म उचित अथवा अनुचित है, कुछ विशेष परिस्थितियों में कोई कर्म करना अथवा न करना ही हमारा कर्तव्य है तो इन वाक्यों अथवा निर्णयों का वास्तविक अभिप्राय क्या होता है? दूसरे शब्दों में, जब हम अपने दैनिक जीवन में 'अच्छा', 'बुरा', 'शुभ', 'अशुभ', 'उचित', 'अनुचित, 'कर्तव्य' आदि शब्दों का वाक्यों में प्रयोग करते हैं तो इन वाक्यों द्वारा क्या कहना चाहते हैं? क्या अपने इस प्रकार के निर्णयों को सत्य प्रमाणित करने के लिए तर्क- संगत कारण प्रस्तुत कर सकते हैं ? यदि हां तो वे कौन-से कारण हैं और उन कारणों को उचित अथवा तर्कसंगत क्यों माना जाना चाहिए ? क्या मनुष्य को कुछ कर्म करने अथवा न करने की स्वतन्त्रता है? क्या उसे अपने कुछ विशेष कर्मों के लिए उत्तरदायी माना जा सकता है? यदि हां तो उसे क्यों और कहां तक और अपने किन कर्मों के लिए उत्तरदायी मानना आवश्यक है? मनुष्य होने के नाते हमारे कर्तव्य क्या हैं और उनका निर्धारण किस आधार पर तथा किसके द्वारा किया जा सकता है ?क्या हमारे समस्त कर्मों का उद्देश्य केवल अपना सुख और हित होना चाहिए अथवा हमें दूसरों के सुख तथा हित के लिए ही

सब कुछ करना चाहिए ? यदि अपने और दूसरों के सुख तथा हित में संतुलन बनाए रखना आवश्यक है तो इस संतुलन का आधार एवं उपाय क्या है? जब व्यक्ति और समाज के हितों में संघर्ष होता है तो उसे किस उपाय अथवा विधि द्वारा कम या समाप्त किया जाना चाहिए ? , क्या मानव के जीवन का कोई परम लक्ष्य अथवा अन्तिम साध्य है ? यदि हो तो यह परम लक्ष्य क्या है और इसे कैसे प्राप्त किया जाना चाहिए? क्या दूसरों की चिन्ता किए बिना मनुष्य को जीवन के इस परम लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए? मानव-जीवन के इन आधारभूत प्रश्नों तथा ऐसे ही अन्य अनेक प्रश्नों पर नीतिशास्त्र अथवा नैतिक दर्शन व्यवस्थित रूप से विचार करता है और उनका समुचित एवं संतोषप्रद उत्तर खोजने का प्रयत्न करता है।

1.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

1.3.1.नीतिशास्त्र का अर्थ व परिभाषा (Meaning and definition of ethics)

नीतिशास्त्र का जन्म मनुष्य के सामाजिक जीवन के साथ ही किसी न किसी रूप में हुआ। जब से मनुष्य ने दूसरों के साथ मिलकर समाज का निर्माण किया और उसी में रहकर अन्य व्यक्तियों के सहयोग से अपनी समस्याओं का समाधान खोजने लगा तभी से उसे कुछ ऐसे नियमों की आवश्यकता पड़ी जो उसकी तथा दूसरे मनुष्यों की इच्छाओं, रुचियों, आकांक्षाओं, उद्देश्यों में होने बाले संघर्ष को कम या समाप्त कर सकें और जिनका पालन करके वह दूसरों के साथ सुखपूर्वक रहते हुए सामंजस्यपूर्ण सामाजिक जीवन व्यतीत कर सके । कालान्तर में धीरे-धीरे इन्ही नियमों ने सामाजिक परम्पराओं अथवा रीति- रिवाजों का रूप ग्रहण कर लिया जिनका पालन करना समाज के सदस्य के रूप में प्रत्येक मनुष्य के लिए आवश्यक समझा जाने लगा। वस्तुतः इन सामाजिक परम्पराओं,अथवा रीति-रिवाजों से ही उस शास्त्र या विज्ञान का विकास हुआ जिसे आज हम 'नीतिशास्त्र' कहते हैं। यही कारण है कि आज भी अधिकतर सामान्य व्यक्ति सामाजिक परम्पराओं तथा नैतिक नियमों में कोई स्पष्ट और निश्चित भेद नहीं कर पाते। इससे प्रचलित रीति- रिवाजों अथवा परम्पराओं के साथ नीतिशास्त्र का अटूट सम्बन्ध प्रमाणित होता है। इसके अतिरिक्त नीतिशास्त्र या नैतिक दर्शन के अंग्रेजी पर्यायों जैसे 'एथिक्स' तथा 'मोरल फिलोसोफी' पर विचार करने से भी यही ज्ञात होता है कि इसका उद्गम और विकास रीति-रिवाजों अथवा परम्पराओं से ही हुआ है। 'एथिक्स' शब्द की व्युत्पत्ति यूनानी भाषा के शब्द 'एथिका' से हुई है जो उसी भाषा के शब्द 'एथोस' से व्युत्पन्न हुआ है जिसका अर्थ होता है रीति-रिवाज । इसी प्रकार 'मोरल' शब्द लेटिन भाषा के 'मोरेस' शब्द से व्युत्पन्न हुआ है जिसका अर्थ भी रीति या रिवाज ही होता है। इससे यह स्पष्ट है कि नीति- शास्त्र का प्रचलित रीति-रिवाजों तथा सामाजिक परम्पराओं से बहुत घनिष्ठ सम्बंध रहा है।

परन्तु आज जिस विकसित रूप में हम नीतिशास्त्र अथवा नैतिक दर्शन को देखते हैं वह सामाजिक परम्पराओं या रीति-रिवाजों से भिन्न है। वस्तुतः वर्तमान युग में अन्य अनेक विज्ञानों की भांति नीतिशास्त्र भी एक उन्नत विज्ञान का रूप ग्रहण कर चुका है जिसमें मनुष्य के कुछ विशेष कर्मों पर व्यवस्थित ढंग से विचार करके उनके सम्बंध में निर्णय दिया जाता है। इस दृष्टि से सक्षेप में नीतिशास्त्र की निम्नलिखित परिभाषा दी जा सकती है। नीतिशास्त्र वह मानकीय अथवा आदर्शमूलक विज्ञान है जो सामाजिक जीवन व्यतीत करने वाले सामान्य मनुष्यों के आचरण या ऐच्छिक कर्मों पर निष्पक्ष एवं व्यवस्थित रूप से विचार करके उनके सम्बंध में उचित, अनुचित अथवा शुभ, अशुभ का निर्णय देने के लिए मापदण्ड प्रस्तुत करता है और इस निर्णय के आधार के लिए कुछ मूल सिद्धांतों अथवा मानकों या आदर्शों की स्थापना करता है। नीतिशास्त्र की उक्त परिभाषा संक्षिप्त प्रतीत होते हुए भी वास्तव में बहुत व्यापक है

इस परिभाषा को को निम्न भागों में समझ सकते हैं- - (1) नीतिशास्त्र एक 'विज्ञान' है। (2) यह एक आदर्श- मूलक' विज्ञान है। (3) यह केवल 'मनुष्यों' के आचरण पर विचार करता है। (4) यह 'समाज में रहने वाले सामान्य मनुष्यों के आचरण के सम्बन्ध में ही निर्णय देता है। (5) यह कुछ 'मूल सिद्धांतों' अथवा 'आधारभूत आदशों' की स्थापना करता है।

- अधिकतर विचारक नीतिशास्त्र को विज्ञान मानते हैं, क्योंकि इसमें विज्ञान की मुख्य विशेषताएं पायी जाती हैं। किसी विषय, वस्तु अथवा घटना का यथासम्भव पूर्ण, क्रमबद्ध तथा व्यवस्थित विवेचन करना और पूर्णतया निष्पक्ष होकर उससे सम्बंधित सत्य का अनुसंधान करना विज्ञान का प्रमुख उद्देश्य होता है। इस प्रकार क्रमबद्धता, निष्पक्षता, वस्तुनिष्ठता तथा सत्य की खोज विज्ञान की प्रमुख विशेषताएं हैं। अधिकतर दार्शनिकों का मत है कि ये सभी विशेषताएं नीतिशास्त्र में भी विद्यमान हैं। नीतिशास्त्र भी मानव जीवन से सम्बन्धित नैतिक समस्याओं पर निष्पक्ष और व्यवस्थित रूप से विचार करता है। वह मनुष्य के स्वभाव तथा उसकी क्षमताओं के आधार पर इन समस्याओं का स्पष्टीकरण एवं समाधान करने का प्रयत्न करता है और मानव जीवन के पथप्रदर्शन के लिए कुछ मूल सिद्धान्तों अथवा आदों की स्थापना करने का प्रयास करता है। पर्याप्त कारण, समुचित तर्क एवं निष्पक्ष परीक्षा के अभाव में वह किसी व्याख्या, समाधान, सिद्धांत अथवा आदर्श को स्वीकार नहीं करता। अतः उसे विज्ञान मानना उचित ही है।
- परंतु नीतिशास्त्र वस्तुपरक या विवरणात्मक विज्ञान न होकर मान- कीय अथवा आदर्शमूलक विज्ञान है। जो विज्ञान किसी विषय, वस्तु या घटना का मूल्यांकन न करके उसका केवल तथ्यात्मक वर्णन करते हैं उन्हें

विवरणात्मक विज्ञान कहा जाता है। उदाहरणार्थ वनस्पतिशास्त्र एक विवरणात्मक विज्ञान है, क्योंकि वह पेड़ पौधों का उसी रूप में वर्णन करता है जिस रूप में वे पाये जाते हैं। वह उन्हें अच्छे या बुरे, सुन्दर अथवा कुरूप कहकर उनका मूल्यांकन नहीं करता। इसी प्रकार मनोविज्ञान भी एक विवरणात्मक विज्ञान है, क्योंकि वह भी मनुष्य की मानसिक क्रियाओं का मूल्यांकन न करके उनका उसी रूप में वर्णन करता है जिस रूप में वे होती हैं। उदाहरणार्थ वह बताता है कि हम चितन, अनुभव तथा कर्म कैसे करते हैं, हमारी इच्छाओं, भावनाओं एवं संवेगों का उद्गम और स्वरूप क्या है, हम किसी विषय को कैसे सीखते हैं और उस पर कैसे ध्यान केन्द्रित करते हैं, हम किसी सीखे हुए विषय अथवा अनुभव की हुई घटना का पुनःस्मरण कैसे करते हैं, इत्यादि। वह इन मानसिक क्रियाओं को शुभ अथवा अशुभ कहकर उनका मूल्यांकन नहीं करता। अधिकतर सामाजिक तथा भौतिक विज्ञान ऐसे ही विवरणात्मक विज्ञान हैं। परंतु कुछ ऐसे विज्ञान भी हैं जो विवरणात्मक विज्ञान की उक्त श्रेणी में नहीं रखे जा सकते क्योंकि इन विज्ञानों का मुख्य उद्देश्य किसी विषय अथवा वस्तु का केवल तथ्यात्मक वर्णन न होकर उसका मूल्यांकन करना होता है। इन सभी विज्ञानों को मानकीय अथवा आदर्शमूलक विज्ञान कहा जाता है। क्योंकि मूल्यांकन किसी मानक अथवा आदर्श के दृष्टिकोण से किया जाता है। किसी वस्तु का मूल्यांकन करने का अर्थ यह निर्णय करना है कि वह वस्तु उस मानक अथवा आदर्श के अनुरूप है या नहीं। उदाहरणार्थ, जब हम किसी वस्तु को सुन्दर कहकर उसका मूल्यांकन करते हैं तब हम यह निर्णय दे रहे हैं कि वस्तु हमारे सौंदर्य के आदर्श के अनुरूप है । तर्कशास्त्र, सौंदर्यशास्त्र तथा नीतिशास्त्र ऐसे ही आदर्श मूलक विज्ञान है। तर्क- शास्त्र हमारे दैनिक जीवन में प्रयुक्त वाक्यों तथा युक्तियों के सत्यासत्य की जांच करने के लिए प्रामाणिक नियमों की स्थापना करता है। सौंदर्यशास्त्र हमें यह बताता है कि हम किस आधारपर किसी वस्तु को सुन्दर अथवा असुन्दर कह सकते हैं। इसी प्रकार नीतिशास्त्र का उद्देश्य हमें यह बताना है कि हम किन नियमों, सिद्धांतों अथवा आदशों के आधार पर किसी कर्म को उचित या अनुचित और किसी व्यक्ति तथा उसके चरित्र को शुभ या अशुभ, अच्छा या बुरा कह सकते हैं। वह हमें यह भी बताता है कि हम जिस नियम, आदर्श या सिद्धांत के आधार पर मनुष्य के कर्मों तथा चरित्र का निर्णय करते हैं वह क्यों उचित -अनुचित, शुभ-अशुभ कहना केवल वर्णन करना नहीं बल्कि मूल्यांकन करना है और जिन नियमों, सिद्धान्तों अथवा आदर्शों के आधार पर हम आच- रण को उचित-अनुचित, शुभ-अशुभ कहते हैं, वे इस मूल्यांकन के मानक होते हैं। और मान्य हैं। इस प्रकार विवरणात्मक विज्ञानों के विपरीत नीतिशास्त्र का उद्देश्य मनुष्य और उसके कर्मों का तथ्यात्मक वर्णन न होकर उनके मूल्यांकन के मानक का निरूपण करना ही है। यही कारण है कि इसे आदर्शमूलक विज्ञान माना जाता है।

- परन्तु नीतिशास्त्र केवल सामान्य मनुष्य के ऐच्छिक कर्मों का ही मूल्यांकन करता है, मानसिक दृष्टि से विक्षिप्त व्यक्तियों, बहुत छोटे बालकों तथा पशुओं के कर्मों का नहीं। मनुष्य के कर्मों को मुख्यतः दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है- अनैच्छिक कर्म तथा ऐच्छिक कर्म। अनैच्छिक कर्म वे हैं जिन पर मनुष्य का कोई नियन्त्रण नहीं रहता और जिन्हें करने अथवा न करने के लिए वह स्वतन्त्र नहीं होता। उदाहरणार्थ पाचन क्रिया, हृदय की धड़कन, रक्त-संचार आदि क्रियाएं मनुष्य के जीवन के लिए अनिवार्य हैं, किन्तु ये सब क्रियाएं उसके नियन्त्रण में नहीं होतीं और वह इन्हें जान-बूझकर स्वयं नहीं करता। यही कारण है कि इन क्रियाओं को अनैच्छिक कर्म कहा जाता है। इसी अर्थ में मानसिक दृष्टि से विक्षिप्त व्यक्तियों, बहुत छोटे शिशुओं तथा पशुओं के कर्म भी अनैच्छिक माने जाते हैं, क्योंकि वे इन कर्मों को अपनी स्वतन्त्र इच्छा के अनुसार सोच-समझ कर नहीं करते। वे ये सब कर्म कुछ ऐसी शक्तियों के वशी- भूत होकर करते हैं जिन पर उनका कोई नियन्त्रण नहीं होता। नीतिशास्त्र ऐसे अनैच्छिक कर्मों का मूल्यांकन नहीं करता, क्योंकि इनके सम्बन्ध में कर्ता को किसी प्रकार की स्वतन्त्रता नहीं होती।इसके विपरीत ऐच्छिक कर्म वे हैं जिन्हें करने या न करने क लिए मनुष्य स्वतन्त्र होता है। दूसरे शब्दों में, जिन कर्मों पर मनुष्य का नियन्त्रण होता है और जिन्हें वह अपनी स्वतन्त्र इच्छानुसार कर या छोड़ सकता है उन्हें ऐच्छिक कर्म कहा जाता है। ये कर्म मनुष्य जान-बूझकर अथवा सोच-समझ कर करता है, किसी बाह्य अथवा आन्तरिक विवशता के कारण नहीं, अतः इन कर्मों के लिये उसे उत्तरदायी माना जाता है। उसके इन्हीं ऐच्छिक कर्मों को 'आचरण' की संज्ञा दी जाती है और नीतिशास्त्र केवल इन्हीं कर्मों का मूल्यांकन करता है- अर्थात् वह यह बताता है कि इनमें से कौन-से कर्म उचित हैं और कौन-से अनुचित । अपने इस निर्णय के समर्थन में नीतिशास्त्र पर्याप्त कारण अथवा तर्क भी प्रस्तुत करता है। जिन ऐच्छिक कर्मों का नीतिशास्त्र मूल्यांकन करता है उन में से अधिकतर ऐसे ही होते हैं जिन्हें करते समय मनुष्य को यह ज्ञान होता है कि वह अमुक कर्म कर रहा है। उदाहरण के लिए आप यह जानते हैं कि आप किसी बाह्य विवशता के बिना अपनी स्वतंत्र इच्छानुसार यह पुस्तक पढ़ रहे हैं। इसी प्रकार विपत्ति-काल में जब आप किसी व्यक्ति की सहायता करते हैं तब आपको इस बात का ज्ञान होता है कि आप उसकी सहायता कर रहे हैं। ऐसे सभी कर्मों को सचेतन ऐच्छिक कर्म कहा जाता है। परंतु कुछ कर्म ऐसे भी होते हैं जिन्हें मनुष्य यंत्रवत् करता जाता है और जिन्हें करने के लिए उसे सोचने-सम- झने तथा प्रयत्नपूर्वक ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता नहीं होती। आदत या अभ्यास के फलस्वरूप किये जाने वाले सभी कर्म ऐसे ही कर्म हैं। इन कर्मों को अभ्यासजन्य कर्म कहा जाता है। आदत से विवश होकर किसी कंजूस द्वारा एक एक पैसे की बचत करना तथा किसी अपराधी द्वारा बार-बार एक ही अपराध करना अभ्यासजन्य कर्मों के उदाहरण हैं। ऐसे सभी कर्मों को भी ऐच्छिक ही

माना जाता है, क्योंकि इनकी आदत पड़ने से पूर्व मनुष्य इन्हें करने या न करने के लिए स्वतंत्रथा । संक्षेप में उपयुक्त दोनों प्रकार के ऐच्छिक कर्मों के औचित्य अथवा अनौचित्य के सम्बंध में निष्पक्ष निर्णय देकर उनका तर्कसंगत मूल्यांकन करना ही नीतिशास्त्र का मुख्य उद्देश्य है।

- नीतिशास्त्रकर उन्हीं सामान्य मनुष्यों के ऐच्छिक कर्मों का मूल्यांकन करता है जो किसी न किसी रूप में सामाजिक जीवन व्यतीत करते हैं। दूसरों के साथ मिलकर रहते हुए सामंजस्य पूर्ण सामाजिक जीवन व्यतीत करने की मनुष्य की आवश्यकता के संदर्भ में ही नीतिशास्त्र का महत्त्व है। यदि मनुष्य बिलकुल अकेला रहता और उसके कर्म अन्य व्यक्तियों के कर्मों को न तो प्रभावित करते और न उनके द्वारा प्रभावित होते तो नीतिशास्त्र की आवश्यकता ही न होती । परंतु सभी सामान्य मनुष्यों को जन्म से मृत्यु तक किसी समुदाय में रह कर सामाजिक जीवन बिताना पड़ता है, फलतः उन के अधिकतर कर्म किसी न किसी रूप में एक-दूसरे के जीवन को अवश्य प्रभावित करते हैं। मनुष्यों की इच्छाओं, आकांक्षाओं, उद्देश्यों एब स्वार्थों में भेद तथा विरोध के कारण उनमें परस्पर संघर्ष उत्पन्न होता है जिसके परिणामस्वरूप व्यवस्थित और सामंजस्य- पूर्ण सामाजिक जीवन बहुत कठिन हो जाता है। वस्तुतः इसी कठिनाई को को दूर करने के लिए नीतिशास्त्र का विकास हुआ है जो ऐसे नंतिक नियमों अथवा सिद्धांतों का निर्माण करने का प्रयत्न करता है जिन के द्वारा समाज में यथासम्भव अधिकाधिक व्यवस्था एवं सामंजस्य की स्थापना की जा सके। इस प्रकार स्पष्ट है कि सामाजिक जीवन व्यतीत करने वाले सभी साधारण मनुष्यों के लिए नीतिशास्त्र का विशेर महत्त्व है।
- सामाजिक पृष्ठभूमि में ही नीतिशास्त्र मानव जीवन के पथप्रदर्शन के लिए कुछ मूल सिद्धांतों अथवा आदर्शों की स्थापना का प्रयास करता है। नीति- शास्त्र के लिए यह बताना सम्भव नहीं है कि किस व्यक्ति को किस परिस्थिति में क्या करना चाहिए, क्योंकि मानव का कर्म-क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत है और सभी मनुष्यों की परिस्थितियां भी पूर्णतः समान नहीं होतीं। इसी कारण नीतिशास्त्र कुछ ऐसे आधारभूत सिद्धांतों और आदर्शों का प्रतिपादन करता है जिनके अनुसार लगभग समान परिस्थितियों में सामान्य मनुष्यों के स्वयं अपने प्रति तथा दूसरों के प्रति मुख्य कर्तव्यों को निर्धारित किया जा सके। इस सम्बन्ध में कभी-कभी यह प्रश्न पूछा जाता है कि क्या किसी ऐसे मूल सिद्धांत या आदर्श की स्थापना सम्भव है जो सभी परिस्थितियों में सभी मनुष्यों के समस्त कर्तव्यों को निर्धारित कर सके। हमारे विचार में इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक ही हो सकता है, क्योंकि मनुष्य का जोवन इतना जटिल और उसकी परिस्थितियां इतनी विविध हैं कि कोई भी एक सिद्धांत या आदर्श औचित्य एवं कर्तव्य के सम्बंध में उसका सदैव ठीक-ठीक मार्गदर्शन नहीं कर सकता। परंतु नीतिशास्त्र कुछ ऐसे आधारभूत नियम, आदर्श या सिद्धांत अवश्य प्रस्तुत कर सकता है जो सामान्यतः मनुष्यों को यह बता सकें कि

उन्हें किन मूल कर्तव्यों का और क्यों पालन करना चाहिए। वस्तुतः कर्तव्य निर्धारण के सम्बंध में मनुष्य का समुचित मार्गदर्शन करने के लिए मूल आदर्शों या सिद्धांतों की स्थापना का प्रयास ही नीतिशास्त्र का प्रमुख ध्येय है। इसी कारण इसे 'आदर्शमूलक विज्ञान' की संज्ञा दी गयी है।

1.3.2.नीतिशास्त्र की विशेषताएँ (Characteristics of ethics)

- नैतिकता (Ethics) रीति, प्रचलन या आदत है जबकि नीतिशास्त्र, नीति, प्रचलन या आदत का व्यवस्थित अध्ययन है
- नीतिशास्त्र एक ऐसा आदर्शवादी विज्ञान है, जो मानव आचरण का मूल्यांकन करता है।
- आचरण के अंतर्गत मनुष्य की केवल ऐच्छिक क्रियाएँ आती है। उन्ही क्रियाओं को ऐच्छिक कहा जाता है, जिसके करने में व्यक्ति अपने संकल्प से काम लेता है।
- नीतिशास्त्र वह आदर्श मूलक और मानकीय विज्ञान है, जो सामाजिक जीवन व्यतीत करने वाले मनुष्य के ऐच्छिक और आचरण सम्बंधी कर्मों का विश्लेषण कर उनके संबंध में उचित, अनुचित अथवा शुभ अशुभ का मानदण्ड प्रस्तुत करता है।
- नैतिकता और नीतिशास्त्र के सभी मानदण्ड मनुष्य के केवल ऐच्छिक कर्मों पर ही लागू होते हैं। मनुष्य के अनऐच्छिक कर्मो का विश्लेषण नीतिशास्त्र का विषय नही है। जैसे मनुष्य की आंतरिक और शारीरिक क्रियाये अनऐच्छिक क्रियाये होती है और नीतिशास्त्र इनके संबंध में कोई वाद अथवा मानदण्ड प्रस्तुत नही करता ।
- इसके विपरीत विपत्ती में किसी व्यक्ति सहायता करना, किसी व्यक्ति का ऐच्छिक कर्म है, क्योकि यह व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर करता है कि वह किसी व्यक्ति सहायता करे या न करे, इसलिए यह नीतिशास्त्र का विषय और नीतिशास्त्र इसके संबंध में मानदंड प्रस्तुत करता है।
- मनुष्य द्वारा किया गया प्रत्येक फर्म था तो सही कहा जाता था गलत, परन्त प्रश्न यह है कि किसी कर्म को सही या गलत कहने के लिए हमारे पास क्या विषय, मानक और तर्क है
- नीतिशास्त्र हमें इन विषयों और मानकों से अवगत कराता है जिसके आधार पर हम किसी कर्म का विश्लेषण करके उसे सही या गलत कहते है।
- इसके अतिरिक्त किसी कर्म का विश्लेषण करते समय नीतिशास्त्र केवल उपलब्ध तथ्यों को ही आधार नही बनाता बल्कि वह उन तथ्यों की प्रासगिकता पर भी विचार करता है, जिन्हे हम बोद्धिक स्तर पर स्वीकार या

नकार सकते है और साथ ही इन तथ्यों के प्रभावों से उत्पन्न संभावित व्यावहारिफ परिणामों तक पहुंच सकते है।

- नीतिशास्त्र का संबंध आचरण के औचित्य और अनोचित्य से है। इसे परखने के कुछ नियम और मानदंड होते है जिसका निर्धारण नीतिशास्त्र के तहत ही होता है। अत', नीतिशास्त्र का लक्ष्य है जीवन के वास्तविक आदर्श, आचरण के नियम तया मानदण्डों को स्थापित करना।
- नीतिशास्त्र लोक प्रशासन का अनिवार्य अंग है। यह लोक प्रशासन के अंतर्गत इन मानदंडों को प्रस्तुत करता है जिसका अनुसरण कर लोक प्रशासन प्रभावी और कुशल प्रशासन के साथ-साथ उतरदायी रुप से जबाबदेयता सुनिश्चित करने वाला सुशासन उपलब्ध कराए।
- नीतिशास्त्र या आचार संहिता समानार्थी है। उदाहणार्थ नैतिक आचरण का अर्थ नियमबद्ध आचरण से ही है। नीतिशास्त्र को नैतिकता का विज्ञान भी कहा जाता है और व्यक्ति भी इसी नैतिकता के सिद्धांतानुसार व्यवहार

1.3.3.राजनीतिशास्त्र और नीतिशास्त्र (Politics and Ethics)

राजनीतिशास्त्र के साथ नीतिशास्त्र का बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है, क्योंकि दोनों के अध्ययन का विषय मानव-कल्याण के लिए व्यक्ति के व्यव हार को नियन्त्रित करने से सम्बद्ध है। राजनीतिशास्त्र वह विज्ञान है जिस में राज्य तथा सरकार की रचना, उनके नियमों, कायों एवं उद्देश्यों का व्यवस्थित रूप से अध्ययन किया जाता है। यह हमें बताता है कि राज्य का उद्गम तथा विकास कैसे और क्यों हुआ, सरकार का स्वरूप क्या है और उसका निर्माण कैसे होता है, सरकार के मुख्य कार्य क्या हैं और व्यक्ति एवं समाज के लिए उनका क्या महत्त्व है। संक्षेप में राज्य तथा सरकार से सम्बंधित सभी समस्याओं का अध्ययन राजनीतिशास्त्र में ही किया जाता है। इससे स्पष्ट है कि राजनीति- शास्त्र मानव समाज के राजनैतिक संगठन से सम्बद्ध है। राजनैतिक संगठन का प्रमुख उद्दे श्य मनुष्य की समाजविरोधी इच्छाओं तथा स्वार्थमूलक प्रवृत्तियों को नियन्त्रित करके समाज में समुचित व्यवस्था, सुरक्षा एवं शान्ति बनाये रखना ही होता है। समाज में पर्याप्त सुरक्षा, शान्ति एवं व्यवस्था के बिना कोई मनुष्य निर्भय होकर अपने किसी भी कार्य को भलीभांति सम्पन्न नहीं कर सकता। मनुष्य का नैतिक जीवन भी इसका अपवाद नहीं है। यदि समाज में सर्वत्र अव्यवस्था, असुरक्षा तथा अशांति व्याप्त है तो व्यक्ति के लिए नैतिक नियमों एवं आदशों के अनुसार आचरण करना निश्चय ही बहुत कठिन हो जाता है। इस प्रकार राजनैतिक व्यवस्था मनुष्य के नैतिक जीवन के लिए आवश्यक है और राजनीतिशास्त्र ऐसी व्यवस्था का निरूपण करने में बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है। अनेक विचारकों ने तो नैतिक नियमों को भी राजनैतिक व्यवस्था का साधन मात्र माना है, अतः उनके मतानुसार

नीतिशास्त्र राजनीतिशास् १ का ही एक भाग है। यद्यपि, यह मत उचित नहीं है, फिर भी राजनैतिक नियमों का नैतिक मान्यताओं, नियमों एवं आदशों पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार नीतिशास्त्र भी राजनैतिक नियमों तथा संस्थाजों के औचित्य के सम्बंध में नैतिक आदर्शों के आधार पर निर्णय देकर उनका मूल्यांकन करता है। यह हमें बताता है कि मानव कल्याण की दृष्टि से कौन-सी राजनैतिक संस्थाएं शुभ अथवा अशुभ हैं और राज्य द्वारा निर्मित कौन से नियम उचित या अनुचित हैं। यद्यपि व्यावहारिक जोवन में राजनीति ने बहुधा नैतिक आदर्शों की उपेक्षा की है और चाणक्य तथा मैकियेवली जैसे विचारकों ने राज- नीति को नैतिकता से पृथक् रखने का समर्थन भी किया है, फिर भी अधिकतर दार्शनिकों के मतानुसार वांछनीय स्थिति यही है कि राजनीति उन नैतिक आदशों द्वारा शासित एवं निर्धारित हो जिनकी स्थापना सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण को ध्यान में रखकर की गयी है, किसी समुदाय विशेष के हित को दृष्टि में रखकर नहीं। इसी कारण रस्किन तथा महात्मा गांधी जैसे अनेक विचारक नीतिशास्त्र को ही राजनीतिशास्त्र का आधार और मार्गदर्शक मानते हैं। वस्तुतः राजनीति शास्त्र तथा नीतिशास्त्र का अंतिम उद्देश्य एक ही है और वह है मानव कल्याण की समस्या का समाधान। अतः इन दोनों में बहुत घनिष्ठ सम्बंध है।

परंतु राजनीतिशास्त्र और नीतिशास्त्र में इस घनिष्ठ सम्बंध के साथ-साथ कुछ भिन्नताएं भी हैं जिनका यहां उल्लेख करना आवश्यक है। सर्वप्रथम, राजनीतिशास्त्र का मानदंड नीतिशास्त्र के मानदंड से भिन्न होता है। राजनीति शास्त्र ऐसे राजनैतिक नियमों अथवा कानूनों से सम्बंध रखता है जो मनुष्य के बाह्य कर्मों तथा उनके परिणामों पर ही ध्यान देते हैं। ये नियम प्रायः निषेवा- त्मक ही होते हैं जिनके द्वारा मनुष्य को चोरी, बलात्कार, हत्या आदि अपराध करने से रोका जा सके। परंतु नीतिशास्त्र मनुष्य के बाह्य कर्मों एवं परिणामों के साथ-साथ उनके मूल में निहित प्रयोजनों पर भी ध्यान देता है। वास्तव में उस के लिए मानव के बाह्य अथवा भौतिक कमाँ की अपेक्षा उसके आंतरिक प्रयो- जनों का कहीं अधिक महत्त्व है जिनसे प्रेरित होकर ये कर्म किये जाते हैं। इस दृष्टि से नीतिशास्त्र के अनुसार कोई अपराध करना ही नहीं, उसे करने के सम्बंध में सोचना भी अशुभ अथवा अनुचित हो सकता है। मानवीय कर्मों के इस आंत- रिक पक्ष पर राजनीतिशास्त्र विचार नहीं करता। इन दोनों शास्त्रों में दूसरा महत्त्वपूर्ण अंतर यह है कि राजनीतिशास्त्र का सम्बंध केवल ऐसे नियमों से है जिनका पालन मनुष्य दंड के भय अथवा पुरस्कार के लोभ के कारण करता है। प्रत्येक राजनैतिक नियम के उल्लंघन के लिए विशेष दंड की व्यवस्था की जाती है जिससे सभी उसका पालन करें। इसके विपरीत नीतिशास्त्र जिन नियमों अथवा बादशों की स्थापना करता है उनका सम्यक् पालन व्यक्ति किसी बाह्य दबाव या विवशता के बिना केवल अपनी इच्छानुसार ही करता है। दूसरे शब्दों में नैतिक दृष्टि से दंड के भय अथवा पुरस्कार के लोभ से प्रेरित होकर तैतिक नियमों का पालन सम्यक्

पालन नहीं कहा जा सकता। इसी कारण राजनैलिक नियमों को बाह्यारोपित तथा नैतिक नियमों को आत्मारोपित कहा जाता है।

दोनों शास्त्रों में तीसरा महत्त्वपूर्ण अंतर यह है कि राजनीतिशास्त्र मुख्यतः मनुष्य के सामूहिक जीवन (राय के नागरिक के रूप में उसके जीवन) से सम्बंधित है, जबकि नीतिशास्त्रका सम्बंध मूलतः मानव के व्यक्तिगत जीवन से ही है। राज- नैतिक नियम किसी राज्य के सभी अथवा अधिकतर नागरिकों के हित को दृष्टि में रखकर बनाये जाते हैं, कितु नैतिक नियम मनुष्यमात्र के सद्गुणयुक्त जीवन के आदर्श पर आधारित होते हैं। इस प्रकार नैतिक नियमों का क्षेत्र राजनैतिक नियमों के क्षेत्र की अपेक्षा कहीं अधिक व्यापक है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि राजनीतिशास्त्र तथा नीतिशास्त्र परस्पर सम्बद्ध होते हुए भी एक दूसरे से स्वतंत्र विज्ञान हैं ।

1.3.4.प्रशासनिक नैतिकता (Administrative Ethics)

प्रशासनिक नैतिकता शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है- प्रशासन और नैतिकता। प्रशासन का अर्थ है किसी संगठन या उसके सार्वजनिक मामलों या सरकार के प्रबंधन की प्रक्रिया। प्रशासनिक नैतिकता से तात्पर्य सही और गलत के सुव्यवस्थित मानकों से है, जो यह सुनिश्चित करती हैं कि लोक प्रशासकों को सार्वजनिक सेवा, सिद्धांतों, सद्गुणों और समाज को लाभ पहुँचाने के लिये क्या करना चाहिये।प्रशासनिक नैतिकता उन नैतिक सिद्धांतों को संदर्भित करती है जो सार्वजनिक प्रशासकों के कार्यों और निर्णयों का मार्गदर्शन करते हैं। प्रशासनिक नैतिकता यह सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण है कि सरकारी कर्मचारी अपने कर्तव्यों का ईमानदारी, निष्पक्ष और न्यायपूर्ण तरीके से पालन करें। प्रशासनिक नैतिकता नैतिक मूल्य प्रदान करती है जो प्रशासकों के कामकाज का मार्गदर्शन करती है। निष्पक्षता-नैतिकता उन सिद्धांतों पर केंद्रित है जो सभी के लिए निष्पक्ष और न्यायपूर्ण हैं। यह योग्यता, समानता और समता जैसे निष्पक्ष मानदंडों पर निर्भर करता है। इससे निर्णयों में पक्षपात कम करने में मदद मिलती है।नैतिकता के सिद्धांत सभी प्रशासकों पर लागू होते हैं। ईमानदारी और जवाबदेही सभी अधिकारियों का मार्गदर्शन करना चाहिए, चाहे उनकी रैंक या भूमिका कुछ भी हो। इससे नैतिक संस्कृति सुनिश्चित होती है।जहाँ अधिकारियों का कर्तव्य नागरिकों की सेवा करना है, वहीं नागरिकों को ईमानदारी से व्यवहार करने का अधिकार है। यह संतुलन जवाबदेही को लागू करता है ।नैतिकता लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले तरीकों पर ध्यान केंद्रित करती है। वांछित उद्देश्यों के लिए अवैध या अनुचित साधनों को उचित नहीं ठहराया जा सकता। साधन भी नैतिक होने चाहिए।नैतिक आचरण की कसौटी यह है कि क्या यह आम जनता के हित में है, न कि विशेष हितों के लिए। सत्ता का इस्तेमाल जनकल्याण के लिए होना चाहिए।नैतिकता को परिवर्तनों के साथ

विकसित होना चाहिए।निष्पक्षता, सार्वभौमिकता, संतुलन, सामूहिक ध्यान, जनहित के लिए चिंता, साधनों पर जोर, गतिशील प्रकृति और विवेक की भूमिका - नैतिकता को अधिकारियों को पारदर्शिता और ईमानदारी की ओर ले जाने में मदद करती हैं। सुधारों के साथ, नैतिकता नौकरशाही संस्कृति को बदल सकती है और विश्वास में सुधार कर सकती है।, प्रशासनिक नैतिकता ऐसे मूल्य प्रदान करती है जो पारदर्शिता और अखंडता सुनिश्चित करते हैं। इसकी विशेषताएं नैतिकता को लोक प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सक्षम बनाती हैं। जब अन्य सुधारों के साथ जोड़ा जाता है, तो नैतिकता प्रशासकों द्वारा जनता की सेवा करने के तरीके में सुधार कर सकती है

1.4. पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

1.4.1. अधिकार (Rights)

समाज में रहते हुए व्यक्ति का सर्वांगीण विकास तभी सम्भव है जब उसे इस विकास के लिए समाज द्वारा कुछ आवश्यक सुविधाएं प्राप्त हो। व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास के लिए अनिवार्य तथा समाज द्वारा प्रदत्त इन सुविधाओं को हो 'अधिकार' कहा जाता है। ऑक्सफोर्ड शब्दकोष के अनुसार कानूनी या नैतिक आधार पर किसी वस्तु को प्राप्त करने अथवा विशेष प्रकार से कार्य करने के लिए व्यक्ति की उचित मांग हो 'अधिकार' है। 'अधिकार' शब्द की इस परिभाषा से स्पष्ट है कि मनुष्य के अधिकार मुख्यतः दो प्रकार के हो सकते हैं-कानूनी अधिकार तथा नैतिक अधिकार। मनुष्य के कानूनी अधिकारों की रक्षा राज्य द्वारा बनाए गए उन विशेष कानूनों द्वारा की जाती है जिनका उल्लंघन करने पर व्यक्ति को न्यायालय द्वारा दंड दिया जा सकता है। उचित सीमा में सम्पत्ति रखने का अधिकार तथा सार्वजनिक बस्तुओं और सेवाओं के उचित उपयोग का अधिकार ऐसे ही कानूनी अधिकार है। व्यक्ति के नैतिक अधिकार उसकी वे उचित मांगें है जिनकी पूति के लिए राज्य द्वारा कानून नहीं बनाए जाते और जिनको स्वीकार न करने के लिए न्यायालय द्वारा किसी को दंडित नहीं किया जा सकता। माता-पिता,शिक्षकों,या बुजुर्गों से द्वारा आज्ञा-पालन व सम्मान की मांग ऐसे ही नैतिक अधिकार है। इन नैतिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए न तो कोई व्यक्ति कानूनी आधार पर दावा कर सकता है और न इस आधार पर दूसरों के इन अधिकारों को स्वीकार करने के लिए किसी व्यक्ति को बाध्य किया वा सकता है। इससे स्पष्ट है कि कानून के स्थान पर मनुष्य का अंतविवेक अथवा सामाजिक भय ही नैतिक अधिकारों का मूल आधार है। अपने अंतविवेक या सामाजिक भय द्वारा प्रेरित होकर ही व्यक्ति दूसरों के नैतिक प्रधिकारों को मान्यता दे सकता है। ऐसा न करने पर समाज द्वारा उसकी निंदा की जा सकती है किन्तु दूसरों के नैतिक अधिकारों को स्वीकार करने के लिए कानून द्वारा उसे बाध्य नहीं किया जा सकता ।

मनुष्य के समस्त अधिकारों का मूल आधार सामाजिक जीवन ही है। अधिकार अपने विकास के लिए दूसरों से व्यक्ति की कोई उचित मांग ही है, अतः समाज से पृथक् व्यक्ति के लिए अधिकार का कोई अर्थ नहीं हो सकता। समाज द्वारा व्यक्ति को जो अधिकार दिये जाते है उनका लक्ष्य केवल व्यक्ति का विकास ही नहीं, अपितु समाज का हित भी होता है। यही कारण है कि समाज किसी व्यक्ति को ऐसा कोई अधिकार नहीं देता जो दूसरों के कल्याण के लिए घातक हो। प्रत्येक अधिकार का दूसरों के कल्याण के साथ यह अनिवार्य सम्बन्ध ही उसे एक विशेष कर्तव्य से सम्बद्ध करता है जिसका पालन करना उस अधिकार को प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए आवश्यक होता है। अधिकार की सामाजिक पृष्ठभूमि व्यक्ति पर यह अनिवार्य दायित्व डालती है कि वह अपने अधिकार का इस प्रकार उपयोग करे कि इसके फलस्वरूप स्वयं उसके विकास के साथ-साथ दूसरों का भी हित हो अथवा कम-से-कम उन के हित में बाधा न पड़े। अधिकारों के उपयोग के सम्बन्ध में इसी दायित्व को दृष्टिगत रखकर यह कहा जाता है कि यदि व्यक्ति को कोई अधिकार प्राप्त है तो इसका अर्थ यह नहीं कि वह सदैव अपने इस अधिकार का उपयोग अवश्य करे। कुछ विशेष परिस्थितियों में अपने इस अधिकार का परित्याग कर देना भी उसके लिए आवश्यक हो जाता है। यह विशेष परिस्थितियां कौन-सी है इस बात का निर्णय समाज के व्यापक कल्याण को ध्यान में रख कर अंततः व्यक्ति को स्वयं अपने अंतविवेक द्वारा ही करना होता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि समाजद्वारा प्राप्त समस्त अधिकारों का उपयोग करते हुए व्यक्ति को केवल अपने विकास का ही नहीं, अपितु दूसरों के हितो का भी ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि इस व्यापक दृष्टिकोण के अभाव में अधिकारों की वास्तविक उपयोगिता एवं सार्थकता समाप्त हो जाती है। व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए अनेक विचारकों ने उसे कुछ मूल अधिकार प्रदान करना आवश्यक माना है। ये मूल अधिकार ऐसे हैं जिनसे वंचित कर दिये जाने पर व्यक्ति न तो अपना विकास कर सकता है और न समाज के कल्याण में कोई योगदान कर सकता है। जे० एस० मैकेंजी ने अपनी पुस्तक 'ए मैनुअल ऑफ एथिक्स' में मनुष्य के निम्नलिखित अधिकारों का उल्लेख किया है:- जीवन का अधिकार ,स्वतंत्रता का अधिकार , रोजगार का अधिकार, सम्पत्ति का अधिकार, समझौते का अधिकार, शिक्षा का अधिकार। भारत के संविधान के भाग III (अनुच्छेद 12-35) में निहित मौलिक अधिकार नागरिक स्वतंत्रता की गारंटी देते हैं ताकि सभी भारतीय भारत के नागरिक के रूप में शांति और सद्भाव में अपना जीवन व्यतीत कर सकें । इन अधिकारों को "मौलिक" के रूप में जाना जाता है क्योंकि वे सर्वांगीण विकास यानी भौतिक, बौद्धिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास के लिए सबसे आवश्यक हैं और देश के मौलिक कानून यानी संविधान द्वारा संरक्षित हैं।संविधान द्वारा सभी नागरिकों को छह मौलिक अधिकार दिए गए है:

1. समानता का अधिकार अनुच्छेद)14-18)

2. स्वतंत्रता का अधिकार अनुच्छेद)19-22)
3. शोषण के विरुद्ध अधिकार अनुच्छेद)23-24)
4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार अनुच्छेद)25-28)
5. सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार अनुच्छेद)29-30)
6. संवैधानिक उपचारों का अधिकार अनुच्छेद)32-35)

अधिकतर विचारक किसी न किसी रूप में मनुष्य के इन मूल अधिकारों को कुछ सीमा तक स्वीकार करते है।

- **जीवन का अधिकार (Right to life):-** प्रत्येक व्यक्ति का यह मूल अधिकार है कि उसे उसके जीवन से वंचित न किया जावे। यदि उसे वह मूल अधिकार नहीं दिया जाता तो उसके अपने विकास तथा सामाजिक कल्याण में उसके योगदान का प्रश्न ही नहीं उठता। इसी कारण सामान्य परिस्थितियों में सभ्य समाज द्वारा मनुष्य के इस मूल अधिकार को स्वीकार किया जाता है। कुछ विशेष परिस्थितियों में व्यक्ति से यह आशा की जा सकती है कि वह समाज के व्यापक हित के लिए अपने इस मूल अधिकार का भी परित्याग कर दे, किन्तु वे परिस्थितियां अपवाद ही हैं। सामान्यतः सभ्य समाज में यह स्वीकार किया शाता है कि किसी व्यक्ति को जीवन के अधिकार से तब तक बंचित नहीं किया जाना चाहिए जब तक ऐसा करना समाज के व्यापक हित अथवा न्याय की दृष्टि से अनिवार्य न हो। जीवन के इस अधिकार के साथ स्वयं अपने अथवा किसी अन्य व्यक्ति के जीवन को समाप्त न करने का कर्तव्य भी अनिवार्यतः सम्बद्ध है। जो व्यक्ति स्वार्थसिद्धि के लिए जानबूझ कर किसी की हत्या कर के इस कर्तव्य का उल्लंघन करता है उसे जीवन के अधिकार से वंचित करना न्याय नैतिकता की दृष्टि से उचित माना जा सकता है। इस प्रकार जीवन का अधिकार किसी व्यक्ति के जीवन को हानि न पहुंचाने के कर्तव्य से पृथक् नहीं माना जा सकता है।
- **स्वतंत्रता का अधिकार(Right to freedom) -** प्रत्येक व्यक्ति को जीवन के अधिकार के साथ-साथ स्वतंत्रतापूर्वक अपना सर्वांगीण विकास करने का अधिकार भी प्राप्त है। इसका अभिप्राय यह है कि अपनी उन्नति के लिए प्रयास करने तथा विचारों को अभिव्यक्त करने के सम्बन्ध में प्रत्येक व्यक्ति को उचित स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिए। जहां तक सम्भव हो, व्यक्ति अपने आप में साध्य माना जाना चाहिए । और उसे दूसरों के कल्याण का साधन मात्र नहीं मानना चाहिए । स्पष्ट है कि स्वतंत्रता का अधिकार व्यक्ति पर सभी प्रकार के अनावश्यक और अन्याय- पूर्ण प्रतिबंधों का निषेध करता है। परन्तु इस अधिकार के साथ भी व्यक्ति का यह कर्तव्य सम्बद्ध है कि वह दूसरों की स्वतंत्रता में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करे। जो व्यक्ति दूसरों की

स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करके सामाजिक व्यवस्था में बाधा डालता है उसे स्वतंत्रता के अधिकार से वंचित करना नैतिक दृष्टि से उचित माना जा सकता है। संविधान में स्वतंत्रता के अधिकार को अनुच्छेद 19 से 22 में शामिल किया गया है और इन अनुच्छेदों में कुछ प्रतिबंध भी शामिल हैं जो राज्य द्वारा निर्दिष्ट शर्तों के अधीन व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर लगाए जा सकते हैं। अनुच्छेद 19 नागरिक अधिकारों की प्रकृति में छह स्वतंत्रता की गारंटी देता है, जो केवल भारत के नागरिकों के लिए उपलब्ध हैं। इनमें भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता , हथियारों के बिना एकत्र होने की स्वतंत्रता , संघ बनाने की स्वतंत्रता , हमारे देश के पूरे क्षेत्र में आंदोलन की स्वतंत्रता , भारत देश के किसी भी हिस्से में निवास करने और बसने की स्वतंत्रता और किसी भी पेशे का अभ्यास करने की स्वतंत्रता शामिल है। ये सभी स्वतंत्रताएं उचित प्रतिबंधों के अधीन हैं जो राज्य द्वारा उन पर लगाए जा सकते हैं, जो अनुच्छेद 19 के तहत ही सूचीबद्ध हैं। इन प्रतिबंधों को लगाने के आधार प्रतिबंधित की जाने वाली स्वतंत्रता के अनुसार अलग-अलग होते हैं राज्य को आम जनता के हित में नागरिकों को छोड़कर किसी भी व्यापार, उद्योग या सेवा का राष्ट्रीयकरण करने का अधिकार भी दिया गया है।

- **रोजगार का अधिकार (Right to employment):** अनेक विचारक उपर्युक्त दो अधिकारों की भांति जीविकोपार्जन के लिए उपयुक्त रोजगार प्राप्त करना भी मनुष्य का मूल अधिकार मानते हैं। अपनी योग्यतानुसार उचित रोजगार प्राप्त करके ही व्यक्ति सम्मानपूर्वक अपने जीवन की रक्षा तथा स्वतंत्रतापूर्वक अपना विकास कर सकता है। इसके अतिरिक्त यदि व्यक्ति के पास जीविकोपार्जन का कोई उचित साधन नहीं है तो वह समाज पर भार बन जाता है और उसके विकास में किसी प्रकार का योगदान नहीं कर सकता। इसी कारण आज बहुत-से विचारक यह मानते हैं कि व्यक्ति के इस मूल अधिकार को स्वीकार करते हुए उसे उपयुक्त रोजगार प्रदान करना प्रत्येक राज्य का आवश्यक कर्तव्य है। इस अधिकार के साथ भी व्यक्ति का यह कर्तव्य सम्बद्ध है कि वह समाज के हित की ध्यान में रखते हुए अपना काम सदैव ईमानदारी और निष्ठा के साथ करे।
- **सम्पत्ति का अधिकार (Right to Property) :** प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास के लिए कुछ भौतिक साधनों की आवश्यकता होती है, अतः उचित सीमा तक साधनों को एकत्र करने तथा उन पर अपना स्वामित्व बनाये रखने का उसे अधिकार प्राप्त होना चाहिए। इस अधिकार से पूर्णतया वंचित कर दिए जाने पर व्यक्ति के लिए स्वतंत्रतापूर्वक अपना विकास करने की सम्भावना समाप्त हो जाती है और अधिकतर विचारक किसी न किसी रूप में उसके इस अधिकार को कुछ सीमा तक स्वीकार करते हैं। परंतु अन्य अधिकारों की भांति यह अधिकार भी कर्तव्यरहित नहीं है। इस अधिकार को प्राप्त करने वाले प्रत्येक व्यक्ति का यह आवश्यक कर्तव्य

है कि वह दूसरों की सम्पत्ति का अपहरण तथा अपनी सम्पत्ति का दुरुपयोग न करे। यदि कोई व्यक्ति छल या बल से दूसरों की सम्पत्ति छीन लेता है अथवा समाज को हानि पहुंचाने के लिए अपनी सर्पत्त का उपयोग करता है तो उसे सम्पत्ति के अधिकार से वंचित करना नंतिक दृष्टि से न्यायसंगत ही नहीं, अपितु आवश्यक हो जाता है। किसी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं दिया जा सकता कि वह दूसरों का शोषण करने के लिए अपनी सम्पत्ति का उपयोग करे। इसी आधार पर साम्यवादी विचारक अनेक प्रतिबंधों द्वारा व्यक्ति के सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार को बहुत सीमित कर देना आवश्यक मानते हैं। संविधान में मूल रूप से अनुच्छेद 19 और 31 के तहत संपत्ति के अधिकार का प्रावधान किया गया था । अनुच्छेद 19 सभी नागरिकों को संपत्ति अर्जित करने, रखने और उसका निपटान करने का अधिकार देता है। अनुच्छेद 31 में प्रावधान है कि "किसी भी व्यक्ति को कानून के अधिकार के बिना उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा।" इसमें यह भी प्रावधान है कि जिस व्यक्ति की संपत्ति सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए ली गई है, उसे मुआवजा दिया जाएगा।

- **समझौते का अधिकार (Right to Agreement)-** प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार प्राप्त है कि वह पारस्परिक समझौते के अनुसार दूसरे व्यक्ति से उचित समय पर आवश्यक सेवाएं प्राप्त करे। यह अधिकार मूलतः सम्पत्ति के अधिकार पर हो आधारित है, क्यों कि व्यक्तिगत सम्पत्ति के अभाव में एक-दूसरे को अपनी सेवाएं प्रदान करने के समझौते की सम्भावना समाप्त हो जाती है। इस अधिकार के साथ भी व्यक्ति का यह कर्तव्य सम्बन्धित है कि वह दूसरों के साथ किये गये अपने समझौते को पूरा करे और किसी के साथ ऐसा कोई समझौता न करे जिसे पूरा करना उसके लिए सम्भव न हो तथा जो सामाजिक कल्याण के विरुद्ध हो।
- **शिक्षा का अधिकार(Right to education)-** उचित शिक्षा के अभाव में कोई भी व्यक्ति अपनी क्षमताबों का विकास तथा सदुपयोग नहीं कर सकता, अतः शिक्षा प्राप्त करना मनुष्य का मून अधिकार माना जाता है। समाज अथवा राज्य से यह मांग करना प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है कि वह उसे उसकी योग्यतानुसार शिक्षा प्राप्त करने के लिए आवश्यक अवसर प्रदान करे। यद्यपि शिक्षा के अधिकार को मनुष्य का मूल अधिकार माना जाता है, फिर भी आज संसार में करोड़ों व्यक्ति इस अधिकार से वंचित हैं। अधिकतर देशों में जनसाधारण को उच्च शिक्षा के लिए आवश्यक सुविधाएं तथा अवसर प्राप्त नहीं है। ऐसी स्थिति में राज्य का यह कर्तव्य है कि वह अपने सभी नागरिकों को उनकी योग्यतानुसार उचित शिक्षा प्रदान करने का प्रबन्ध करे। इसके साथ ही प्रत्येक व्यक्ति का भी यह कर्तव्य है कि वह स्वयं शिक्षा ग्रहण करे और अपनी शिक्षा का केवल अपने विकास के लिए ही नहीं, अपितु समाज के हित के लिए भो उपयोग करे । प्रारंभिक स्तर पर शिक्षा के अधिकार को 2002 के 86वें संशोधन के तहत मौलिक अधिकारों में से एक बनाया गया हैहालाँकि इस

अधिकार को आठ साल बाद 2010 में लागू किया गया था। 2 अप्रैल 2010 को, भारत दुनिया के उन कुछ देशों के समूह में शामिल हो गया, जिन्होंने शिक्षा को हर बच्चे का मौलिक अधिकार बनाने वाला ऐतिहासिक कानून लागू किया।

- **समानता का अधिकार (Right to Equality)-**समानता का अधिकार संविधान की मुख्य गारंटी में से एक है। यह अनुच्छेद 14-18 में सन्निहित है, जो सामूहिक रूप से कानून के समक्ष समानता और गैर-भेदभाव के सामान्य सिद्धांतों को समाहित करता हैऔरअनुच्छेद 17-18 जो सामूहिक रूप से सामाजिक समानता के दर्शन को और आगे बढ़ाते हैं।
- **शोषण के विरुद्ध अधिकार (Right against Exploitation)-**अनुच्छेद 23-24 में निहित शोषण के खिलाफ अधिकार, व्यक्तियों या राज्य द्वारा समाज के कमजोर वर्गों के शोषण को रोकने के लिए कुछ प्रावधान करता है।अनुच्छेद 23 मानव तस्करी पर प्रतिबंध लगाता है , जिससे यह कानून द्वारा दंडनीय अपराध बन जाता है, और यह जबरन श्रम या किसी व्यक्ति को बिना मजदूरी के काम करने के लिए मजबूर करने के किसी भी कार्य पर भी रोक लगाता है, जहां वह कानूनी रूप से काम न करने या इसके लिए पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार था।
- **धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार(Right to Freedom of Religion)-**अनुच्छेद 25-28 में शामिल धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार सभी नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान करता है और भारत में एक धर्मनिरपेक्ष राज्य सुनिश्चित करता है । संविधान के अनुसार, कोई आधिकारिक राज्य धर्म नहीं है, और राज्य को सभी धर्मों के साथ समान, निष्पक्ष और तटस्थ व्यवहार करना आवश्यक है।
- **सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार(Cultural and Educational Rights)-**अनुच्छेद 29 और 30 में दिए गए सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार, सांस्कृतिक, भाषाई और धार्मिक अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा के उपाय हैं, जो उन्हें अपनी विरासत को संरक्षित करने और भेदभाव के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करने में सक्षम बनाते हैं।

- **संवैधानिक उपचार का अधिकार(Right to Constitutional Remedies)-**अनुच्छेद 32 अन्य सभी मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए मौलिक अधिकार के रूप में एक गारंटीकृत उपाय प्रदान करता है और संविधान द्वारा सर्वोच्च न्यायालय को इन अधिकारों के रक्षक के रूप में नामित किया गया है

- **निजता का अधिकार(Right to Privacy)-** निजता के अधिकार को अनुच्छेद 21 के तहत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार के एक आंतरिक भाग के रूप में और संविधान के भाग III द्वारा गारंटीकृत स्वतंत्रता के एक भाग के रूप में संरक्षित किया गया है। यह व्यक्ति के आंतरिक क्षेत्र को राज्य और गैर-राज्य दोनों अभिनेताओं के हस्तक्षेप से बचाता है और व्यक्तियों को स्वायत्त जीवन विकल्प बनाने की अनुमति देता है।
- **सूचना का अधिकार(आरटीआई)(Right to Information (RTI)-** सूचना के अधिकार को 2005 में संविधान के अनुच्छेद 19(1) के तहत मौलिक अधिकार का दर्जा दिया गया है। अनुच्छेद 19 (1) के तहत प्रत्येक नागरिक को भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और यह जानने का अधिकार है कि सरकार कैसे काम करती है, उसकी क्या भूमिकाएँ हैं, उसके कार्य क्या हैं, इत्यादि।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अधिकार ऐसी अनिवार्य परिस्थिति है जो मनुष्य के विकास के लिए आवश्यक है। यह व्यक्ति की माँग है जिसे समाज, राज्य तथा कानून नैतिक मान्यता देते हें और उनकी रक्षा करना अपना परम धर्म समझते हैं। अधिकार वे सामाजिक परिस्थितियाँ तथा अवसर हैं जो मनुष्य के व्यक्तित्व के उच्चतम विकास के लिए आवश्यक होते हैं। इन्हें समाज इसी कारण से स्वीकार करता है और राज्य इसी आशय से इनका सरंक्षण करता है। अधिकार उन कार्यों की स्वतंत्रता का बोध कराता है जो व्यक्ति और समाज दोनों के ही लिए उपयोगी सिद्ध हों।

1.4.2. 'कर्तव्य' (Duty)

प्राचीन काल से ही भारत में कर्तव्यों के निर्वहन की परंपरा रही है और और व्यक्ति के "कर्तव्यों" (kartavya) पर ज़ोर दिया जाता रहा है।गवद्गीता और रामायण भी लोगों को अपने कर्तव्यों का पालन करने के लिये प्रेरित करती है, जैसाकि गीता में भगवान श्री कृष्ण ने कहा है कि व्यक्ति को" फल की अपेक्षा के बिना अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना चाहिये।"गांधी जी का विचार था कि "हमारे अधिकारों का सही स्रोत हमारे कर्तव्य होते हैं और यदि हम अपने कर्तव्यों का सही ढंग से निर्वाह करेंगे तो हमें अधिकार मांगने की आवश्यकता नहीं होगी।" सामान्यत: कर्त्तव्य शब्द का अभिप्राय उन कार्यों से होता है, जिन्हें करने के लिए व्यक्ति नैतिक रूप से प्रतिबद्ध होता है। इस शब्द से वह बोध होता है कि व्यक्ति किसी कार्य को अपनी इच्छा, अनिच्छा या केवल बाह्य दबाव के कारण नहीं करता है अपितु आन्तरिक नैतिक प्रेरणा के ही कारण करता है। अत: कर्त्तव्य के पार्श्व में सिद्धान्त या उद्देश्य के प्रेरणा है। कर्त्तव्य मानव के किसी कार्य को करने या न करने के उत्तरदायित्व के लिए दूसरा शब्द है।

1.4.2.1.कर्तव्य की विशेषताएं (Features of duty)

मनुष्य 'उचित' कर्म तथा 'कर्तव्य' कर्म करता है परन्तु उसके किसी भी उचित कर्म को हम कर्तव्य नहीं कह सकते है किसी विशेष समय में मनुष्य के लिए कर्तव्य केवल एक ही हो सकता है जबकि अनेक कर्म उसके लिए समान रूप से उचित हो सकते हैं। इसका कारण यह है कि यदि किसी व्यक्ति के लिए एक ही समय में दो कर्म समान रूप से उचित है तो यह नहीं कहा जा सकता कि इन कों में से कोई एक कर्म उसका कर्तव्य है और दूसरा नहीं। कर्तव्य का पालन करने के लिए मनुष्य नैतिक दृष्टि से बाध्य होता है जबकि उचित कर्म में यह बाध्यता नहीं पायी जाती। इसी आधार पर कर्तव्य को उचित कर्म से भिन्न मानते हुए मूर ने कहा है कि कर्त्तव्य में निम्त लिखित विशेषताए अवश्य पायी जाती है:

(क) मनुष्य स्वभावतः 'कर्तव्य'से बचना चाहता है, अतः कर्त्तव्य का पालन करने के लिए उसे विशेष प्रयास करना पड़ता है। इसका अभिप्राय यह है कि स्वार्थमूलक कर्म के विपरीत कर्तव्य मनुष्य की स्वाभाविक इच्छा द्वारा प्रेरित नहीं होता।

(ख) कर्तव्य- पालन का प्रभाव उसका पालन करने वाले व्यक्ति की अपेक्षा दूसरों पर ही अधिक पड़ता है। यही कारण है कि प्रायः व्यक्ति अपने कर्तव्य की पूति करने के स्थान पर उससे मुक्त होने का प्रयत्न करता है।

(ग) कर्तव्य पालन के साथ नैतिक अनुमोदन की भावना सम्बद्ध होती है। यदि व्यक्ति अपने कर्तव्य का पालन करता है तो उसके मन में यह भावना उत्पन्न होती है और यदि वह कर्तव्य-पालन में असफल होता है तो उसे नैतिक अनुमोदन की भावना के अभाव की अनुभूति होती है।

1.4.2.2.मनुष्य के मूल कर्तव्य (fundamental duties of man)

कर्तव्य को तीन प्रकार में बांट सकते हैं ,नैतिक कर्तव्य,कानूनी कर्तव्य,सवैंधानिक कर्तव्य। नैतिक कर्त्तव्य वे हैं जिनका सम्बन्ध मानवता की नैतिक भावना, अंत:करण की प्रेरणा या उचित कार्य की प्रवृत्ति से होता है। इस श्रेणी के कर्तव्यों का सरंक्षण राज्य द्वारा नहीं होता। यदि मानव इन कर्त्तव्यों का पालन नहीं करता तो स्वयं उसका अन्त:करण उसको धिक्कार सकता है, या समाज उसकी निन्दा कर सकता है किन्तु राज्य उन्हें इन कर्त्तव्यों के पालन के लिए बाध्य नहीं कर सकता। सत्यभाषण, संतान संरक्षण, सद्व्यवहार, ये नैतिक कर्त्तव्यों के उदाहरण हैं। कानूनी कर्त्तव्य हैं जिनका पालन न करने पर नागरिक राज्य द्वारा निर्धारित दंड का भागी हो जाता है। इन्हीं कर्त्तव्यों का अध्ययन राजनीतिक शास्त्र में होता है

मनुष्य के मूल कर्तव्य क्या है। इस प्रश्न का एक निश्चित और पूर्णतया संतोषजनक उत्तर देना बहुत कठिन है, क्योंकि मनुष्य का जीवन इतना विविधतापूर्ण और उसकी परिस्थितियां इतनी जटिल हैं कि कोई भी निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि अमुक परिस्थिति में अमुक व्यक्ति को क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। प्राचीन काल से वर्तमान युग तक महान नीतिशास्त्रियों ने मनुष्य के जिन मूल कर्तव्यों का उल्लेख किया है उनका पालन करना उसके लिए केवल सामान्य परिस्थितियों में ही सम्भव है। कोई भी कर्तव्य ऐसा नहीं है जिसका कुछ विशेष परिस्थितियों में अपवाद न हो अर्थात जिसका कभी उल्लघनन किया जा सके। इसके अतिरिक्त कभी कभी किन्ही दो कर्तव्यों में संघर्ष होने के कारण मनुष्य के लिए यह निर्णय करना बहुत कठिन हो जाता है कि वह उनमें से किस कर्तव्य का पालन करें। उदाहरणार्थ, चोरी न करना और जीवन की रक्षा करना दोनों ही मनुष्य के आवश्यक कर्तव्य माने जाते हैं। मान लीजिए, कोई व्यक्ति अपनी तलवार द्वारा एक निरपराध मनुष्य की हत्या करना चाहता है और हम उसकी तलवार को चुरा कर उस मनुष्य के जीवन की रक्षा कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में क्या हमें जीवन-रक्षा सम्बंधी कर्तव्य का पालन करने के लिए चोरी न करने से सम्बंधित कर्तव्य का उल्लंघन करना चाहिए ? कर्तव्य पालन के सम्बंध में ऐसे जटिल प्रश्न अनेक बार मनुष्य के समक्ष उपस्थित हो जाते हैं और ऐसी स्थिति में उसके लिए अपने वास्तविक कर्तव्य का निर्णय करना बहुत कटिन हो जाता है। इसी कारण कर्तव्य निर्धारण की समस्या नीतिशास्त्र की बहुत जटिल समस्या मानी जाती है जिसका कोई संतोषजनक समाधान खोजना अत्यंत कठिन है। फिर भी अनेक महान दार्शनिकों ने मनुष्य के लिए यथासम्भव कुछ मूल कर्तव्यों का पालन करना आवश्यक माना है। इन कर्तव्यों का वर्णन निषेधात्मक तथा विध्यात्मक आदेशों के रूप में किया गया है। उदाहरणार्थ 'किसी की हत्या न करो,' 'चोरी न करो', व्यभिचार न करो' आदि आदेश निषेधात्मक आदेश हैं। 'सत्य बोलो', 'अपना वचन पूरा करो,' 'सबके प्रति स्नेह रखो,' दुखी प्राणियों की सहायता करो' आदि आदेश विध्यात्मक आदेश हैं। इन दोनों प्रकार के आदेशों में जिन कर्तव्यों का उल्लेख किया गया है उनका पालन करना सामान्य परिस्थितियों में सभी मनुष्यों के लिए आवश्यक माना जाता है। केवल कुछ विशेष परिस्थितियों में ही इन कर्तव्यों में से किसी एक कर्तव्य का पालन करने के लिए दूसरे कर्तव्य का उल्लंघन किया जा सकता है। सामान्य परिस्थितियों में प्रत्येक समय और स्थान पर सभी मनुष्यों के लिए आवश्यक होने के कारण ही इन कर्तव्यों को 'सार्वभौमिक कर्तव्य' कहा जाता है। व्यक्ति और समाज दोनों के कल्याण के लिए नैतिक दृष्टि से इन मूल कर्तव्यों का पालन करना सभी के लिए आवश्यक है। अहिसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचयं इन पांच यमों के अंतर्गत मनुष्य के इन्हीं मूल कर्तव्यों का वर्णन किया है। यदि इन पांच यमों को व्यापक अर्थ में लिया जाए जैसा कि भारतीय मनीषियों ने लिया है तो इनके अंतर्गत मनुष्य के सभी मूल कर्तव्य आ जाते हैं। ऊपर मनुष्य के जिन मूल कर्तव्यों का उल्लेख किया गया है उनके

अतिरिक्त कुछ अन्य कर्तव्यों का पालन करना भी प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक माना जाता है। उदाहरणार्थ ऋण चुकाना, निःस्वार्थ सहायता अथवा उपकार करने वाले व्यक्ति के प्रति कृतज्ञता का अनुभव करना, माता, पिता, गुरु आदिका सम्मान करना, निर्धनों को उदारतापूर्वक दान देना आदि ऐसे कर्तव्य हैं जिनका पालन करना सभी व्यक्तियों के लिए आवश्यक माना गया है। इन सभी कर्तव्यों को 'सार्वभौमिक विध्यात्मक कर्तव्य' की संजा दी जा सकती है, क्योंकि इनमें मनुष्य को कोई विशेष कर्म करने के लिए कहा जाता है। वस्तुतः सामान्य परिस्थितियों में इन कर्तव्यों का पालन करना भी मनुष्य के लिए उतना ही आवश्यक है जितना निषेधात्मक आदेशों में वर्णित कर्तव्यों का पालन करना । उपर्युक्त निषेधात्मक तथा विध्यात्मक कर्तव्यों के विवेचन से यह स्पष्ट है कि सामान्यतः कर्तव्य-पालन के सम्बंध में नीतिशास्त्र मनुष्य का कुछ सीमा तक मार्गदर्शन अवश्य कर सकता है, किंतु वह निश्चित रूप से यह नहीं बता सकता कि किन विशेष परिस्थितियों में किस व्यक्ति को क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। किसी विशेष परिस्थिति में किसी व्यक्ति का कर्तव्य क्या है इसका निर्णय समाज के व्यापक हित को दृष्टिगत रखते हुए उसे स्वयं अपने अंतविवेक के आधार पर ही करना होगा। इस सम्बंध में नोतिशास्त्र कुछ व्यापक सिद्धांतों अथवा आदर्शों द्वारा उसका केवल सामान्य मार्गदर्शन ही कर सकता है और इसी में उसकी व्यावहारिक उपयोगिता एवं सार्थकता निहित है। यद्यपि नीतिशास्त्र के ज्ञान के फलस्वरूप किसी व्यक्ति का कर्तव्यनिष्ठ बन जाना अनिवार्य नहीं है, फिर भी इसके द्वारा उसे अपने कर्तव्य- निर्धारण में पर्याप्त सहायता अवश्य प्राप्त हो सकती है।

1.4.2.3.सवैंधानिक कर्तव्य (constitutional duties) आपातकाल के दौरान भारतीय संविधान के भाग IV-A में 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 के माध्यम से मौलिक कर्तव्यों का समावेशन किया गया था।इससे पूर्व मूल संविधान में मौलिक अधिकारों की अवधारणा को तो रखा गया था, परंतु मौलिक कर्तव्यों को इसमें शामिल नहीं किया गया था।वर्तमान में अनुच्छेद 51(A) के तहत वर्णित 11 मौलिक कर्तव्य हैं, जिनमें से 10 को 42वें संशोधन के माध्यम से जोड़ा गया था जबकि 11वें मौलिक कर्तव्यों को वर्ष 2002 में 86वें संविधान संशोधन के ज़रिये संविधान में शामिल किया गया था।भारतीय संविधान में मौलिक कर्तव्यों की अवधारणा तत्कालीन USSR के संविधान से प्रेरित है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51(क) के तहत, भारत के हर नागरिक के 11 मौलिक कर्तव्य हैं:

- संविधान का पालन करना और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्र ध्वज, और राष्ट्रगान का सम्मान करना,
- स्वतंत्रता संग्राम के आदर्शों को संजोए रखना और उनका पालन करना,
- भारत की संप्रभुता, एकता, और अखंडता की रक्षा करना,

- देश की रक्षा करना और आह्वान किए जाने पर राष्ट्रीय सेवाएं प्रदान करना,
- भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भाईचारे की भावना का निर्माण करना,
- हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझना और उसका निर्माण करना,
- प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा और उसका संवर्धन करना,
- वैज्ञानिक दृष्टिकोण और ज्ञानार्जन की भावना का विकास करना,
- सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखना,
- माता-पिता या अभिभावकों का कर्तव्य है कि वे अपने 6-14 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों को स्कूल भेजना,

कानूनी कर्तव्य (Legal Duties) कानूनी कर्तव्य वे होते हैं जिन्हें कानून द्वारा लागू किया गया है।यदि इनका पालन नहीं किया जाता, तो संबंधित व्यक्ति पर दंडात्मक कार्रवाई की जा सकती है।यह कर्तव्य विभिन्न कानूनों, नियमों, और विनियमों के माध्यम से स्थापित किए जाते हैं।संवैधानिक कर्तव्य नागरिकों को नैतिक और सामाजिक जिम्मेदारियों का पालन करने की प्रेरणा देते हैं, जबकि कानूनी कर्तव्य कानूनों का पालन सुनिश्चित करने के लिए बाध्यकारी होते हैं। दोनों ही एक स्वस्थ और सुव्यवस्थित समाज के निर्माण के लिए आवश्यक हैं।

1.4.2.4.कर्तव्य और अधिकार(Duties and rights)-व्यक्ति को मूल अधिकार उसके अपने विकास तथा समाज के व्यापक हित की वृद्धि के लिए ही प्रदान किये जाते हैं। इन अधिकारों को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति उन सभी कर्तव्यों का भी भलीभांति पालन करे जो इन अधिकारों के साथ अनिवार्यतः सम्बद्ध हैं। प्रत्येक अधिकार से सम्बद्ध कर्तव्य का निष्ठापूर्वक पालन किये बिना उस अधिकार को प्राप्त करने की आशा तथा चेष्टा करना उचित एवं न्याय संगत प्रतीत नहीं होता। क्योंकि मनुष्य के लिए नैतिक दृष्टि से अधिकार प्राप्ति की अपेक्षा कर्तव्य पालन का कहीं अधिक महत्व है। अधिकार और कर्तव्य का यह घनिष्ठ सम्बंध दो प्रकार में स्पष्ट किया जा सकता है। सर्वप्रथम जो एक व्यक्ति का अधिकार है वही दूसरों का कर्तव्य हो जाता है। उदाहरणार्थ यदि अपनी सम्पत्ति पर स्वामित्व बनाये रखना एक व्यक्ति का अधिकार है तो दूसरों का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे छल या बल से उसकी सम्पत्ति का अपहरण न करें। इसके अतिरिक्त एक अन्य दृष्टि से भो अधिकार और कर्तव्य परस्पर सम्बद्ध हैं। यदि किसी व्यक्ति को कोई अधिकार प्राप्त है तो उसका यह कर्तव्य हो जाता है कि वह अपने इस अधिकार का दूसरों के हित को ध्यान में रखते हुए उपयोग करे अथवा कम से कम दूसरों को हानि पहुंचाने के लिए इस अधिकार का उपयोग न करें। उदाहरण के लिए यदि शिक्षा प्राप्त करना व्यक्ति का

अधिकार है तो उसका यह कर्तव्य भी है कि वह अपनी इस शिक्षा का समाज के कल्याण के लिए उपयोग करे, समाज को हानि पहुंचाने के लिए नहीं।वस्तुतअधिकार और कर्तव्य एक ही पदार्थ के दो पार्श्व हैं। जब हम कहते हैं : कि अमुक व्यक्ति का अमुक वस्तु पर अधिकार है, तो इसका दूसरा अर्थ यह भी होता है कि अन्य व्यक्तियों का कर्तव्य है कि उस वस्तु पर अपना अधिकार न समझकर उसपर उस व्यक्ति का ही अधिकार समझें। अतकर्तव्य : और अधिकार सहगामी हैं। जब हम यह समझते हैं कि समाज और राज्य में रहकर हमारे कुछ अधिकार बन जाते रहते हुए हमारे कुछ कर्तव्य भी हैं। हैं तो हमें यह भी समझना चाहिए कि समाज और राज्य मेंकर्तव्य और अधिकार में बहुत घनिष्ठ सम्बंध है, किंतु कर्तव्य का उद्देश्य अधिकार के उद्देश्य से भिन्न है। कर्तव्य समाज द्वारा व्यक्ति से ऐसा कार्य करने की मांग है जिसका मुख्य उद्देश्य स्वयं व्यक्ति का अपना हित नहीं, अपितु दूसरों का हित हो होता है और इसी कारण इच्छा न होते हुए भी जिसे व्यक्ति को कानूनी अथवा नैतिक बाध्यता के कारण करना पड़ता है। परंतु अधिकार का मुख्य उद्देश्य उस व्यक्ति का अपना हित ही होता है जिसे वह अधिकार दिया जाता है। ऐसी स्थिति में यह कहना अनुचित न होगा कि कर्तव्य और अधिकार में कुछ भेद अवश्य है। परंतु इस भेद के होते हुए भी कर्तव्य और अधिकार सदैव परस्पर सम्बद्ध रहते हैं। अधिकारों की भांति कर्तव्यों की सार्थकता भी अंततः मनुष्य के सामाजिक जीवन पर ही निर्भर है। व्यक्ति के अधिकतर कर्तव्य दूसरों-अर्थात् समाज के प्रति ही होते हैं, अतः समाज से अलग व्यक्ति के लिए कर्तव्य पालन का प्रश्न ही नहीं उठता। इसके अतिरिक्त व्यक्ति द्वारा समाज के प्रति अपने कर्तव्यों की पूति का एक महत्त्वपूर्ण कारण उसकी यह आशा भी है कि यदि वह ऐसा करेगा तो अन्य व्यक्ति भी अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए उसके अधिकारों का सम्मान करेंगे। अधिकारों और कर्तव्यों के अत्यंत घनिष्ठ सम्बंध को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति की यह आशा उचित ही है, क्योंकि यदि कोई भी व्यक्ति अपने कर्तव्यों का पालन न करे तो समाज में किसी के अधिकार सुरक्षित नहीं रह सकते । वस्तुतः मनुष्य के सामाजिक जीवन पर अधिकारों तथा कर्तव्यों की इसी निर्भरता के कारण अधिकतर विचारक नैतिकता को समाजोन्मुखी ही मानते हैं।

1.4.3.बंधुत्व (Fraternity)

बंधुत्व शब्द फ्रेंच शब्द फ्रेटरनिटे से लिया गया है, जिसका अर्थ है भाईचारा, दोस्ती, समुदाय और सहयोग अंबेडकर ने भारत के संविधान का निर्माण करते समय इन सभी तरीकों से बंधुत्व को उच्च महत्व दिया। उन्होंने बंधुत्व को "सभी भारतीयों के बीच आपसी भाईचारे की भावना के रूप में परिभाषित किया- अगर भारतीयों को एक व्यक्ति के रूप में माना जाए।" यह वह सिद्धांत है जो सामाजिक जीवन को उसकी एकता और एकजुटता

प्रदान करता है।" उनका मानना था कि "बिना बंधुत्व के, समानता और स्वतंत्रता सिर्फ़ एक रंग-रोगन से ज़्यादा कुछ नहीं होगी।" उन्होंने कहा, "बिना बंधुत्व के, स्वतंत्रता और समानता घटनाओं का स्वाभाविक प्रवाह नहीं बन सकती।" संविधान के अनुसार, बंधुत्व "व्यक्ति की गरिमा" और राष्ट्र की "एकता" की पुष्टि करने का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। पूर्व को लोगों की नैतिक समानता को स्वीकार करके प्राप्त किया जाता है, जो धार्मिक विश्वास, भाषा, संस्कृति, परंपरा, जाति, रंग, जातीयता, वर्ग और लिंग में हमारे मतभेदों के बावजूद आपसी सम्मान के माध्यम से बनाए रखा जाता है।भारतीय संविधान एकल नागरिकता तंत्र के माध्यम से भाईचारे की भावना को प्रोत्साहित करता है।मौलिक कर्तव्य (अनुच्छेद-51A) भी कहते हैं कि प्रत्येक भारतीय नागरिक का कर्तव्य है कि वह धार्मिक, भाषाई, क्षेत्रीय अथवा वर्ग विविधताओं से ऊपर उठकर सौहार्द्र और आपसी भाईचारे की भावना को प्रोत्साहित करेगा। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में बताया गया है कि 'बंधुत्व' के दायरे में दो बातों को सुनिश्चित करना होगा-प्रथम व्यक्ति का सम्मान,द्वितीय देश की एकता और अखंडता ('अखंडता' शब्द को 42वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा प्रस्तावना में जोड़ा गया)

1.4.3.1. बंधुत्व और प्रशासनिक नैतिकता का संबंध(Relation between fraternity and administrative ethics)

प्रशासनिक नैतिकता में बंधुत्व का समावेश एक प्रभावी, समावेशी, और मानवीय प्रशासन का निर्माण करता है। बंधुत्व और प्रशासनिक नैतिकताके सम्बन्ध को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है-

- **समानता और निष्पक्षता का सिद्धांत**: बंधुत्व का आधार यह है कि समाज के हर वर्ग को समान अवसर और सम्मान मिले।प्रशासनिक नैतिकता में यह आवश्यक है कि अधिकारी सभी नागरिकों के प्रति निष्पक्ष रहें, बिना किसी भेदभाव के सेवा प्रदान करें।उदाहरण: जाति, धर्म, भाषा, या लिंग के आधार पर भेदभाव न करना।
- **समाज के प्रति सहानुभूति और संवेदनशीलता:** बंधुत्व प्रशासनिक अधिकारियों से अपेक्षा करता है कि वे जनता के प्रति सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण अपनाएं। यह विशेष रूप से कमजोर वर्गों, जैसे कि गरीबों, महिलाओं, और अल्पसंख्यकों की मदद में प्रकट होता है।प्रशासनिक नैतिकता में अधिकारियों का संवेदनशील होना यह सुनिश्चित करता है कि नीतियां मानव-केंद्रित हों।
- **समावेशिता और भाईचारा:** बंधुत्व समाज में सभी के लिए समान स्थान सुनिश्चित करता है।प्रशासनिक नैतिकता के तहत यह आवश्यक है कि नीति-निर्माण और कार्यान्वयन में सभी वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए। उदाहरण: सरकारी योजनाओं और कार्यक्रमों में हाशिए पर पड़े वर्गों को शामिल करना।

- **अखंडता और राष्ट्रीय एकता:**बंधुत्व प्रशासनिक नैतिकता के लिए यह निर्देश देता है कि अधिकारी किसी भी प्रकार की क्षेत्रीयता, जातिवाद, या धार्मिक उन्माद को बढ़ावा न दें।अधिकारियों को राष्ट्रीय एकता और अखंडता बनाए रखने के लिए काम करना चाहिए।उदाहरण: सांप्रदायिक दंगों के दौरान निष्पक्ष और संवेदनशील प्रशासन।
- **न्याय और नैतिकता का संतुलन:**बंधुत्व केवल भाईचारे की बात नहीं करता, बल्कि यह भी सुनिश्चित करता है कि समाज में न्याय हो।प्रशासनिक नैतिकता का उद्देश्य यह है कि अधिकारियों के कार्य और निर्णय नैतिक और न्यायपूर्ण हों।उदाहरण: नीतिगत निर्णयों में कमजोर वर्गों के साथ न्याय करना।
- **लोक प्रशासन में मानव-केंद्रित दृष्टिकोण:** बंधुत्व अधिकारियों को मानव-केंद्रित दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित करता है, ताकि प्रशासन जनता के प्रति अधिक जवाबदेह और उत्तरदायी हो।
- **असमानता का उन्मूलन:**बंधुत्व पर आधारित प्रशासनिक नैतिकता का उद्देश्य समाज में व्याप्त असमानताओं को समाप्त करना है। उदाहरण: शिक्षा, स्वास्थ्य, और रोजगार के अवसरों में समानता।
- **भ्रष्टाचार पर रोक:** बंधुत्व के अनुसार, प्रशासन का उद्देश्य केवल जनसेवा है, न कि व्यक्तिगत लाभ। यह भ्रष्टाचार को कम करने और पारदर्शिता बढ़ाने में मदद करता है।
- **समाज में विश्वास और सौहार्द्र का निर्माण:** जब प्रशासन बंधुत्व की भावना से कार्य करता है, तो नागरिकों का सरकार और प्रशासन में विश्वास बढ़ता है।

1.4.3.2.प्रशासनिक नैतिकता में बंधुत्व की चुनौतियां(Challenges of Fraternity in Administrative Ethics)

- **भ्रष्टाचार और पक्षपात:** प्रशासनिक तंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार बंधुत्व की भावना को कमजोर करता है।
- **धार्मिक और सांप्रदायिक तनाव:** भारत जैसे विविध समाज में धार्मिक और सांप्रदायिक भेदभाव बंधुत्व और प्रशासनिक नैतिकता के लिए बड़ी चुनौती है।
- **जातिवाद और क्षेत्रवाद:** सामाजिक संरचना में जातिवाद और क्षेत्रीयता का प्रभाव प्रशासनिक नैतिकता और बंधुत्व की भावना को बाधित करता है।
- **आर्थिक असमानता:** समाज में आर्थिक विषमता प्रशासन और जनता के बीच विभाजन पैदा करती है, जिससे बंधुत्व का आदर्श कमजोर पड़ता है।

1.4.3.3.बंधुत्व और प्रशासनिक नैतिकता को सुदृढ़ करने के उपाय (Measures to strengthen fraternity and administrative ethics)

- **नैतिक प्रशिक्षण:**अधिकारियों को प्रशिक्षण में बंधुत्व और नैतिक मूल्यों का समावेश किया जाना चाहिए।
- **समान अवसरों की गारंटी:**समाज के सभी वर्गों के लिए समान अवसर प्रदान करने वाली नीतियों का निर्माण।
- **पारदर्शिता और जवाबदेही:**प्रशासन में पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ाने के लिए ठोस कदम उठाए जाने चाहिए।
- **सामाजिक सद्भाव का प्रोत्साहन:**धार्मिक, सांप्रदायिक, और जातीय तनावों को कम करने के लिए सक्रिय प्रयास।
- **आपसी मतभेदों को कम करना:** अल्पसंख्यकों को एक खास विचारधारा का पालन करने के लिये मजबूर नहीं किया जाना चाहिये बल्कि परस्पर सद्भाव एवं सम्मान की भावना से लोगों के बीच सभी मतभेदों को कम किया जाना चाहिये।
- **जन सहानुभूति को बढ़ावा देना:** भ्रातृत्त्व का विचार सामाजिक एकजुटता के साथ घनिष्ठ रूप से संबंधित है जिसे जन सहानुभूति के बिना पूरा करना असंभव है। कुछ वैज्ञानिकों और दार्शनिकों का मानना है कि सहानुभूति एक विशिष्ट मानवीय गुण है, यह मानव में जन्मजात होता है किंतु इसे सिखाया एवं पोषित किया जा सकता है।
- **सामाजिक एकजुटता:** न्यायपूर्ण एवं मानवीय समाज में सामाजिक एकजुटता प्रमुख घटक होता है। न्याय के लिये लड़ाई उन लोगों द्वारा लड़ी जानी चाहिये जो उस अन्याय के साथ रहते हैं।
- **सामूहिक देखभाल:** प्रत्येक वर्ष कम-से-कम दो मिलियन लोगों की भूख, स्वच्छ पानी, स्वास्थ्य सेवा और आवासीय सुविधा न होने के कारण मृत्यु हो जाती है। । ये सामाजिक और राजनीतिक जीवन में बंधुत्व की विफलता का प्रमाण हैं जिससे निपटने के लिये सामूहिक देखभाल की अवधारणा को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।
- **भाईचारे को बढ़ावा:** भारत में हाल के वर्षों में मुसलमानों, ईसाईयों और दलितों को लक्षित करने वाले घृणित अपराधों के कारण जब समाज के बाकी लोग चुप रहते हैं तो समाज में भाईचारा विफल होने लगता है। इसलिये उन मुद्दों पर मिलकर आवाज़ उठाई जानी चाहिये जो संवैधानिक दायरे में आते हैं।

बंधुत्व और प्रशासनिक नैतिकता एक-दूसरे के पूरक हैं। बंधुत्व के बिना प्रशासन केवल नियम और प्रक्रियाओं का पालन बनकर रह जाता है, जबकि बंधुत्व प्रशासन को मानवीय और न्यायपूर्ण बनाता है। भारतीय संविधान की भावना को साकार करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रशासनिक तंत्र बंधुत्व के सिद्धांतों को अपनाए और समाज के हर वर्ग के लिए समावेशी, संवेदनशील, और नैतिक दृष्टिकोण विकसित करे।

1.4.4.कर्म सिद्धांत (Karma theory)

साधारण बोलचाल की भाषा में कर्म (पालि : 'कम्म') का अर्थ होता है 'क्रिया'। व्याकरण में क्रिया से निष्पाद्यमान फल के आश्रय को कर्म कहते हैं लेकिन दर्शन की दृष्टि से कर्म का अलग ही अर्थ है। दर्शन में कर्म एक विशेष अर्थ में प्रयुक्त होता है। जो कुछ मनुष्य करता है उससे कोई फल उत्पन्न होता है। यह फल शुभ, अशुभ अथवा दोनों से भिन्न होता है। फल का यह रूप क्रिया के द्वारा स्थिर होता है। दान शुभ कर्म है पर हिंसा अशुभ कर्म है। यहाँ कर्म शब्द क्रिया और फल दोनों के लिए प्रयुक्त हुआ है। यह बात इस भावना पर आधारित है कि क्रिया सर्वदा फल के साथ संलग्न होती है। क्रिया से फल अवश्य उत्पन्न होता है। यहाँ शरीर की स्वाभाविक क्रियाओं का इसमें समावेश नहीं है। आँख की पलकों का उठना, गिरना भी क्रिया है, परन्तु इससे फल नहीं उत्पन्न होता। दर्शन की सीमा में इस प्रकार की क्रिया का कोई महत्व इसलिए नहीं है कि वह क्रिया मन:प्रेरित नहीं होती। उक्त सामान्य नियम मन:प्रेरित क्रियाओं में ही लागू होता है। जान बूझकर किसी को दान देना अथवा किसी का वध करना ही सार्थक है। परन्तु अनजाने में किसी का उपकार देना अथवा किसी को हानि पहुँचाना क्या कर्म की उक्तपरिधि में नहीं आता। कानून में कहा जाता है कि नियम का अज्ञान मनुष्य को क्रिया के फल से नहीं बचा सकता। गीता भी कहती है कि कर्म के शुभ अशुभ फल को अवश्य भोगना पड़ता है, उससे छुटकारा नहीं मिलता। इस स्थिति में जाने-अनजाने में की गई क्रियाओं का शुभ-अशुभ फल होता ही है। अनजाने में की गई क्रियाओं के बारे में केवल इतना ही कहा जाता है कि अज्ञान कर्ता का दोष है और उस दोष के लिए कर्ता ही उत्तरदायी है। कर्ता को क्रिया में प्रवृत्त होने के पहले क्रिया से संबंधित सभी बातों का पता लगा लेना चाहिए। स्वाभाविक क्रियाओं से अज्ञान में की गई कई क्रियाओं का भेद केवल इस बात में है कि स्वाभाविक क्रियाएँ बिना मन की सहायता के अपने आप होती हैं पर अज्ञानप्रेरित क्रियाएँ अपने आप नहीं होतीं-उनमें मन का हाथ होता है। न चाहते हुए भी आँख की पलकें गिरेंगी, पर न चाहते हुए अज्ञान में कोई क्रिया नहीं की जा सकती है। क्रिया का परिणाम क्रिया के उद्देश्य से भिन्न हो, फिर भी यह आवश्यक नहीं कि क्रिया की जाए। अत: कर्म की परिधि में वे क्रियाएँ और फल आते हैं जो स्वाभाविक क्रियाओं से भिन्न हैं।

क्रिया और फल का सम्बन्ध कार्य-कारण-भाव के अटूट नियम पर आधारित है। यदि कारण विद्यमान है तो कार्य अवश्य होगा। यह प्राकृतिक नियम आचरण के क्षेत्र में भी सत्य है। अत: कहा जाता है कि क्रिया का कर्ता फल का अवश्य भोक्ता होता है। यदि सभी क्रियाओं का फल भोगना पड़ता है तो उन क्रियाओं का क्या होगा जिनका फल भोगने के पहले ही कर्ता मर जाता है? यहाँ भारतीय विचारक कहते हैं कि मरना शरीर का स्वाभाविक कर्म है, परंतु भोग के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वही शरीर भोगे जिसने क्रिया की है। भोक्ता अलग है और वह कर्मफल का भोग करने के लिए दूसरा शरीर धारण करता है। इसी को पुनर्जन्मवाद कहते हैं। मृत्यु शरीर की आनुषंगिक स्वाभाविक क्रिया है जिसका कर्म पर कोई प्रभाव नहीं होता। अत: कर्म के सिद्धांत को पुनर्जन्म से अलग करके नहीं रखा जा सकता।

इतना ही नहीं, जब क्रिया का संबंध फलभोग के साथ माना जाता है तब यह भी मानना पड़ेगा कि भोग-जो शुभ अशुभ कर्मों के अनुसार सुखमय या दु:खमय होता है-अवश्यंभावी है। उससे बचा नहीं जा सकता, न तो उसको बदला जा सकता है। फल के क्षय का एकमात्र उपाय है उसको भोग लेना। इस जन्म में प्राणी जैसा है उसके पूर्व जन्मों की क्रियाओं का फल मात्र है। फल एक शक्ति है जो जीवन की स्थिति को नियंत्रित करती है। इस शक्ति का पुंज भी कर्म कहा जाता है और कुछ लोग इसे भाग्य या नियति भी कहते हैं। नियतिवाद में माना गया है कि प्राणी नियति से नियंत्रित अत: परवश है। वह स्वयं कुछ नहीं करता। परन्तु पूर्वजन्मों की क्रिया का फल भोगने के अलावा वह इस जन्म में स्वतंत्र कर्ता भी है, अत: पूर्व कर्मों को भोगने के साथ ही वह भविष्य के लिए कर्म करता है। इसी में उसका स्वातंत्र्य है। आचार के लिए स्वतंत्रता परमावश्यक है और प्राय: सभी भारतीय दार्शनिक इसे मानते हैं।

मनःप्रेरणा कर्म का आवश्यक उपकरण है। मनःप्रेरणा के शुभ या अशुभ होने से ही कर्म शुभ या अशुभ हाता है। डाक्टर रोगी की भलाई के लिए उसकी चीरफाड़ करता है। यदि इस चीरफाड़ से रोगी को कष्ट होता है तो डाक्टर उसका उत्तरदायी नहीं है। डाक्टर शुभ कर्म कर रहा है। अतः दु:ख, जो अशुभ मनःप्रेरणा से की गई क्रिया का फल है, तभी दूर हो सकता है जब मन को अशुभ प्रभावों से बचाया जाए। सर्वदा शुभ कर्म करना सर्वदा शुभ सोचने से ही हो सकता है। कष्ट के बचने का यही एक उपाय है। परंतु शुभ कर्म करनेवाले व्यक्ति को फलभोग के लिए जन्म लेना ही होगा, चाहे स्वर्ग में, चाहे पृथ्वी पर। जन्म लेना अपने आपमें महान् कष्ट है क्योंकि जन्म का सम्बन्ध मृत्यु से है। मृत्यु का कष्ट दु:सह कष्ट माना गया है। अतः यदि इस कष्ट से भी छुटकारा पाना है तो जन्म की परम्परा को भी समाप्त करना होगा। इसके लिए शुभ कर्मों का भी परित्याग आवश्यक है क्योंकि बिना उसके जन्म से मुक्ति नहीं है। अतः शुभाशुभ परित्यागी ही वास्तविक दु:खमुक्त हो सकता है।

क्या शुभाशुभ परित्याग संभव है? शरीर रहते यह संभव नहीं मालूम होता। पर एक उपाय है। मन के शोधन से यह सिद्ध हो सकता है। यदि मन में किसी फल की आकांक्षा के बिना, पलक उठने गिरने की तरह, सारी क्रियाएँ स्वाभाविक रूप से की जाएँ तो उनसे शुभ अशुभ फल उत्पन्न नहीं होंगे और जन्म मृत्यु से भी छुटकारा मिल जाएगा। निष्काम कर्म का यही आदर्श है। इसके विपरीत सारे कर्म-जो शुभ अशुभ होते हैं-सकाम कर्म हैं और वे बंधन के कारण हैं।

कर्म के इस सिद्धांत के साथ स्वर्ग-नरक की कल्पनाएँ भी जुड़ी हैं। शुभ कर्मों के परिणामस्वरूप सकल सुखों से पूर्ण स्वर्ग की प्राप्ति होती है। इसके विपरीत नरक की प्राप्ति होती है। स्वर्ग नरक में भी शुभ अशुभ कर्म कर्म के इस सिद्धांत के साथ स्वर्ग-नरक की कल्पनाएँ भी जुड़ी हैं। शुभ कर्मों के परिणामस्वरूप सकल सुखों से पूर्ण स्वर्ग की प्राप्ति होती है। इसके विपरीत नरक की प्राप्ति होती है। स्वर्ग नरक में भी शुभ अशुभ कर्म की मात्रा के अनुसार अनेक स्तर माने गए हैं, जैसे पृथ्वी पर अनेक स्तर हैं। कर्म के सिद्धांत को मानने पर स्वर्ग नरक की कल्पना को भी मानना आवश्यक हो जाता है। जिन्हें हम शुभ कर्म कहते हैं वे पुण्य तथा अशुभ कर्म पाप कहलाते हैं। पुण्य और पाप मुख्यत: क्रिया के फल का बोध कराते हैं। ये कर्म तीन प्रकार के हाते हैं। नित्यकर्म वे हैं जो न करने पर पाप उत्पन्न करते हैं, किन्तु करने पर कुछ भी नहीं उत्पन्न करते। नैमित्तिक कर्म करने से पुण्य तथा न करने से पाप होता है। काम्य कर्म कामना से किए जाते हैं अतः उनके करने से फल की सिद्धि होती है। न करने से कुछ भी नहीं होता। चूँकि तीनों कर्मों में यह उद्देश्य छिपा है कि पुण्य अर्जित किया जाए, पाप से दूर रहा जाए, अत: ये सभी कर्म मन:प्रेरित हैं।

1.4.4.1.कर्म व प्रशासनिक नैतिकता (Karma and Administrative Ethics)

कर्म सिद्धांत भारतीय दर्शन का एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसका आधार यह है कि हर व्यक्ति अपने कर्मों (कार्यों) के आधार पर फल प्राप्त करता है। यह सिद्धांत व्यक्ति को उसके कर्तव्यों और नैतिक आचरण के प्रति जिम्मेदार बनाता है। प्रशासनिक नैतिकता में, कर्म सिद्धांत का महत्व यह है कि यह अधिकारियों को कर्तव्यनिष्ठा, निष्पक्षता, और नैतिकता के साथ कार्य करने की प्रेरणा देता है।

- **कर्म और फल का संबंध:** कर्म सिद्धांत के अनुसार, हर कर्म का एक परिणाम होता है।अच्छे कर्म (धर्म) अच्छे फल देते हैं, और बुरे कर्म (अधर्म) बुरे फल। व्यक्ति के वर्तमान कर्म उसके भविष्य को निर्धारित करते हैं।

- **निष्काम कर्म:** गीता के अनुसार, व्यक्ति को केवल अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए, बिना फल की चिंता किए। यह विचार प्रशासनिक अधिकारियों के लिए आदर्श है, जहां उन्हें निःस्वार्थ भाव से अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए।
- **कर्तव्य और नैतिकता:**कर्म सिद्धांत व्यक्ति को उसके नैतिक और सामाजिक कर्तव्यों के प्रति जागरूक करता है।यह प्रेरणा देता है कि व्यक्ति को अपने कार्यों में नैतिकता और न्याय का पालन करना चाहिए।
- **कर्तव्यनिष्ठा (Duty-bound Approach):**प्रशासनिक अधिकारियों का मुख्य दायित्व है कि वे निष्पक्ष और निस्वार्थ भाव से अपने कार्यों का निर्वहन करें।कर्म सिद्धांत यह सिखाता है कि अधिकारियों को जनता के प्रति अपने दायित्व को पूरी ईमानदारी और निष्ठा से निभाना चाहिए।
- **निष्पक्षता और न्याय:** कर्म सिद्धांत के अनुसार, हर व्यक्ति अपने कर्मों के लिए जिम्मेदार है।प्रशासनिक नैतिकता में यह दृष्टिकोण अधिकारियों को निष्पक्ष और न्यायपूर्ण फैसले लेने के लिए प्रेरित करता है।
- **भ्रष्टाचार से मुक्ति:**कर्म सिद्धांत यह सिखाता है कि गलत कार्यों का परिणाम अंततः नकारात्मक होता है।यह अधिकारियों को भ्रष्टाचार और अनैतिक कार्यों से दूर रहने की प्रेरणा देता है।
- **जनसेवा और उत्तरदायित्व:**प्रशासनिक अधिकारियों का मुख्य उद्देश्य जनता की सेवा करना है।कर्म सिद्धांत उन्हें यह समझाने में मदद करता है कि उनके कार्य समाज पर गहरा प्रभाव डालते हैं।
- **नैतिक अनुशासन और स्वायत्तता:**कर्म सिद्धांत अधिकारियों को अपने कार्यों में आत्म-नियंत्रण और अनुशासन का पालन करना सिखाता है।यह उनके व्यक्तिगत और प्रशासनिक आचरण में नैतिकता का समावेश करता है।

1.4.4.2.कर्म सिद्धांत और प्रशासनिक नैतिकता को मजबूत करने के उपाय (Measures to strengthen Karma theory and administrative ethics)

- **नैतिक शिक्षा और प्रशिक्षण:**प्रशासनिक अधिकारियों को कर्म सिद्धांत पर आधारित नैतिकता और कर्तव्यनिष्ठा का प्रशिक्षण देना।
- **निष्पक्ष कार्य प्रणाली:**ऐसी नीतियां बनाना जो कर्म सिद्धांत के मूल्यों जैसे निष्पक्षता, पारदर्शिता और जवाबदेही को प्रोत्साहित करें।
- **भ्रष्टाचार विरोधी उपाय:**कर्म सिद्धांत की शिक्षा भ्रष्टाचार से बचने के लिए प्रेरित कर सकती है, क्योंकि यह हर कर्म के परिणाम की चेतावनी देता है।

- **आत्म-निरीक्षण (Self-Reflection):**अधिकारियों को अपने कार्यों के परिणामों और उनके प्रभाव का आत्म-निरीक्षण करना चाहिए।

1.4.4.3.कर्म सिद्धांत की प्रशासनिक नैतिकता में प्रासंगिकता(Relevance of Karma theory in administrative ethics)

- **न्यायपूर्ण शासन:**कर्म सिद्धांत पर आधारित प्रशासन न्यायपूर्ण और पारदर्शी शासन को बढ़ावा देता है।
- **जनता के प्रति उत्तरदायित्व:**प्रशासनिक अधिकारियों को यह समझने में मदद मिलती है कि उनके कर्म सीधे तौर पर समाज पर प्रभाव डालते हैं।
- **अधिकार और कर्तव्य का संतुलन:**अधिकारियों को उनके अधिकारों और कर्तव्यों के बीच संतुलन बनाए रखने में मदद करता है।
- **समावेशी विकास:**कर्म सिद्धांत सभी वर्गों को समान रूप से लाभ पहुंचाने वाली नीतियों को लागू करने की प्रेरणा देता है।

कर्म सिद्धांत प्रशासनिक नैतिकता के लिए एक आदर्श आधार प्रदान करता है। यह अधिकारियों को उनके कर्तव्यों का पालन निस्वार्थ भाव से करने, नैतिकता का पालन करने, और जनता के प्रति जवाबदेह होने के लिए प्रेरित करता है। भारतीय परंपरा के इस गहरे दर्शन को प्रशासनिक तंत्र में आत्मसात करके एक न्यायपूर्ण, पारदर्शी, और उत्तरदायी शासन की स्थापना की जा सकती है।

1.4.5.धर्म (Religion)

धर्म भारतीय दर्शन और समाज का एक केंद्रीय सिद्धांत है, जिसका अर्थ केवल धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह नैतिकता, कर्तव्य और न्याय का व्यापक आधार है। भारतीय संदर्भ में, धर्म का संबंध उस आचरण और कर्तव्य से है जो व्यक्ति और समाज के लिए हितकारी हो। जब इसे प्रशासनिक नैतिकता के साथ जोड़ा जाता है, तो यह प्रशासनिक अधिकारियों को न्याय, पारदर्शिता और जनहित के प्रति प्रेरित करता है।धर्म को अनेक अर्थ में परिभाषित किया गया है। धर्म को मुख्य तीन तरीके से स्पष्ट कर सकते है- **धर्म का शाब्दिक अर्थ:** "धारण" से धर्म बना है, जिसका अर्थ है जो जीवन को धारण और नियंत्रित करता है।यह कर्तव्य, न्याय, सत्य और नैतिकता का प्रतीक है।**व्यापक अर्थ में धर्म:**धर्म का उद्देश्य समाज में नैतिकता, संतुलन और सामंजस्य बनाए रखना है।यह व्यक्ति को अपने निजी और सामाजिक कर्तव्यों के प्रति उत्तरदायी बनाता है।**धर्म का प्रशासनिक अर्थ:**धर्म का

अर्थ है "न्याय और निष्पक्षता" पर आधारित शासन।यह प्रशासनिक नैतिकता को मजबूत करता है और अधिकारियों को उनके कर्तव्यों के प्रति जिम्मेदार बनाता है।

1.4.5.1.प्रशासनिक नैतिकता में धर्म का महत्व (Importance of religion in administrative ethics)

धर्म का प्रशासनिक नैतिकता में महत्वपूर्ण योगदान है, क्योंकि यह कर्तव्यनिष्ठा, पारदर्शिता और न्याय को बढ़ावा देता है।

- **न्याय और निष्पक्षता:**धर्म अधिकारियों को सिखाता है कि वे समाज के सभी वर्गों के साथ समान व्यवहार करें।प्रशासन में पक्षपात और भेदभाव से बचते हुए निष्पक्ष नीतियां लागू करें।उदाहरण: योजनाओं में सभी वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित करना।
- **कर्तव्यपालन:**धर्म प्रशासनिक अधिकारियों को अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक और प्रतिबद्ध बनाता है।गीता में उल्लेखित "स्वधर्म" का पालन करने की भावना प्रशासन में कर्तव्यनिष्ठा को प्रेरित करती है।उदाहरण: व्यक्तिगत हितों से ऊपर उठकर जनता की सेवा करना।
- **नैतिकता और सदाचार:**धर्म का आधार नैतिकता है, जो प्रशासनिक अधिकारियों को अपने कार्यों में सत्य और ईमानदारी बनाए रखने की प्रेरणा देता है।उदाहरण: भ्रष्टाचार और अनैतिक आचरण से बचना।
- **सामाजिक न्याय और समानता:**धर्म समाज के कमजोर और वंचित वर्गों की रक्षा के लिए काम करता है।प्रशासनिक नैतिकता में यह सिद्धांत अधिकारियों को समावेशी नीतियां बनाने की प्रेरणा देता है।उदाहरण: सामाजिक न्याय को प्राथमिकता देते हुए नीतियां बनाना।
- **जनसेवा की भावना:**धर्म प्रशासनिक अधिकारियों को निःस्वार्थ और सेवा-भावना से प्रेरित करता है।प्रशासन में यह सिद्धांत जनता की भलाई को सर्वोपरि मानने की प्रेरणा देता है।उदाहरण: प्रशासनिक प्रक्रियाओं को सरल और पारदर्शी बनाना।
- **उत्तरदायित्व और पारदर्शिता:**धर्म यह सिखाता है कि हर व्यक्ति अपने कार्यों और उनके परिणामों के प्रति जिम्मेदार है।प्रशासनिक अधिकारियों को अपने कार्यों में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व बनाए रखना चाहिए।

1.4.5.2.धर्म और प्रशासनिक नैतिकता की चुनौतियां (The challenges of religion and administrative ethics)

- **भ्रष्टाचार और नैतिक पतन:** धर्म के आदर्शों के बावजूद, प्रशासन में भ्रष्टाचार और अनैतिकता बड़ी समस्या है।

- **राजनीतिक हस्तक्षेप:**प्रशासनिक अधिकारियों पर राजनीतिक दबाव धर्म और नैतिकता के पालन में बाधा बनता है।
- **पक्षपात और भेदभाव:**जाति, धर्म, और क्षेत्रीय आधार पर भेदभाव प्रशासन में धर्म के आदर्शों को कमजोर करता है।
- **सामाजिक असमानता:**समाज में व्याप्त असमानता प्रशासन को निष्पक्षता और न्यायपूर्ण नीतियों को लागू करने में चुनौती देती है।

1.4.5.3.धर्म और प्रशासनिक नैतिकता को सुदृढ़ करने के उपाय (Measures to strengthen religion and administrative ethics)

- **नैतिक प्रशिक्षण और शिक्षा:**प्रशासनिक अधिकारियों को धर्म और नैतिकता पर आधारित प्रशिक्षण देना।
- **भ्रष्टाचार उन्मूलन:**प्रशासन को भ्रष्टाचार मुक्त बनाने के लिए कड़े कदम उठाना।
- **पारदर्शिता बढ़ाना**:प्रशासन में पारदर्शिता लाने के लिए तकनीकी और डिजिटल साधनों का उपयोग।
- **सामाजिक न्याय को प्राथमिकता**:नीतियां बनाते समय वंचित और कमजोर वर्गों के कल्याण पर ध्यान देना।
- **धर्मनिरपेक्षता का पालन:**प्रशासन को धर्म के सिद्धांतों का पालन करते हुए भी धर्मनिरपेक्षता बनाए रखनी चाहिए।

धर्म और प्रशासनिक नैतिकता का संबंध गहरा और परस्पर पूरक है। धर्म प्रशासनिक अधिकारियों को कर्तव्यनिष्ठ, नैतिक और निष्पक्ष बनने की प्रेरणा देता है। यदि धर्म के आदर्शों को प्रशासनिक नैतिकता में सही ढंग से आत्मसात किया जाए, तो यह एक पारदर्शी, न्यायपूर्ण, और जनहितैषी प्रशासनिक तंत्र की स्थापना में सहायक हो सकता है। भारतीय दर्शन में वर्णित धर्म के सिद्धांत प्रशासनिक नैतिकता के आदर्श मार्गदर्शक हैं और लोक कल्याण को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

1.4.6.पुरुषार्थ (Purusharth)

पुरुषार्थ से तात्पर्य मानव के लक्ष्य या उद्देश्य से है ('पुरुषैर्थ्यते इति पुरुषार्थः')। पुरुषार्थ = पुरुष+अर्थ =पुरुष का तात्पर्य विवेक संपन्न मनुष्य से है अर्थात विवेक शील मनुष्यों के लक्ष्यों की प्राप्ति ही पुरुषार्थ है। प्रायः मनुष्य के लिये वेदों में चार पुरुषार्थों का नाम लिया गया है - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इसलिए इन्हें 'पुरुषार्थचतुष्टय' भी कहते हैं। पुरुषार्थ चतुष्टय का सिद्धान्त भारतीय संस्कृति की महत्त्वपूर्ण विशेषता है। इस सिद्धान्त की संरचना भारत के ऋषियों, मुनियों और विद्वज्जनों ने मानव-जीवन के आध्यात्मिक को दृष्टि में रखकर की थी। वस्तुतः प्राचीन काल के

भारतीय विचारकों ने मनुष्य के जीवन को आध्यात्मिक, भौतिक और नैतिक दृष्टि से उन्नत करने के निमित्त पुरुषार्थ की योजना की थी। जीवन में भौतिक सुख के साथ-साथ आध्यात्मिक सुख भी महत्त्वपूर्ण माना गया है। वस्तुतः भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों जीवन परस्पर सम्बद्ध हैं। धर्म अर्थ काम ये तीनों पुरुषार्थ को अच्छी तरह कर लेने से ही मोक्ष की प्राप्ति सहज हो जाती है।

धर्म(Dharma):प्राचीन काल में ही भारतीय मनीषियों ने धर्म को वैज्ञानिक ढंग से समझने का प्रयत्न किया था। धर्म का विवेचन करते समय समझाया गया है कि धर्म वह है जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि हो। 'अभ्युदय' से लौकिक उन्नति का तथा 'निःश्रेयस' से पारलौकिक उन्नति एवं कल्याण का बोध होता है। धर्म शब्द का अर्थ अत्यन्त गहन और विशाल है। इसके अन्तर्गत मानव जीवन के उच्चतम विकास के साधनों और नियमों का समावेश होता है।धर्म कोई उपासना पद्घति न होकर एक विराट और विलक्षण जीवन-पद्घति है।

अर्थ (Artha): धर्म के बाद दूसरा स्थान अर्थ का है। अर्थ के बिना, धन के बिना संसार का कार्य चल ही नहीं सकता। जीवन की प्रगति का आधार ही धन है। उद्योग-धंधे, व्यापार, कृषि आदि सभी कार्यो के निमित्त धन की आवश्यकता होती है। यही नहीं, धार्मिक कार्यो, प्रचार, अनुष्ठान आदि सभी धन के बल पर ही चलते हैं। अर्थोपार्जन मनुष्य का पवित्र कर्त्तव्य है। इसी से वह प्रकृति की विपुल संपदा का अपने और सारे समाज के लिए प्रयोग भी कर सकता है और उसे संवर्द्धित व संपुष्ट भी। पर इसके लिए धर्माचरण का ठोस आधार आवश्यक है। धर्म से विमुख होकर अर्थोपार्जन में संलग्न मनुष्य एक ओर तो प्राकृतिक सम्पदा का विवेकहीन दोहन करके संसार के पर्यावरण संतुलत को नष्ट करता है और दूसरी ओर अपने क्षणिक लाभ से दिग्भ्रमित होकर अपने व समाज के लिए अनेकानेक रोगों व कष्टों को जन्म देता है। धर्म ने ही हमें यह मार्ग सुझाया है कि प्रकृति से, समाज से हमने जितना लिया है, अर्थोपार्जन करते हुए उससे अधिक वापस करने को सदैव प्रयासरत रहें।

काम (Kama):काम ज्ञान के माध्यमों का उल्लेख करते हुये कहा गया है कि आत्मा से संयुक्त मन से अधिष्ठित तत्व, चक्षु, जिव्हा, तथा घ्राण तथा इन्द्रियों के साथ अपने अपने विषय - शब्द, स्पर्श, रूप, रस, तथा गंध में अनुकूल रूप से प्रवृत्ति 'काम' है। इसके अलावा स्पर्श से प्राप्त अभिमानिक सुख के साथ अनुबद्ध फलव्रत अर्थ प्रीतति काम कहलाता है। इसके अलावा अर्थ, धर्म तथा काम की तुलनात्मक श्रेष्ठता का प्रतिपादन करते हुये कहा गया है कि त्रिवर्ग समुदाय में पर से पूर्व श्रेष्ठ है। काम से श्रेष्ठ अर्थ है तथा अर्थ से श्रेष्ठ धर्म है

मोक्ष (Moksh):आत्मा को अमर कहा गया है। यह एक नित्य अनादि तत्व है जो बंधन अथवा मुक्ति (मोक्ष) की अवस्था में रहती है। बद्ध अवस्था में इसे अपने कर्मों के अनुसार इसी जन्म अथवा अगले जन्मों में कर्मफल भोगने

पड़ते हैं। मनुष्य के अलावा सभी शरीर मात्र भोग योनि हैं, मानव शरीर कर्म योनि है। योगी सद्गुरु के मार्गनिर्देशन में 'विकर्म' द्वारा अपने शुभ-अशुभ कर्मों से ऊपर उठ जाता है और शरीर रहते ही परमात्मा की प्राप्ति कर लेता है।

1.4.6.1.पुरुषार्थ और प्रशासनिक नैतिकता (Purusharth and administrative ethics)

पुरुषार्थ और प्रशासनिक नैतिकता का संबंध एक ऐसे दृष्टिकोण से है जो व्यक्ति और समाज के विकास के लिए महत्वपूर्ण है। पुरुषार्थ, भारतीय दर्शन में जीवन के चार प्रमुख उद्देश्यों (धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष) का प्रतिनिधित्व करता है। प्रशासनिक नैतिकता, दूसरी ओर, शासन और प्रशासन में नैतिकता, ईमानदारी, और पारदर्शिता सुनिश्चित करने का माध्यम है। दोनों का संयोजन समाज और शासन की भलाई के लिए अत्यधिक उपयोगी है।धर्म व्यक्ति को समाज और प्रशासन में नैतिकता और न्याय का पालन करने की प्रेरणा देता है।एक अधिकारी का मुख्य उद्देश्य न्याय और पारदर्शिता के साथ अपने कर्तव्यों का पालन करना है।धर्म व्यक्ति को नैतिकता और कर्तव्य का पालन करना सिखाता है। प्रशासनिक नैतिकता इसी विचार को शासन में लागू करती है।उदाहरण: एक अधिकारी को पक्षपात और भ्रष्टाचार से बचते हुए निष्पक्षता से अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए।अर्थ व्यक्ति और समाज के आर्थिक विकास और संसाधनों के सही उपयोग से जुड़ा है। अर्थ का पालन करते हुए एक प्रशासक को भ्रष्टाचार से दूर रहकर संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना चाहिए।अर्थ के सिद्धांत के अनुसार, संसाधनों का सही प्रबंधन और वितरण किया जाना चाहिए। प्रशासनिक नैतिकता भी इसी दिशा में काम करती है।उदाहरण: सरकारी योजनाओं में धन का उचित उपयोग सुनिश्चित करना।काम का मतलब है जीवन में इच्छाओं और भावनाओं को संतुलित करना।प्रशासक को अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं को जनहित से ऊपर नहीं रखना चाहिए।काम से संबंधित इच्छाओं को नियंत्रित करके एक प्रशासक समाज की भलाई के लिए कार्य कर सकता है। उदाहरण: व्यक्तिगत लाभ के बजाय सार्वजनिक सेवा को प्राथमिकता देना।मोक्ष जीवन के अंतिम उद्देश्य और आत्मा की मुक्ति को संदर्भित करता है। एक अधिकारी को अपनी सेवा को स्वार्थहीन और समाज की भलाई के लिए समर्पित करना चाहिए।मोक्ष का अंतिम लक्ष्य है स्वार्थ से ऊपर उठकर जनसेवा को प्राथमिकता देना।प्रशासनिक नैतिकता भी स्वार्थरहित सेवा को आदर्श मानती है।

1.4.6.2.पुरुषार्थ और प्रशासनिक नैतिकता के लाभ (Advantages of Purushaarth and Administrative Ethics)

- **समाज में विश्वास का निर्माण**:नैतिक और धर्मपरायण प्रशासनिक प्रणाली समाज में पारदर्शिता और विश्वास को बढ़ावा देती है।

- **भ्रष्टाचार में कमी:**पुरुषार्थ के सिद्धांतों का पालन करने से प्रशासनिक कार्यों में ईमानदारी और जवाबदेही आती है।
- **सतत विकास:**धर्म और अर्थ के सिद्धांतों का पालन करते हुए एक प्रशासक समाज और अर्थव्यवस्था का संतुलित विकास कर सकता है।
- **न्यायपूर्ण समाज का निर्माण:**प्रशासनिक नैतिकता और पुरुषार्थ समाज में समानता और न्याय सुनिश्चित करते हैं।

पुरुषार्थ और प्रशासनिक नैतिकता का संयोजन प्रशासनिक कार्यों को जनहितैषी और नैतिक बनाता है। पुरुषार्थ के सिद्धांत एक प्रशासक को नैतिकता, कर्तव्य, और जनसेवा के लिए प्रेरित करते हैं, जबकि प्रशासनिक नैतिकता इसे व्यावहारिक रूप में लागू करती है। दोनों का संतुलन सुशासन और समाज की प्रगति के लिए आवश्यक है।

1.4.7.प्रशासनिक नैतिकता और समानता (Administrative Ethics and Equity)

प्रशासनिक नैतिकता (Administrative Ethics) का मुख्य उद्देश्य प्रशासनिक तंत्र में नैतिक मूल्यों, न्याय, और निष्पक्षता को बनाए रखना है। इसमें समानता (Equality) एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है, क्योंकि प्रशासन का मुख्य कर्तव्य है कि वह सभी नागरिकों के साथ निष्पक्ष व्यवहार करे और अवसरों तथा संसाधनों का समान वितरण सुनिश्चित करे। समानता केवल क़ानून के समक्ष समानता तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक क्षेत्रों में समान अवसर और भागीदारी प्रदान करने का भी आह्वान करती है। प्रशासनिक नैतिकता, समानता को लागू करने और बनाए रखने के लिए एक नैतिक ढांचा प्रदान करती है। समानता के निम्न रूप में समानता को स्पष्ट कर सकते हैं

- **कानूनी समानता:** सभी लोग कानून के समक्ष समान हैं और उनके साथ एक समान व्यवहार किया जाएगा।
- **राजनीतिक समानता:** सभी नागरिकों को मताधिकार और राजनीति में भागीदारी का समान अधिकार है।
- **आर्थिक समानता:** संसाधनों और अवसरों का समान वितरण।
- **सामाजिक समानता:** जाति, धर्म, लिंग, भाषा, या अन्य किसी आधार पर भेदभाव न करना।

1.4.7.1.प्रशासनिक नैतिकता में समानता का महत्व (Importance of Equity in Administrative Ethics)

- **निष्पक्षता और पारदर्शिता:**प्रशासनिक अधिकारियों को सभी नागरिकों के साथ समान और निष्पक्ष व्यवहार करना चाहिए।निर्णय पारदर्शी और पक्षपात रहित होने चाहिए।

- **वंचित वर्गों का उत्थान:**समानता का मतलब केवल सभी को एक समान अवसर देना नहीं है, बल्कि कमजोर और वंचित वर्गों के लिए विशेष उपाय करना भी है। संविधान के अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के तहत वंचित वर्गों को विशेष संरक्षण दिया गया है।
- **भेदभाव का उन्मूलन:**प्रशासनिक नैतिकता समाज में व्याप्त असमानता, जातिवाद, लैंगिक भेदभाव, और अन्य प्रकार के अन्याय को समाप्त करने की प्रेरणा देती है।
- **समावेशी विकास:**प्रशासनिक नैतिकता यह सुनिश्चित करती है कि समाज के सभी वर्गों को विकास की प्रक्रिया में समान भागीदारी मिले।
- **लोकतांत्रिक आदर्शों की पूर्ति:**समानता लोकतंत्र का एक मूल सिद्धांत है, और प्रशासनिक नैतिकता इसे सुनिश्चित करने में सहायक है।

1.4.7.2.समानता को सुनिश्चित करने में प्रशासनिक नैतिकता की भूमिका (Role of administrative ethics in ensuring equality)

- **नीति निर्माण में समानता:**नीतियों को इस प्रकार बनाया जाना चाहिए कि समाज के सभी वर्गों को उनके लाभ मिले। उदाहरण: शिक्षा, स्वास्थ्य, और रोजगार में समान अवसर प्रदान करने की नीतियां।
- **कानूनी और संस्थागत ढांचा:** कानून और प्रशासनिक संस्थाओं को समानता सुनिश्चित करने के लिए उचित प्रक्रिया अपनानी चाहिए।उदाहरण: अनुसूचित जाति/जनजाति, महिलाओं, और दिव्यांग व्यक्तियों के लिए विशेष प्रावधान।
- **सकारात्मक भेदभाव (Affirmative Action)** कमजोर और वंचित वर्गों के सशक्तिकरण के लिए विशेष उपाय करना। उदाहरण: आरक्षण प्रणाली, विशेष योजनाएं, और वित्तीय सहायता।
- **भ्रष्टाचार का उन्मूलन:**भ्रष्टाचार और पक्षपात समानता के लिए सबसे बड़ी बाधा हैं। प्रशासनिक नैतिकता इनका उन्मूलन करने में सहायक है।उदाहरण: भ्रष्टाचार मुक्त सेवाओं और पारदर्शी प्रक्रियाओं को बढ़ावा देना।
- **डिजिटल समावेश:**डिजिटल सेवाओं को सभी वर्गों तक पहुंचाना।उदाहरण: ई-गवर्नेंस और ऑनलाइन सेवाओं के माध्यम से समान अवसर प्रदान करना।
- **जनसेवा का आदर्श :**प्रशासनिक अधिकारी अपने व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर जनता की सेवा करें।

1.4.7.3.चुनौतियां (Challenges)

- **सामाजिक असमानता:**जाति, धर्म, और लिंग आधारित असमानता समानता को बाधित करती है।
- **आर्थिक असमानता:**गरीब और अमीर के बीच की खाई प्रशासनिक प्रक्रियाओं को प्रभावित करती है।
- **भ्रष्टाचार और पक्षपात:**भ्रष्टाचार और पक्षपात समानता के मार्ग में प्रमुख बाधा हैं।
- **राजनीतिक हस्तक्षेप:**प्रशासन में राजनीतिक दबाव निष्पक्षता और समानता को कमजोर करता है।
- **संसाधनों की कमी:**सीमित संसाधनों के कारण सभी वर्गों को समान लाभ प्रदान करना कठिन हो जाता है।

1.4.7.4.समानता आधारित प्रशासनिक नैतिकता को मजबूत करने के उपाय (Measures to strengthen equality based administrative ethics)

- **प्रशिक्षण और शिक्षा:**अधिकारियों को समानता और नैतिकता पर आधारित प्रशासनिक प्रशिक्षण देना।
- **पारदर्शिता और जवाबदेही:**प्रशासनिक प्रक्रियाओं में पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा देना।
- **समाज में जागरूकता बढ़ाना:**समानता और सामाजिक न्याय के महत्व के प्रति जागरूकता फैलाना।
- **सशक्तिकरण योजनाएं:**वंचित वर्गों के सशक्तिकरण के लिए विशेष योजनाएं बनाना।
- **सशक्त न्यायपालिका:**समानता के सिद्धांतों का पालन सुनिश्चित करने के लिए न्यायपालिका को सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए।

प्रशासनिक नैतिकता और समानता का गहरा संबंध है। समानता प्रशासनिक नैतिकता का एक मूलभूत सिद्धांत है, और प्रशासनिक नैतिकता समानता को लागू करने का साधन। समानता का अर्थ है प्रत्येक नागरिक के साथ समान व्यवहार और सभी को समान अवसर प्रदान करना। यदि प्रशासनिक तंत्र नैतिकता और समानता के सिद्धांतों का पालन करता है, तो समाज में न केवल न्यायपूर्ण व्यवस्था स्थापित होगी, बल्कि समावेशी विकास और लोकतांत्रिक आदर्शों की पूर्ति भी संभव होगी।

1.4.8.स्वतंत्रता (Freedom)

स्वतंत्रता एक महत्वपूर्ण और बुनियादी अधिकार है जो हर व्यक्ति को अपने विचार, विश्वास, और कार्यों में पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान करता है। यह न केवल व्यक्तिगत अधिकारों को सुनिश्चित करता है, बल्कि समाज और राष्ट्र के समग्र विकास के लिए भी आवश्यक है। स्वतंत्रता का विचार विभिन्न संदर्भों में लिया जा सकता है, जैसे कि राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, और व्यक्तिगत।

1.4.8.1.स्वतंत्रता के विभिन्न प्रकार (Different Types of Freedom):

- **राजनीतिक स्वतंत्रता (Political Freedom):** यह स्वतंत्रता किसी व्यक्ति या समूह को राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने की अनुमति देती है, जैसे चुनावों में मतदान करना, राजनीतिक दलों में शामिल होना, और अपने विचारों को व्यक्त करना।उदाहरण: लोकतांत्रिक चुनाव, अधिकारों का संरक्षण, आदि।
- **व्यक्तिगत स्वतंत्रता (Personal Freedom):** यह एक व्यक्ति को अपने जीवन, स्थान, और कार्यों के बारे में स्वतंत्र निर्णय लेने का अधिकार देती है।उदाहरण: आस्थाएँ, विचार, और व्यक्तिगत पसंद-नापसंद पर निर्णय लेने का अधिकार।
- **आर्थिक स्वतंत्रता (Economic Freedom):** यह स्वतंत्रता किसी व्यक्ति को अपनी संपत्ति और संसाधनों को प्रबंधित करने, व्यापार करने, और अपनी आय अर्जित करने का अधिकार देती है।उदाहरण: स्वतंत्र बाजार, व्यापार करने की स्वतंत्रता, आदि।
- **सामाजिक स्वतंत्रता (Social Freedom):** समाज में किसी व्यक्ति को सामाजिक अधिकारों का पालन करते हुए अपने रिश्तों और गतिविधियों को स्वतंत्र रूप से संचालित करने की अनुमति देना।उदाहरण: जातिवाद, लिंग भेदभाव से मुक्ति, समानता का अधिकार।

1.4.8.2.स्वतंत्रता के महत्व (Importance of Independence):

व्यक्तिगत विकास:स्वतंत्रता हर व्यक्ति को अपनी क्षमताओं और संभावनाओं को पहचानने और उनका उपयोग करने का अवसर देती है। यह व्यक्तिगत विकास को प्रोत्साहित करती है और समाज में रचनात्मकता और नवाचार को बढ़ावा देती है।

- **लोकतंत्र और शासन:**लोकतंत्र में स्वतंत्रता नागरिकों को अपने अधिकारों की रक्षा करने और सरकार के निर्णयों में भाग लेने की शक्ति देती है। यह प्रशासन को जवाबदेह और पारदर्शी बनाती है।
- **समानता और न्याय:** स्वतंत्रता यह सुनिश्चित करती है कि सभी व्यक्तियों को समान अवसर और अधिकार मिलें। यह समाज में समानता और न्याय की भावना को बढ़ावा देती है।
- **सामाजिक परिवर्तन:**स्वतंत्रता सामाजिक, सांस्कृतिक, और आर्थिक बदलाव के लिए एक उत्प्रेरक का काम करती है। यह पुराने और दमनकारी रिवाजों और व्यवस्थाओं को चुनौती देती है।

1.4.8.3.स्वतंत्रता की सीमाएँ (The limits of freedom):

स्वतंत्रता एक अनंत अधिकार नहीं है। यह दूसरों की स्वतंत्रता और समाज की भलाई के साथ सामंजस्य बनाए रखने के लिए सीमित होती है। कुछ प्रमुख सीमाएँ:

- **कानूनी सीमाएँ:**स्वतंत्रता का दुरुपयोग न हो, इसके लिए कानून और संविधान के अनुसार कुछ नियमों का पालन करना जरूरी होता है।उदाहरण: किसी को नुकसान पहुँचाना या अपराध करना स्वतंत्रता का उल्लंघन है।
- **समाज में शांति बनाए रखना:**किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता तब तक मान्य होती है जब तक वह समाज की शांति और सुरक्षा को प्रभावित नहीं करता।
- **सामाजिक जिम्मेदारी:**व्यक्तिगत स्वतंत्रता का दुरुपयोग समाज के लिए हानिकारक हो सकता है। इसलिए, व्यक्तिगत स्वतंत्रता को समाज के सामान्य भले के साथ संतुलित किया जाना चाहिए।

स्वतंत्रता एक ऐसी मूलभूत आवश्यकता है जो हर व्यक्ति को अपने जीवन और कार्यों को आत्मनिर्णय की शक्ति देती है। यह समाज में विकास, समानता, और न्याय की प्रक्रिया को गति प्रदान करती है। हालांकि, स्वतंत्रता का उपयोग जिम्मेदारी के साथ किया जाना चाहिए ताकि यह समाज और राष्ट्र के सामूहिक भले के लिए सहायक बने।

1.4.8.4.प्रशासनिक नैतिकता और स्वतंत्रता

प्रशासनिक नैतिकता (Administrative Ethics) और स्वतंत्रता (Freedom) का आपस में गहरा संबंध है।प्रशासनिक नैतिकता एक ऐसा नैतिक ढांचा प्रदान करती है, जो प्रशासनिक अधिकारियों को जनता के अधिकारों, स्वतंत्रता, और कल्याण को ध्यान में रखते हुए नीतियां बनाने और उन्हें लागू करने के लिए मार्गदर्शित करती है।स्वतंत्रता का तात्पर्य है कि व्यक्ति को अपनी इच्छाओं और अधिकारों को चुनने और उपयोग करने का अवसर मिले, लेकिन यह स्वतंत्रता समाज के हित और कानूनों की सीमाओं के भीतर हो। स्वतंत्रता और प्रशासनिक नैतिकता एक-दूसरे के पूरक हैं। यदि प्रशासनिक अधिकारियों में नैतिकता का अभाव होगा, तो नागरिकों की स्वतंत्रता का हनन हो सकता है। इसी प्रकार, स्वतंत्रता का दुरुपयोग प्रशासनिक नैतिकता को प्रभावित कर सकता है। प्रशासनिक नैतिकता और स्वतंत्रता के बीच संबंध को निम्न बिंदुओं द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं -

- **स्वतंत्रता के संरक्षण में प्रशासनिक नैतिकता:**प्रशासनिक नैतिकता यह सुनिश्चित करती है कि नागरिकों की स्वतंत्रता को संरक्षित किया जाए। अधिकारियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके कार्य और नीतियां व्यक्तिगत और सामूहिक स्वतंत्रता का उल्लंघन न करें। उदाहरण: अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का सम्मान करना।

- **स्वतंत्रता और उत्तरदायित्व का संतुलन:**स्वतंत्रता का उपयोग दूसरों के अधिकारों और स्वतंत्रता का हनन किए बिना किया जाना चाहिए। प्रशासनिक नैतिकता स्वतंत्रता और उत्तरदायित्व के बीच संतुलन स्थापित करने में मदद करती है। उदाहरण: सड़क पर प्रदर्शन की स्वतंत्रता, लेकिन सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान न पहुंचाना।
- **भ्रष्टाचार और स्वतंत्रता:**यदि प्रशासनिक तंत्र में नैतिकता का अभाव होगा, तो नागरिकों की स्वतंत्रता पर प्रभाव पड़ेगा।भ्रष्टाचार नागरिकों को उनकी कानूनी स्वतंत्रता से वंचित करता है।
- **लोकतांत्रिक स्वतंत्रता का समर्थन:**प्रशासनिक नैतिकता नागरिकों की राजनीतिक और सामाजिक स्वतंत्रता को बढ़ावा देती है।यह सुनिश्चित करती है कि प्रशासन लोकतांत्रिक मूल्यों जैसे समानता, स्वतंत्रता, और न्याय का पालन करे।

1.4.8.5.प्रशासनिक नैतिकता और स्वतंत्रता को प्रभावित करने वाले कारक (Factors affecting administrative ethics and independence)

- **भ्रष्टाचार:**भ्रष्टाचार नागरिकों की स्वतंत्रता और अधिकारों को बाधित करता है। सरकारी सेवाओं में रिश्वतखोरी से नागरिकों की स्वतंत्रता प्रभावित होती है।
- **पक्षपात और भेदभाव:**प्रशासन में जाति, धर्म, लिंग, या अन्य किसी आधार पर भेदभाव नागरिकों की स्वतंत्रता का हनन करता है।महिलाओं और कमजोर वर्गों को अवसरों से वंचित करना।
- **राजनीतिक हस्तक्षेप:**राजनीतिक दबाव के कारण प्रशासनिक तंत्र निष्पक्षता और नैतिकता से समझौता करता है। जैसे राजनीतिक आदेशों के कारण स्वतंत्र अभिव्यक्ति पर रोक लगाना।
- **अराजकता:**स्वतंत्रता का अतिरेक अराजकता पैदा कर सकता है। जैसे प्रदर्शन या हड़ताल के नाम पर सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाना।**कानून और नैतिकता का उल्लंघन:**स्वतंत्रता का दुरुपयोग कानून और नैतिकता के सिद्धांतों का उल्लंघन कर सकता है। जैसे सोशल मीडिया का गलत इस्तेमाल कर समाज में हिंसा भड़काना।

1.4.8.6.प्रशासनिक नैतिकता और स्वतंत्रता के बीच संतुलन (Balance between administrative ethics and independence)प्रशासनिक नैतिकता स्वतंत्रता को निम्नलिखित तरीकों से संतुलित करती है:

- **कानून का अनुपालन:**प्रशासनिक अधिकारियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि स्वतंत्रता का उपयोग संवैधानिक प्रावधानों और कानूनों के दायरे में हो।

- **न्याय और निष्पक्षता:**प्रशासनिक तंत्र को निष्पक्ष रूप से कार्य करते हुए सभी नागरिकों को समान स्वतंत्रता प्रदान करनी चाहिए।
- **संसाधनों का समान वितरण:**स्वतंत्रता तभी प्रभावी होती है जब समाज के सभी वर्गों को समान संसाधन और अवसर मिलें।
- **जवाबदेही और पारदर्शिता:**प्रशासनिक अधिकारियों को स्वतंत्रता का सम्मान करते हुए अपने कार्यों के लिए जवाबदेह होना चाहिए।
- **सशक्तिकरण नीतियां:**प्रशासन को वंचित और कमजोर वर्गों के लिए ऐसी नीतियां बनानी चाहिए जो उन्हें स्वतंत्रता का पूरा लाभ उठाने में सक्षम बनाएं।

1.4.8.7.स्वतंत्रता आधारित प्रशासनिक नैतिकता को मजबूत करने के उपाय (Measures to strengthen independence based administrative ethics)

- **नैतिक प्रशिक्षण और जागरूकता:**अधिकारियों को नैतिक मूल्यों और नागरिक स्वतंत्रता के महत्व का प्रशिक्षण देना।
- **भ्रष्टाचार और पक्षपात का उन्मूलन:**भ्रष्टाचार विरोधी तंत्र को मजबूत करना और निष्पक्षता सुनिश्चित करना।
- **पारदर्शिता और उत्तरदायित्व:**प्रशासनिक प्रक्रियाओं को पारदर्शी बनाना और अधिकारियों को उनके कार्यों के लिए जवाबदेह ठहराना।
- **लोकतांत्रिक मूल्यों का पालन:**प्रशासनिक तंत्र को स्वतंत्रता, समानता, और न्याय जैसे लोकतांत्रिक मूल्यों पर आधारित करना।
- **स्वतंत्रता का संतुलित उपयोग:**नागरिकों को स्वतंत्रता का उपयोग जिम्मेदारी और कानूनों के तहत करने के लिए प्रेरित करना।

प्रशासनिक नैतिकता और स्वतंत्रता एक-दूसरे के पूरक हैं। स्वतंत्रता तभी सार्थक होती है जब प्रशासनिक तंत्र नैतिकता, पारदर्शिता, और निष्पक्षता के साथ कार्य करे। स्वतंत्रता के बिना प्रशासनिक नैतिकता निरंकुशता में बदल सकती है, और प्रशासनिक नैतिकता के बिना स्वतंत्रता अराजकता का रूप ले सकती है। इसलिए, यह आवश्यक है कि प्रशासनिक अधिकारी स्वतंत्रता और नैतिकता के बीच संतुलन बनाए रखें, ताकि नागरिकों के अधिकारों और स्वतंत्रता की रक्षा के साथ-साथ समाज में न्याय और समानता भी स्थापित हो सके।

1-5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(अ).उचित,अनुचित अथवा शुभ, अशुभ का निर्णय देने के लिए मापदण्ड प्रस्तुत करने वाले शास्त्र को क्या कहते है **?**

(आ).चार पुरुषार्थ कौनसे बताये गये हैं **?**

(इ).भारतीय संविधान किस अनुच्छेद में कितने मौलिक कर्तव्य हैं माने गए हैं **?**

(ई).वे कर्म जिन्हें करने के लिए व्यक्ति नैतिक रूप से प्रतिबद्ध होता है उन्हें क्या कहते हैं **?**

(उ).फ्रेंच शब्द फ्रेटरनिटे का क्या अर्थ है **?**

(ऊ).संविधान द्वारा नागरिकों को कितने मौलिक अधिकार दिए गए है **?**

(ऋ).कर्म तीन प्रकार कौनसे हैं ?

1-6.सारांश (Summary)

नैतिकता का अर्थ है सही और गलत, अच्छे और बुरे के बीच अंतर करना। यह उन मूल्यों, आदर्शों और सिद्धांतों का समूह है जो व्यक्ति के व्यवहार को नियंत्रित करते हैं। नैतिकता व्यक्ति और समाज के जीवन में मार्गदर्शन प्रदान करती है कि किस प्रकार का आचरण उचित और अनुचित है।नैतिकता व्यक्ति को सही मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करती है और आत्मसम्मान बनाए रखने में सहायक होती है।: समाज में शांति, सद्भावना और सामूहिक प्रगति सुनिश्चित करने के लिए नैतिक मूल्यों का पालन आवश्यक है।ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा और पारदर्शिता जैसे नैतिक मूल्य किसी भी पेशे में सफलता और विश्वास का आधार होते हैं।नैतिकता कानून और सामाजिक नियमों को मजबूत आधार देती है।प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्तव्यों के प्रति सचेत रहना चाहिए और उन्हें पूरी ईमानदारी से निभाना चाहिए।सभी व्यक्तियों के समान अधिकार हैं और उन्हें आदर देना नैतिकता का हिस्सा है।: व्यक्ति को अपनी स्वतंत्रता का उपयोग जिम्मेदारीपूर्वक करना चाहिए ताकि दूसरों के अधिकार प्रभावित न हों।समानता और निष्पक्षता के सिद्धांतों का पालन करना।नैतिकता व्यक्ति और समाज दोनों के लिए एक अनिवार्य तत्व है। यह जीवन को अनुशासित और संतुलित बनाती है, साथ ही मानवीय मूल्यों को स्थापित करने में सहायक होती है। नैतिकता के बिना एक सभ्य और शांतिपूर्ण समाज की कल्पना करना असंभव है।

1-7.सूचक शब्द (Key Words)

- **आदर्श विज्ञान**-आदर्श विज्ञान वह है जो कुछ मूल्य, आदर्श या पैमाने निश्चित करने का प्रयत्न करता है। आदर्शात्मक दृष्टिकोण का सार है कि क्या होना या नहीं होना चाहिए।

- **प्रशासन**-प्रशासन का अर्थ है किसी संगठन या उसके सार्वजनिक मामलों या सरकार के प्रबंधन की प्रक्रिया।
- **प्रशासनिक** -प्रशासनिक शब्द का अर्थ है, प्रशासन से संबंधित या उससे जुड़ा हुआ।
- **नैतिकता**-नैतिकताका मतलब है, मानकों का एक समूह या मूल्य प्रणाली जिसके किसी काम को सही या गलत, अच्छा या बुरा तय करते हैं।

1-8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- नीतिशास्त्र के अर्थ व स्वरूप का विस्तार से वर्णन कीजिए।
- पुरुषार्थ की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए व प्रशासनिक नैतिकताको किस प्रकार प्रभावित करती है।
- प्रशासनिक नैतिकता को परिभाषित कीजिए व लोक प्रशासकों के लिये नैतिकता का महत्त्व की व्याख्या कीजिए।
- स्वतंत्रता का अर्थ और प्रशासनिक नैतिकता में इसकी भूमिका की व्याख्या कीजिए।
- कर्तव्य से आप क्या समझते हैं,मौलिक कर्तव्यों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
- अधिकार से आप क्या समझते हैं,मौलिक अधिकारों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
- धर्म से आप क्या समझते हैं,धर्म किस प्रकार नैतिकता से सम्बंधित है ?
- समानता का अर्थ और प्रशासनिक नैतिकता में इसकी भूमिका की व्याख्या कीजिए।

1-9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(अ).नीतिशास्त्र

(आ).धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।

(इ).भारतीय संविधान के अनुच्छेद **51(**क) के तहत, भारत के हर नागरिक के **11** मौलिक कर्तव्य हैं.

(ई).कर्त्तव्य कर्म

(उ).भाईचारा, दोस्ती, समुदाय और सहयोग

(ऊ).संविधान द्वारा नागरिकों को 6 मौलिक अधिकार दिए गए है

(ऋ).नित्य कर्म ,नैमित्तिक , काम्य कर्म

1.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

- अरोड़ा, आर. के. (**2008)** शासन में नैतिकता: नवीन मुद्दे और उपकरण। रावत: जयपुर

- अरोड़ा, रमेश के. (संपादक) (**2014)** लोक सेवा में नैतिकता, सत्यनिष्ठा और मूल्य। न्यू एज इंटरनेशनल: नई दिल्ली
- सी. भार्गव, आर. (**2006)** भारतीय संविधान की राजनीति और नैतिकता। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस: नई दिल्ली
- डी. चक्रवर्ती, विद्युत (**2016)** भारत में शासन में नैतिकता। रूटलेज: नई दिल्ली
- ई. चतुर्वेदी, टी. एन. (संपादक) (**1996)** सार्वजनिक जीवन में नैतिकता। आईआईपीए: नई दिल्ली
- एफ. गांधी, महाथिरिम (**2009)** हिंद स्वराज। राजपाल एंड संस: दिल्ली
- जी. गोडबोले, एम. (**2003)** सार्वजनिक जवाबदेही और पारदर्शिता: सुशासन के आवश्यक तत्व। ओरिएंट लॉन्गमैन: नई दिल्ली
- एच. हूजा, आर. (**2008)** भ्रष्टाचार, नैतिकता और जवाबदेही: एक प्रशासक द्वारा निबंध। आईआईपीए: नई दिल्ली
- आई. माथुर, बी. पी. (**2014)** शासन के लिए नैतिकता: सार्वजनिक सेवाओं का पुनर्निर्माण। रूटलेज: नई दिल्ली

Subject : Public Administration -Administrative ethics in governance	
Course Code : PUBA 302	**Author :** Dr. Parveen sharma
Lesson No. : 2	**Vetter :**

प्रशासनिक नैतिकता के विकास में कौटिल्य व महात्मा गांधी का योगदान

(Contribution of Kautilya and Mahatma Gandhi in the development of administrative ethics)

अध्याय की सरंचना

2.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

2.2.परिचय (Introduction)

2.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

2.3.1.महात्मा गांधीजी का नैतिक दर्शन (Moral philosophy of Mahatma Gandhi)

2.3.1.1.अहिंसा (Nonviolence)

2.3.1.2.सत्य (Truth)

2.3.1.3.सत्याग्रह (Satyagraha)

2.3.1.4.अस्तेय (Asteya)

2.3.1.5.अपरिग्रह (Aparigraha)

2.3.1.6.ब्रह्मचर्य (Brahmachary)

2.4. पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

2.4.1.कौटिल्य व चरित्र निर्माण (Kautilya and character building)

2.4.1.1.कौटिल्य के अनुसार मुख्य नैतिक मूल्य (Main ethical values according to Kautilya):

2.4.1.2.कौटिल्य का चरित्र निर्माण का दृष्टिकोण (Kautilya's approach to character building)

2.4.2.3.भ्रष्टाचार निरोधक कार्यवाही (Anti corruption action)

2.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

2.6.सारांश (Summary)

2.7.सूचक शब्द (Key Words)

2.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

2.9उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

2.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

2.1अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी -

- महात्मा गाँधी के नैतिक विचारों को जान पायेगें ,
- महात्मा गाँधी के सत्य व सत्यग्रह सम्बन्धी विचारों को जान पाएंगें,
- कौटिल्य के नैतिक विचारों को जान पायेगें ,
- कौटिल्य के चरित्र व भ्रष्टाचार सम्बन्धी विचारों को जान पाएंगे,

2.2.परिचय (Introduction)

भारतीय दर्शनों में अनेक महत्वपूर्ण नैतिक सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया है। मनुष्य के चित्त की शुद्धि के लिए योग दर्शन में अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचर्य को बहुत आवश्यक माना गया है। भारतीय दर्शनों की इन नैतिक मान्यताओं का वर्तमान युग के अनेक विचारकों ने भी पूर्णरूपेण समर्थन किया है। इन विचारकों में महात्मा गांधी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। गांधीजी ने अपने सम्पूर्ण नैतिक दर्शन का निर्माण योग दर्शन द्वारा बताए गए पांच यमों - अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचर्य - के आधार पर ही किया है जिन्हें जैन आचार्यों ने 'पंच महाव्रत' की संज्ञा दी है। इन 'पंच महाव्रतों' के अतिरिक्त सर्वधर्मसमभाव, स्वदेशी, शारीरिक श्रम, अभय, अस्वाद तथा अस्पृश्यता निवारण जैसे सिद्धांतों को भी गांधीजी ने आवश्यक व्रतों के रूप में ही स्वीकार किया है। इनमें से चार सिद्धांतों शारीरिक धम, स्वदेशी, सर्वधर्मसमभाव तथा अस्पृश्यता निवारण का प्रतिपादन

उन्होंने तत्कालीन भारतीय राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक परिस्थितियों को दृष्टि में रखकर ही किया था। उपयुक्त एकादश व्रतों को गांधीजी के नैतिक दर्शन के आधारभूत सिद्धांत माना जा सकता है।

2.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

2.3.1.महात्मा गांधीजी का नैतिक दर्शन

गांधीजी का सम्पूर्ण नैतिक दर्शन- अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचर्य के आधार पर खड़ा है।इसका वर्णन निम्न प्रकार से है -

2.3.1.1.अहिंसा(Nonviolence): उपनिषदों तथा जैन एवं बौद्ध दर्शनों की भांति गांधीजी भी अहिंसा को बहुत महत्व देते हैं और प्रत्येक मनुष्य के लिए अनिवार्य व्रत के रूप में इसका निष्ठापूर्वक पालन करना आवश्यक मानते हैं। उन्होंने अहिंसा की जो व्याख्या की है वह बहुत व्यापक, युक्तिसंगत और संतुलित है। उनके मतानुसार क्रोध, घृणा, ईर्ष्या, विद्वेष, तथा स्वार्थ से प्रेरित होकर किसी प्राणी को अपने वचन अथवा कर्म द्वारा किसी प्रकार का कष्ट न पहुंचाना और कष्ट पहुंचाने का विचार भी न करना अहिंसा है। अहिंसा के इस निषेधात्मक अर्थ के अतिरिक्त गाधीजी के अनुसार उसका स्वीकारात्मक अर्थ भी सभी प्राणियों के प्रति प्रेम, दया, सहानुभूति बादि सद्भावनाएं रखना है। यथासम्भव उनकी सेवा तथा सहायता करता अहिंसा के व्रत का स्वीकारात्मक पक्ष है। इस प्रकार गांधीजी के मतानुसार अहिंसा के व्रत का पालन करने के लिए मनुष्य को स्वार्थ, क्रोध, घृणा, ईर्ष्या, विद्वेष, निर्दयता आदि सभी दुर्भावनाओं से मुक्त होने का प्रवास करना चाहिए । इसी व्यापक अर्थ में अहिंसा के अनुरूप आचरण करना वे प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक मानते थे।

गांधीजी ने अहिंसा को कुछ साधु-संतों के लिए ही नहीं अपितु सम्पूर्ण मानव- समाज के लिए आवश्यक मानकर उसके क्षेत्र को बहुत व्यापक बनाया। उनका दृढ विश्वास था कि सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा राजनीतिक समस्याओं का स्थायी समाधान केवल शान्तिपूर्ण अहिंसात्मक उपायों द्वारा ही किया जा सकता है, हिंसा द्वारा नहीं। इसका कारण यह है कि हिंसा युद्ध अथवा संघर्ष को समाप्त करने के स्थान पर उसकी अधिकाधिक वृद्धि ही करती है। गांधीजी का शान्तिपूर्ण अहिमात्मक सत्याग्रह - जिसका उन्होंने सामाजिक तथा राजनैतिक समस्याओं के समाधान के लिए भारत में सफलतापूर्वक प्रयोग किया - मूलतः इसी सिद्धांत पर आधारित है। वे यह मानते थे कि हिंसात्मक उपायों द्वारा किसी प्रकार के अत्याचार का विरोध करने से उसमें वृद्धि ही होगी, क्योंकि हिंसा और अधिक हिंसा को उत्पन्न करती है। इसी कारण उन्होंने आजीवन स्वयं कष्ट सहकर केवल अहिंसात्मक उपायों द्वारा सभी प्रकार के अत्याचारों का दृढ़तापूर्वक विरोध किया और अन्य सभी लोगों को भी ऐसा ही करने की शिक्षा दी।

इस प्रकार गांधीजी ने विश्व के समक्ष यह क्रान्तिकारी विचार प्रस्तुत किया कि सम्पूर्ण मानव-समाज को विनाश-कारी युद्ध की विभीषिका से मुक्त करने के लिए केवल अहिंसात्मक उपायों द्वारा ही समस्त राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान करना आवश्यक है।

गांधीजी के विचार में अहिंसा का आधार मनुष्य का नैतिक अथवा आध्यात्मिक बल है, उसकी विवशता या दुर्बलता नहीं। उनका मत है कि विवशता या दुर्बलता के कारण हिंसा से दूर रहना अथवा अन्याय सहन करते हुए प्रतिरोध न करना अहिंसा नहीं, प्रत्युत कायरता है जो हिंसा से भी अधिक निकृष्ट तथा निदनीय है। गांधीजी ने स्पष्ट कहा है कि यदि कायरता और हिंसा में से किसी एक को चुनना पड़े तो हिसा को चुनना ही उचित होगा, क्योंकि हिसा करने वाले व्यक्ति में साहस होता है जबकि कायर में यह गुण भी नहीं पाया जाता। नैतिक बल के अभाव में कायरता की अपेक्षा हिंसा को अधिक श्रेष्ठ मानते हुए उन्होंने लिखा है कि "मैंने कई बार यह कहा है कि यदि हम कष्ट सहने की शक्ति- अर्थात् अहिंसा द्वारा अपनी, अपनी स्त्रियों की तथा अपने उपासना-स्थलों की रक्षा करना नहीं जानते तो हमें संघर्ष करके इन सबकी रक्षा करनी चाहिए।" स्पष्ट है कि गांधीजी का मत उन शांतिवादियों के मत से भिन्न है जो सभी परिस्थितियों में हिंसा का विरोध करते हैं। जिस अहिंसा का उपदेश वे देते हैं वह दुर्बलताजनित कायरता से पूर्णतया भिन्न है। उनका कथन है कि अहिंसा के अनुसार आचरण करने के लिए मनुष्य को अपनी इच्छा से कष्ट सहने और अन्याय तथा अत्याचार का विरोध करते हुए भी अत्याचारी के प्रति किसी प्रकार को दुर्भावना न रखने का अपने आप में नैतिक तथा आध्यात्मिक बल उत्पन्न करना चाहिए। जिस व्यक्ति में यह नैतिक एवं आध्यात्मिक बल नहीं है, वह अहिंसा का पूर्णरूपेण पालन नहीं कर सकता।कुछ विशेष परिस्थितियों में हिंसा का समर्थन करते हुए भी गांधीजी नैतिक दृष्टि से अहिंसा को ही सर्वोच्च स्थान देते हैं। उनके विचार में मनुष्य को यथासंभव अहिंसा के व्रत का अवश्य पालन करना चाहिए।

गांधीजी अहिंसा को न केवल मानव जीवन का बल्कि समस्त विश्व का आधारभूत नियम मानते हैं। उनके मतानुसार समस्त विश्व का अन्तिम सत्य अहिंसा है। इस दृष्टि से सत्य और अहिंसा एक हैं। यही नहीं, अहिंसा को वे ईश्वरीय नियम मानते हैं क्योंकि उनके मतानुसार ईश्वर समस्त विश्व का आधार है। इस प्रकार अहिंसा में गांधीजी का विश्वास मूलतः उनकी धार्मिक आस्था पर आधारित है। कुछ अन्य शांतिवादियों के विपरीत गांधीजी का अहिंसा में विश्वास केवल बुद्धि पर अथवा हिंसा तथा अहिसा के संभावित परिणामों पर आधारित नहीं है। इसीलिए अहिंसा के भलीभांति पालन के लिए वे ईश्वर में अटूट आस्था होना आवश्यक समझते हैं।

यद्यपि गांधीजी सामान्य परिस्थितियों में प्रत्येक व्यक्ति के लिए अहिंसा के व्रत का पालन करना आवश्यक मानते हैं, फिर भी वे यह स्वीकार करते हैं कि कुछ विशेष परिस्थितियों में अहिंसा का परित्याग करना उचित एवं बांछनीय ही नहीं अपितु अनिवार्य कर्तव्य भी हो जाता है। अहिंसा के अपवादों का उल्लेख करते हुए उन्होंने स्पष्ट कहा है कि हिसक पशुओं, पागल कुत्तों, फसल को नष्ट करने वाले तथा रोग फैलाने वाले कीड़ों की हत्या करना उचित है और यदि ऐसा निःस्वार्थभाव से अर्थात् केवल सामाजिक हित को ध्यान में रखकर किया जाता है तो इसे अनुचित नहीं माना जा सकता। सामाजिक कल्याण के अतिरिक्त किसी प्राणी को असह्य पीडा से मुक्त करने के लिए केवल उसी के हित को दृष्टि में रखकर और स्वयं को क्रोध ,घृणा तथा स्वार्थ से रहित होकर उसके जीवन को समाप्त करना भी गांधीजी ने उचित माना है। उनका विचार है कि किसी प्राणी को असह्य पीड़ा से कराहते हुए देखते रहना और उसके कष्ट का निराकरण करने के लिए प्रयत्न न करना घोर हिंसा है। जिस प्रकार रोगी के कल्याण के लिए उसके शरीर पर चाकू का प्रयोग करके शल्य चिकित्सक अथवा सर्जन कोई हिंसा नहीं करता अपितु विशुद्ध अहिंसा के अनुसार ही आचरण करता है, उसी प्रकार कुछ अनिवार्य परिस्थितियों में असह्य यंत्रणा भोगने वाले व्यक्ति के हित के लिए उसके जीवन का अन्त करना आवश्यक हो सकता है।" उपयुक्त विवचन से स्पष्ट है कि गांधी- जी के मतानुसार सभी परिस्थितियों में अहिंसा का यंत्रवत् पालन करना न तो सम्भव है और न वांछनीय । वस्तुतः वे यह मानते हैं कि हिंसा अथवा अहिंसा का निर्णय मनुष्य के कर्म तथा उसके परिणाम के आधार पर नहीं, प्रत्युत उस कर्म के मूल में निहित उद्देश्य के आधार पर ही किया जा सकता है। इसका अभिप्राय यह है कि कर्ता के उद्देश्य की भिन्नता के कारण उसका एक ही प्रकार का कर्म अहिंसात्मक भी हो सकता है और हिंसात्मक भी। कर्म के प्रयोजन के आधार पर हिंसा तथा अहिंसा के भेद को स्पष्ट करते हुए गांधीजी ने कहा है कि " क्रोध अथवा स्वार्थ से प्रेरित होकर किसी प्राणी के अहित की कामना करना, उसे कष्ट पहुंचाना अथवा उसकी हत्या करना हिंसा है। इसके विपरीत भलीभांति विचार करके शांतचित्त और निःस्वार्थभाव से किसी प्राणी के शारीरिक या आध्यात्मिक कल्याण के लिए उसे कष्ट पहुंचाना अथवा उसकी हत्या करना अहिंसा का विशुद्धतम रूप माना जा सकता है। हिंसा अथवा अहिंसा की अन्तिम कसौटी कर्म के मूल में निहित प्रयोजन ही है।उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि गांधीजी मनुष्य के लिए सभी परिस्थितियों में अहिंसा का पालन करना अनिवार्य तथा वांछनीय नहीं मानते, कितु वे उनके इस मत को स्वीकार करते हैं कि अहिसा ही मानव के लिए सर्वोच्च धर्म है।

2.3.1.2.सत्य (Truth): - अहिंसा की भांति सत्य को भी गांधीजी मनुष्य के लिए अनिवार्य नैतिक नियम के रूप में स्वीकार करते हैं। सत्य की व्यापक परिभाषा करते हुए उन्होंने कहा है कि जो तथ्य जिस रूप में देखा, सुना, जाना

या अनुभव किया गया है उसे उसी रूप में कोई परिवर्तन अथवा संशोधन किये बिना व्यक्त करना ही सत्य है। दूसरे शब्दों में, अपने वचन अथवा कर्म द्वारा किसी प्रकार का छल न करना और छल करने का विचार भी न करना सत्य के व्रत का पालन करने के लिए अनिवार्य है। इस प्रकार सत्य सभी प्रकार के मिथ्या आचरण का पूर्णतया निषेष करता है। यही कारण है कि गांधीजी सत्य को अत्यधिक महत्व देते थे और सर्दव इसके अनुसार निष्ठापूर्वक आचरण करना अनिवार्य मानते थे। उनके समस्त राजनैतिक एवं सामाजिक कार्य मूलतः सत्य पर ही आधारित थे। इसी कारण वे अपने उस आंदोलन को 'सत्याग्रह' कहते थे जो उन्होंने सामाजिक तथा राजनैतिक समस्याओं का समाधान करने के लिए आरम्भ किया था। स्वयं सत्य का दृढतापूर्वक पालन करने तथा उसमें अखंड श्रद्धा रखने के कारण गांधीजी किसी भी रूप में अथवा किसी भी दशा में सत्य का उल्लंघन करना उचित नहीं मानते थे। उनका कथन है कि "गाय को बचाने के लिए झूठ बोलना चाहिए या नहीं, ऐसी समस्याएं उठाकर दैनिक जीवन में सत्य की उपेक्षा करना अथवा उसके महत्त्व को कम करना अनुचित है। मनुष्य को ऐसे गहरे प्रश्नों में न उलझकर अपने दैनिक व्यवहार में दृढ़तापूर्वक सत्य के अनुसार आचरण करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से ही सत्य की वास्तविक साधना सम्भव है। यदि मनुष्य अपने व्यावहारिक जीवन में सत्य का दृढ़तापूर्वक पालन करे तो उसे इस समस्या का समाधान स्वतः प्राप्त हो जायेगा कि किसी कठिन अवसर पर वास्तव में उसका क्या कर्तव्य है।"

जीवन में सत्य का दृढ़तापूर्वक पालन करने के लिए गांधीजी ने अनेक उपाय बताए हैं। उनका कथन है कि सत्य का पूर्णरूपेण पालन करने के लिए मनुष्य को यथासम्भव कम बोलना चाहिए और अतिशयोक्ति, पक्षपात, तथ्यों को छिपाने या परिवर्तित करने का कभी प्रयत्न नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करना स्पष्टतया सत्य का उल्लंघन करना है। सत्य का निष्ठापूर्वक पालन करने के लिए व्यावहारिक जीवन में सभी प्रकार के छल कपट का पूर्णतः निषेध करते हुए गांधी- जी ने लिखा है कि "अगर मैं ब" को खराब मानता हूं और उसको बताता हूँ कि वह अच्छा है तो मैं उसे ठगता हूं। बड़ा या भला कहलाने की इच्छा से जो गुण मुझमें नहीं हैं उन्हें दिखाने की कोशिश करता हूँ, बोलने में अतिशयोक्ति करता हूँ, किए हुए दोष जिसको बता देने चाहिए उससे छिपाता हूँ, मेरा साथी या अफसर कुछ पूछता है तो उसके जवाब में बात को उड़ा देता है, जो कहना चाहिए उसे छिपाता हूं- इनमें से कुछ भी हम करते हैं तो हम असत्य का आचरण करते हैं। उक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि गांधीजी अहिसा की भांति सत्व को भी बहुत व्यापक अर्थ में ग्रहण करते हैं और केवल वाणी द्वारा ही नहीं प्रत्युत विचार और कर्म द्वारा भी सदैव सत्य के अनुसार आचरण करना अनिवार्य मानते हैं। उनका मत है कि सत्य के अनुसार आचरण करने के लिए अहिंसा का निष्ठांपूर्वक पालन करना भी बहुत आवश्यक है।

सत्य, शासन और प्रशासन को नैतिक, पारदर्शी, और न्यायसंगत बनाने के महत्वपूर्ण स्तंभ हैं। सत्य, नैतिकता का आधार है, और प्रशासनिक नैतिकता सत्य, पारदर्शिता, और ईमानदारी पर आधारित होती है। प्रशासनिक नैतिकता प्रशासनिक कार्यों और निर्णयों में नैतिकता, ईमानदारी, और कर्तव्यनिष्ठा को सुनिश्चित करने की प्रक्रिया है। इसका उद्देश्य शासन को नैतिक और न्यायपूर्ण बनाना है। प्रशासनिक नैतिकता और सत्य में सम्बन्ध को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है-

- **सत्य प्रशासनिक नैतिकता का आधार :**सत्य, प्रशासनिक नैतिकता का मूल सिद्धांत है। सत्यनिष्ठा के बिना प्रशासन में भ्रष्टाचार, पक्षपात, और अनैतिकता बढ़ सकती है।
- **पारदर्शिता और सत्य:-**प्रशासनिक नैतिकता सत्य और पारदर्शिता को प्राथमिकता देती है। **उदाहरण:** सरकारी योजनाओं और नीतियों की जानकारी जनता के साथ ईमानदारी से साझा करना।
- **सत्य और जवाबदेही :-**प्रशासनिक नैतिकता सत्य के आधार पर अधिकारियों को उनके कार्यों के प्रति जवाबदेह बनाती है।**उदाहरण:** गलत फैसलों या भ्रष्टाचार के लिए उत्तरदायित्व स्वीकार करना।
- **सत्यनिष्ठा और न्याय:-**सत्य, प्रशासन में न्याय सुनिश्चित करता है।सत्यनिष्ठा के बिना प्रशासन में न्यायसंगत निर्णय लेना असंभव है।
- **सुशासन (Good Governance):**प्रशासनिक नैतिकता और सत्य का पालन शासन को पारदर्शी और जवाबदेह बनाता है।
- **भ्रष्टाचार का उन्मूलन:** सत्य और नैतिकता के अभाव में भ्रष्टाचार पनपता है।
- **जनता का विश्वास:** सत्यनिष्ठा और नैतिकता जनता और सरकार के बीच विश्वास को बढ़ाती है।
- **न्यायपूर्ण समाज:**प्रशासनिक नैतिकता और सत्य मिलकर एक ऐसा समाज बनाते हैं जहाँ न्याय और समानता का पालन हो।

सत्य और प्रशासनिक नैतिकता एक-दूसरे के पूरक हैं। सत्यनिष्ठा प्रशासनिक नैतिकता को मजबूत बनाती है, जबकि नैतिकता सत्य को व्यवहारिक रूप में लागू करती है। दोनों का पालन प्रशासनिक कार्यों को पारदर्शी, न्यायसंगत, और जनहितैषी बनाता है। जब सत्य और नैतिकता को प्राथमिकता दी जाती है, तो प्रशासन में भ्रष्टाचार, पक्षपात, और अन्याय को समाप्त किया जा सकता है, जिससे एक आदर्श शासन प्रणाली और समाज का निर्माण संभव होता है।

2.3.1.3.सत्याग्रह (Satyagraha):-"सत्याग्रह' का मूल अर्थ है सत्य के प्रति आग्रह (सत्य अ आग्रह) सत्य को पकड़े रहना और इसके साथ अहिंसा को मानना । अन्याय का सर्वथा विरोध(अन्याय के प्रति विरोध इसका मुख्या वजह था) करते हुए अन्यायी के प्रति वैरभाव न रखना, सत्याग्रह का मूल लक्षण है। हमें सत्य का पालन करते हुए निर्भयतापूर्वक मृत्य का वरण करना चाहिए और मरते मरते भी जिसके विरुद्ध सत्याग्रह कर रहे हैं, उसके प्रति वैरभाव या क्रोध नहीं करना चाहिए।' "सत्याग्रह' में अपने विरोधी के प्रति हिंसा के लिए कोई स्थान नहीं है। वे अहिंसा वादी थे । धैर्य एवं सहानुभूति से विरोधी को उसकी गलती से मुक्त करना चाहिए, क्योंकि जो एक को सत्य प्रतीत होता है, वहीं दूसरे को गलत दिखाई दे सकता है। धैर्य का तात्पर्य कष्टसहन से है। इसलिए इस सिद्धांत का अर्थ हो गया, "विरोधी को कष्ट अथवा पीड़ा देकर नहीं, बल्कि स्वयं कष्ट उठाकर सत्य का रक्षण।' महात्मा गांधी ने कहा था कि सत्याग्रह में एक पद "प्रेम' अध्याहत है। सत्याग्रह की संधि में मध्यम पद का लोप है। सत्याग्रह यानी सत्य के लिए प्रेम द्वारा आग्रह। (सत्य + प्रेम + आग्रह = सत्याग्रह) गांधी जी ने सत्याग्रह की संक्षिप्त व्याख्या इस प्रकार की -"यह ऐसा आंदोलन है जो पूरी तरह सच्चाई पर कायम है और हिंसा के उपायों के एवज में चलाया जा रहा।' अहिंसा सत्याग्रह दर्शन का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है, क्योंकि सत्य तक पहुँचने और उन पर टिके रहने का एकमात्र उपाय अहिंसा ही है। और गांधी जी के ही शब्दों में "अहिंसा किसी को चोट न पहुँचाने की नकारात्मक वृत्तिमात्र नहीं है, बल्कि वह सक्रिय प्रेम की विधायक वृत्ति है।' सत्याग्रह में स्वयं कष्ट उठाने की बात है। सत्य का पालन करते हुए मृत्यु के वरण की बात है। सत्य और अहिंसा के पुजारी के शस्त्रागार में "उपवास' सबसे शक्तिशाली शस्त्र है। जिसे किसी रूप में हिंसा का आश्रय नहीं लेता है, उसके लिए उपवास अनिवार्य है। मृत्यु पर्यंत कष्ट सहन और इसलिए मृत्यु पर्यत उपवास भी, सत्याग्रही का अंतिम अस्त्र है।' परंतु अगर उपवास दूसरों को मजबूर करने के लिए आत्मपीड़न का रूप ग्रहण करे तो वह त्याज्य है ।'"सत्याग्रह' एक प्रतिकारपद्धति ही नहीं है, एक विशिष्ट जीवनपद्धति भी है जिसके मूल में अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह, अस्तेय, निर्भयता, ब्राह्मचर्य, सर्वधर्म समभाव आदि एकादश व्रत हैं। जिसका व्यक्तिगत जीवन इन व्रतों के कारण शुद्ध नहीं है, वह सच्चा सत्याग्रही नहीं हो सकता। इसीलिए विनोबा इन व्रतों को "सत्याग्रह निष्ठा' कहते हैं। "सत्याग्रह' और "नि:शस्त्र प्रतिकार' में उतना ही अंतर है, जितना उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव में। नि:शस्त्र प्रतिकार की कल्पना एक निर्बल के अस्त्र के रूप में की गई है और उसमें अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिए हिंसा का उपयोग वर्जित नहीं है, जबकि सत्याग्रह की कल्पना परम शूर के अस्त्र के रूप में की गई है और इसमें किसी भी रूप में हिंसा के प्रयोग के लिए स्थान नहीं है। इस प्रकार सत्याग्रह निष्क्रिय स्थिति नहीं है। वह प्रबल सक्रियता की स्थिति है। सत्याग्रह अहिंसक प्रतिकार है, परंतु वह निष्क्रिय नहीं है।अन्यायी और अन्याय के प्रति प्रतिकार का प्रश्न सनातन है। अपनी सभ्यता के विकासक्रम में मनुष्य

ने प्रतिकार के लिए प्रमुखत: चार पद्धतियों का अवलंबन किया है-पहली पद्धति है बुराई के बदले अधिक बुराई। इस पद्धति से दंडनीति का जन्म हुआ जब इससे समाज और राष्ट्र की समस्याओं के निराकरण का प्रयास हुआ तो युद्ध की संस्था का विकास हुआ। दूसरी पद्धति है, बुराई के बदले समान बुराई अर्थात् अपराध का उचित दंड दिया जाए, अधि नहीं। यह अमर्यादित प्रतिकार को सीमित करने का प्रयास है।

तीसरी पद्धति है, बुराई के बदले भलाई। यह बुद्ध, ईसा, गांधी आदि संतों का मार्ग है। इसमें हिंसा के बदले अहिंसा का तत्व अंतर्निहित है। चौथी पद्धति है बुराई की उपेक्षा। अचार्य विनोबा कहते हैं- "बुराई का प्रतिकार मत करो बल्कि विरोधी की समुचित चिंतन में सहायता करो। उसके सद्विचार में सहकार करो। शुद्ध विचार करने, सोचने समझने, व्यक्तिगत जीवन में उसका अमल करने और दूसरों को समझाने में ही हमारे लक्ष्य की पूर्ति होनी चाहिए। सामनेवाले के सम्यक् चिंतन में मदद देना ही सत्याग्रह का सही स्वरूप है।' इसे ही विनोबा सत्याग्रह को सौम्यतर और सौम्यतम प्रक्रिया कहते हैं। सत्याग्रह प्रेम की प्रक्रिया है। उसे क्रम-क्रम, अधिकाधिक निखरते जाना चाहिए। सत्याग्रह कुछ नया नहीं है, कौटुंबिक जीवन का राजनीतिक जीवन में प्रसार मात्र है। गांधी जी की देन यह है कि उन्होंने सत्याग्रह के विचार का राजनीतिक जीवन में सामूहिक प्रयोग किया। कहा जाता है। लोकतंत्र में, जहाँ सारा काम "लोक' की राय से, लोकप्रतिनिधियों के माध्यम से चल रहा है, सत्याग्रह के लिए कोई स्थान नहीं है। विनोबा कहते हैं-वास्तव में सामूहिक सत्याग्रह आवश्यकता तो उस तंत्र' में नहीं होगी, जिसमें निर्णय बहुमत से नहीं, सर्वसम्मति से होगा। परंतु उस दशा में भी व्यक्तिगत सत्याग्रह पड़ोसी के सम्यक् चिंतन में सहकार के लिए तो हो ही सकता है। परंतु लोकतंत्र में जब विचारस्वातंत्र्य और विचारप्रधान के लिए पूरा अवसर है, तो सत्याग्रह को किसी प्रकार के "दबाव, घेराव अथवा बंद,' का रूप नहीं ग्रहण करना चाहिए। ऐसा हुआ तो सत्याग्रह की सौम्यता नष्ट हो जाएगी। सत्याग्रही अपने धर्म से च्युत हो जाएगा।गाँधी जी द्वारा प्रतिपादित सत्याग्रह के सिद्वान्त का मूल्यांकन निम्नवत् किया जा सकता

- **व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में महत्व (Importance of Indivisual and social life):-** सत्याग्रह के प्रमुख तत्वों, विशेषताओं के आधार पर माना जा सकता है कि यदि व्यक्ति इनका अनुसरण करेगा, या जीवन में इन्हें आमसात् करेगा तो न केवल व्यक्ति के स्वयं के जीवन में, बल्कि सम्पूर्ण समाज में इसका महत्व होगा।

- **समाज का पुर्ननिर्माण (Reconstruction of society):-** सत्याग्रह के सिद्धान्तों को जीवन में लागू कर व्यक्ति नकारात्मक से सकारात्मक प्रवृत्ति की ओर अग्रसारित होता है। गाँधी जी द्वारा वर्णित नये व नैतिक विचारों के आधार पर समाज का पुर्ननिर्माण भी संभव है।
- **सामाजिक अनुशासन व नैतिकता में वृद्धि (Increase in social discipline and morality):-** सामाजिक अनुशासन व नैतिकता में वृद्धि अनुशासन व संयम सक्षम व्यक्तित्व व सामाजिक व्यवस्था के लिए आवश्यक है, जिसकी सहायता से सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन में व्याप्त दुष्परिणामों को समाप्त किया जा सकता
- **मानवता के प्रति प्रेम (Love for humanity):-** सत्याग्रह एक ऐसा सिद्धान्त जिसमें मानवता के प्रति प्रेम के दर्शन होते हैं, जिससे समाज में स्नेह एवं सहयोग की भावना विकसित होती है और इस प्रकार समाज की प्रगति को प्रोत्साहन मिलता है। अतः स्पष्ट है कि गाँधी जी में सौजन्यता, नम्रता, सत्य व अहिंसा के प्रति अटल विश्वास था,इसीलिए उन्होंने विश्व को विशेषकर भारत को सत्याग्रह के आधार पर नया मार्ग दिखलाया। गाँधी जी को यह विश्वास था कि हमको हमारा शुद्ध साध्य अशुद्ध व अपवित्र साधनों द्वारा कभी प्राप्त नहीं हो सकता।

समाजशास्त्र के सिद्धान्त के अंतर्गत सत्याग्रह का अध्ययन किया जाता है। इसका कारण है कि समाज सामाजिक संबंधों की एक व्यवस्था है और सत्याग्रह इन्हीं संबंधों में मधुरता व अनुकूलता को विकसित करता है। यद्यपि सत्याग्रह का प्रयास गांधी जी व्यक्तिगत जीवन में किया था, लेकिन इसका संबंध केवल व्यक्ति तक सीमित न होकर एक सार्वज्ञानिक व व्यवहारिक सिद्धान्त के रूप में सामाजिक जीवन में भी है। सत्याग्रह की प्रक्रिया को अपनाकर समाज में व्याप्त असत्य, अन्याय, शोषण को समाप्त किया जा सकता है तथा सहयोग, सहकारिता, सद्भाव जैसी भावनओं को विकसित कर सामाजिक व्यवस्था को एक व्यवस्थिति रूप प्रदान किया जा सकता है। सामाजिक जीवन इन्हीं महान सिद्धान्तों पर टिका हुआ है जो व्यक्तिगत जीवन की अपेक्षा सामाजिक व राष्ट्रीय जीवन में प्रयोग किया जा सकता है। सत्याग्रह केवल सिद्धान्त की बात नहीं है, अपितु गाँधी जी ने इसका व्यवहारिक जीवन में भी प्रयोग किया है और पाया है कि इसकी सहायता से अन्याय व प्रतिकार को भी समाप्त किया जा सकता है। इस सिद्धान्त की मौखिक बात यह है कि इसका प्रयोग अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी किया जा सकता है।

सत्याग्रह और प्रशासनिक नैतिकता का आपसी संबंध समाज और शासन में नैतिकता, सत्य, और न्याय के आदर्शों को स्थापित करने से है।सत्याग्रह विकसित एक नैतिक और शांतिपूर्ण प्रतिरोध का सिद्धांत है, जो सत्य और अहिंसा

के आधार पर अन्यायपूर्ण व्यवस्था का विरोध करता है।प्रशासनिक नैतिकता शासन और प्रशासन में सत्य, ईमानदारी, पारदर्शिता, और न्याय को बनाए रखने का सिद्धांत है।दोनों ही नैतिकता के आधार पर समाज और शासन को बेहतर बनाने का उद्देश्य रखते हैं। सत्याग्रह और प्रशासनिक नैतिकता का आपसी संबंध को निम्न बिंदुओं में स्पष्ट कर सकते है.-,

(क).सत्याग्रह और प्रशासनिक नैतिकता में समानता ,

(ख). सत्याग्रह का प्रशासनिक नैतिकता पर प्रभाव,

(ग).प्रशासनिक नैतिकता का सत्याग्रह में महत्व

(क).सत्याग्रह और प्रशासनिक नैतिकता में समानता

- **सत्य और नैतिकता पर आधारित:**सत्याग्रह सत्य और नैतिकता पर आधारित है।प्रशासनिक नैतिकता भी सत्यनिष्ठा और न्याय को प्राथमिकता देती है।
- **अन्याय का विरोध:**सत्याग्रह अन्याय और भ्रष्टाचार के खिलाफ शांतिपूर्ण विरोध का तरीका है।प्रशासनिक नैतिकता अन्याय और अनैतिक कार्यों को रोकने के लिए तंत्र प्रदान करती है।
- **समानता और न्याय:**सत्याग्रह समाज में समानता और न्याय की स्थापना का प्रयास करता है।प्रशासनिक नैतिकता शासन में समानता और न्याय सुनिश्चित करती है।
- **नैतिक साहस:**सत्याग्रह में नैतिक साहस आवश्यक है ताकि अन्याय के सामने खड़ा हुआ जा सके।प्रशासनिक नैतिकता भी अधिकारियों को सही निर्णय लेने के लिए नैतिक साहस प्रदान करती है।
- **जनता का कल्याण:**सत्याग्रह का उद्देश्य जनता की भलाई और समाज सुधार है।प्रशासनिक नैतिकता भी जनहित को प्राथमिकता देती है।

(ख). सत्याग्रह का प्रशासनिक नैतिकता पर प्रभाव,

- **सत्य और पारदर्शिता पर जोर:**सत्याग्रह सत्य और नैतिकता पर आधारित है, जो प्रशासनिक नैतिकता को प्रभावित करता है।उदाहरण: गांधीजी का नमक सत्याग्रह प्रशासनिक अन्याय (नमक कर) के खिलाफ सत्य और पारदर्शिता की मांग करता था।
- **नैतिक साहस को बढ़ावा:**सत्याग्रह प्रशासन में नैतिक साहस को प्रेरित करता है ताकि अधिकारी अन्यायपूर्ण नीतियों के खिलाफ खड़े हो सकें।

- **प्रशासनिक सुधार:**सत्याग्रह ने प्रशासनिक अन्याय और भ्रष्टाचार को उजागर कर सुधार लाने में मदद की है। उदाहरण: भारत के स्वतंत्रता संग्राम में सत्याग्रह ने औपनिवेशिक प्रशासन में सुधार की मांग की।
- **जनता और प्रशासन के बीच संतुलन:**सत्याग्रह जनता की आवाज को शांतिपूर्ण तरीके से प्रशासन तक पहुँचाने का माध्यम है।यह प्रशासनिक नैतिकता को जागरूक करने में मदद करता है।

(ग).प्रशासनिक नैतिकता का सत्याग्रह में महत्व

- **उत्तरदायित्व:**यदि प्रशासन नैतिक और उत्तरदायी होगा, तो सत्याग्रह की आवश्यकता कम होगी।
- **न्याय और समानता:**प्रशासनिक नैतिकता अन्याय और असमानता को दूर करने में सक्षम होती है।
- **शांतिपूर्ण समाधान:**प्रशासनिक नैतिकता सत्याग्रह की भावना को समझकर समाज में शांति बनाए रख सकती है।

सत्याग्रह और प्रशासनिक नैतिकता दोनों का उद्देश्य समाज में नैतिकता, न्याय, और समानता की स्थापना करना है।सत्याग्रह प्रशासन पर नैतिक दबाव बनाता है और अन्याय का विरोध करता है।प्रशासनिक नैतिकता यह सुनिश्चित करती है कि शासन नैतिक और पारदर्शी हो ताकि सत्याग्रह की आवश्यकता ही न पड़े।दोनों का सामंजस्य एक आदर्श समाज और प्रशासनिक व्यवस्था के निर्माण में सहायक हो सकता है।

2.3.1.4.अस्तेय (Asteya): गांधीजी ने अस्तेय को आंहसा तथा सत्य के सहायक व्रत के रूप में स्वीकार किया है और उक्त दोनों व्रतों की भांति इसे भी बहुत व्यापक अर्थ में ग्रहण किया है। अस्तेय का सामान्य अर्थ है चोरी न करना- अर्थात् कोई वस्तु अथवा धन उसके स्वामी की आज्ञा के बिना न लेना। परंतु गांधीजी अस्तेय के नियम को उक्त सामान्य अर्थ तक ही सीमित नहीं मानते। यह कहा जा सकता है कि किसी को ऐसी वस्तु से वंचित करना या रखना जो वास्तव में उसकी है, चोरी है। अस्तेय का व्यापक अर्थ बताते हुए उन्होंने कहा है कि शारीरिक, मानसिक, वैचारिक आदि सभी प्रकार की चोरी से सदा दूर रहना ही अस्तेय है। उनके मतानुसार चोरी मुख्यतः तीन प्रकार की होती है- शारीरिक, मानसिक तथा वैचारिक अयवा बौद्धिक । जान-बूझ कर किसी की कोई वस्तु अथवा धन-सम्पत्ति चुराना, सार्व- जनिक स्थान से कोई वस्तु उठा लेना, अपने प्रिय जनों से छिपाकर चुपचाप किसी वस्तु का उपभोग करना आदि शारीरिक चोरी के उदाहरण हैं। किसी वस्तु को चोरी से प्राप्त करने की इच्छा करना और उसके लिए ललचाते रहना मानसिक चोरी है। किसी अन्य व्यक्ति के विचारों को स्वयं अपने मौलिक विचार कहकर दूसरों के समक्ष प्रस्तुत करना वैचारिक अथवा बौद्धिक चोरी है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि गांधीजी के मतानुसार शारीरिक, मानसिक तथा वैचारिक इन तीनों में से किसी प्रकार की चोरी करना अस्तेय के नियम का

उल्लंघन करना है। दूसरे शब्दों में, अस्तेय के नियम का पालन करने के लिए मनुष्य को सभी प्रकार की चोरी से सदैव दूर रहना चाहिए। गांधीजी का कथन है कि अस्तेय का पालन किए बिना अहिंसा और सत्य के अनुसार आचरण करना बहुत कठिन है। उनके विचार में अस्तेय को भंग करने वाला व्यक्ति अहिंसा तथा सत्य का पालन नहीं कर सकता, क्योंकि किसी की वस्तु चुरा लेने से उस व्यक्ति को दुःख होता है जिससे अहिंसा का उल्लंघन होता है और इसी प्रकार मिथ्याभिश किसी अन्य व्यक्ति के विचार को अपना बताने से सत्य की स्पष्टतः अवहेलना होती है। इसी कारण अहिंसा और सत्य की भांति अस्तेय को भी गांधीजी ने मनुष्य के लिए अनिवार्य नैतिक नियम के रूप में स्वीकार किया है।

2.3.1.5.अपरिग्रह (Aparigraha):-अहिंसा और सत्य के अनुसार आचरण करने के लिए गांधी जी ने अस्तेय की भांति अपरिग्रह का निष्ठापूर्वक पालन करना भी अनिवार्य माना है। अपरिग्रह का सामान्य अर्थ होता है संचय न करना। गांधीजी ने अन्य व्रतों की भांति अपरिग्रह का मी बहुत व्यापक अर्थ स्वीकार किया है। उनका मत है कि अपरिग्रह का पालन के लिए केवल धन-संचय न करना ही पर्याप्त नहीं है, प्रत्युत भविष्य के लिए किसी भी रूप में किसी प्रकार का संचय न करना और उसकी रक्षा भी न करना आवश्यक। वे यह मानते हैं कि अपनी अनिवार्य आवश्यकता से अधिक किसी भी वस्तु को ग्रहण करके उसे भविष्य के लिए संचित करनी अपरिग्रह का उल्लंघन है। उनके विचार में अपरिग्रह के अनुसार आचरण करने का अर्थ यह है कि मनुष्य निरंतर धम करते हुए भी समाज से उतना ही ग्रहण करे जितना उसके जीवन के लिए अनिवार्य हो। शेष सब कुछ उसे समाज के कल्याण के लिए समर्पित कर देना बाहिए। गांधीजी का यह कथन है कि मनुष्य अपने शरीर को भी सुख-भोग का साधन न मानकर सम्पूर्ण मानव जाति तथा प्राणिमात्र की सेवा का साधन समझे और यदि आवश्यक हो तो इस महान लक्ष्य की पूति के लिए अपने शरीर का परित्याग करने में भी संकोच न करे। स्पष्ट है कि अपरिग्रह का दृढतापूर्वक पालन करने के लिए मनुष्य को अपनी आवश्यकताएं अधिकाधिक सीमित करनी होगी। उनका यह दृढ़ विश्वास था कि यदि सभी व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में अपरिग्रह के अनुसार आचरण करें तो समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता का अंत हो सकता है और मनुष्य का जीवन अधिक शांतिपूर्ण एवं सुखमय ही सकता है। इसी कारण उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य व्रत के रूप में अपरिग्रह का पालन करनी आवश्यक माना है। यदि सभी मनुष्य विशेषतः बलवान व्यक्ति - वास्तव में अपरिग्रह का निष्ठापूर्वक पालन करें तो व्यक्ति और समाज दोनों के लिए सुख जौर शांति का मार्ग प्रशस्त हो सकता है तथा अन्याय, शोषण एवं संघर्ष को रोका जा सकता है।

2.3.1.6.ब्रह्मचर्य (Brahmachary):- गांधीजी ने हिसा, सत्य, अस्तेय और अपरिग्रह की भांति ब्रह्मचर्य की भी बहुत व्यापक परिभाषा दी है। वे ब्रह्मचर्य को केवल कामेच्छा- निरोध तक ही सीमित नहीं मानते। उनका कथन है कि "मन, वचन एवं कर्म से सभी समयों में तथा सभी स्थानों पर अपनी समस्त इंद्रियों का पूर्ण संयम अथवा नियंत्रण ही ब्रह्मचर्य है।" गांधीजी के अनुसार जो व्यक्ति अपनी सभी इंद्रियों को संयमित किए बिना केवल एक ही इंद्रिय को नियंत्रित करने का प्रयत्न करता है वह वास्तव में ब्रह्मचर्य का पूर्णरूपेण कभी पालन नहीं कर सकता। इसका अभिप्राय है कि ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए मनुष्य को तामसिक भोजन, कामोतेजक वस्तुओं, दृश्यों, स्पर्श तथा गंध से यथासम्भव दूर रहने का प्रयत्न करता चाहिए। इसके अतिरिक्त ब्रह्मचर्य व्रत का भली-भांति पालन करने के लिए वासनात्मक विचारों का परित्याग करके अपने मन में केवल पवित्र विचारों का विकास करना भी बहुत आवश्यक है। गांधीजी बहह्मचर्य का पालन करने के लिए ईश्वरोपासना को भी आवश्यक मानते हैं। अंततः उन्होंने यह भी कहा है कि यदि मनुष्य स्वाध्याय तथा सामाजिक हित के कार्य में निरंतर व्यस्त रहे तो उसके लिए ब्रह्मचर्य का निष्ठापूर्वक पालन करना कठिन नहीं होगा। गांधीजी के मतानुसार इन सब उपायों द्वारा प्रत्येक व्यक्ति ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता है।

2.4. पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

2.4.1. कौटिल्य व चरित्र निर्माण (Kautilya and character building)

कौटिल्य, जिन्हें चाणक्य या विष्णुगुप्त के नाम से भी जाना जाता है, प्राचीन भारत के महान राजनीतिक विचारक, अर्थशास्त्री, और शिक्षक थे। उनका चरित्र निर्माण में योगदान विशेष रूप से उनके द्वारा रचित 'अर्थशास्त्र' और जीवन के आदर्शों के माध्यम से स्पष्ट होता है। उनके विचार और नीतियाँ व्यक्ति के चरित्र निर्माण और समाज की संरचना को सुदृढ़ बनाने में सहायक सिद्ध होती हैं।कौटिल्य (चाणक्य) के अनुसार नैतिक मूल्य (Ethical Values) किसी भी व्यक्ति, समाज और राज्य के सफल संचालन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। उनके विचारों में नैतिकता का आधार कर्तव्य पालन, सत्यनिष्ठा, न्यायप्रियता, आत्मसंयम और अनुशासन पर आधारित है। उन्होंने नैतिक मूल्यों को एक मजबूत और संगठित समाज की नींव माना है।

2.4.1.1.कौटिल्य के अनुसार मुख्य नैतिक मूल्य (Main ethical values according to Kautilya):

- **सत्यनिष्ठा (Honesty and Integrity)** कौटिल्य के अनुसार, सत्य और ईमानदारी किसी भी व्यक्ति का सबसे महत्वपूर्ण गुण है।उनके अनुसार, एक राजा, प्रशासक या साधारण व्यक्ति को अपने कार्यों में ईमानदारी

और सच्चाई का पालन करना चाहिए।उन्होंने यह भी कहा कि असत्य और भ्रष्टाचार से व्यक्ति और राज्य दोनों का पतन निश्चित है।

- **न्यायप्रियता (Justice)** कौटिल्य ने न्याय को सर्वश्रेष्ठ नैतिक मूल्य माना।राजा और प्रशासकों के लिए यह अनिवार्य है कि वे न्याय के सिद्धांत का पालन करें और सभी वर्गों के साथ समान व्यवहार करें।उनके अनुसार, "अन्याय करने वाला और अन्याय सहने वाला दोनों अपराधी हैं।"
- **कर्तव्य पालन (Duty and Responsibility)**कौटिल्य ने प्रत्येक व्यक्ति के कर्तव्य को सर्वोपरि माना।उन्होंने राजा के लिए कहा कि वह राजधर्म का पालन करते हुए प्रजा के कल्याण के लिए कार्य करे।व्यक्ति को अपने व्यक्तिगत और सामाजिक कर्तव्यों का पालन ईमानदारी और निष्ठा से करना चाहिए।
- **आत्मसंयम (Self-Control)**कौटिल्य के अनुसार, आत्मसंयम व्यक्ति के चरित्र का सबसे मजबूत स्तंभ है।व्यक्ति को अपनी इच्छाओं और भावनाओं पर नियंत्रण रखना चाहिए।उनके अनुसार, आत्मसंयम ही व्यक्ति को नैतिक और नैतिक-अनैतिक के बीच का भेद समझने में मदद करता है।
- **धर्म और नैतिकता (Ethics and Morality)**कौटिल्य ने धर्म को कर्तव्यों और नैतिकता का संगम माना। धर्म का पालन करने का अर्थ है सत्य, अहिंसा, परोपकार और कर्तव्य का पालन करना। उन्होंने यह भी कहा कि धर्म का पालन राज्य की नीतियों में भी झलकना चाहिए।
- **परोपकार (Welfare for Others)**कौटिल्य ने परोपकार को नैतिकता का एक महत्वपूर्ण भाग बताया।उन्होंने राजा और प्रशासकों को प्रजा के हित में कार्य करने की शिक्षा दी।परोपकारी व्यक्ति समाज में सम्मान पाता है और उसका जीवन दूसरों के लिए प्रेरणादायक बनता है।
- **अनुशासन (Discipline)**अनुशासन के बिना कोई भी व्यक्ति या राज्य प्रगति नहीं कर सकता। कौटिल्य ने अनुशासन को नैतिक जीवन का महत्वपूर्ण अंग बताया।अनुशासित व्यक्ति ही समाज और राज्य की सेवा कर सकता है।
- **नैतिक साहस (Moral Courage)**कौटिल्य के अनुसार, व्यक्ति को नैतिक साहस रखना चाहिए।उसे सही के लिए खड़े होने और अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने की हिम्मत होनी चाहिए। नैतिक साहस ही व्यक्ति को सच्चा नेता बनाता है।

कौटिल्य के नैतिक मूल्यों का उद्देश्य एक व्यक्ति को सशक्त, ईमानदार, न्यायप्रिय और आत्मनिर्भर बनाना है। उनका मानना था कि नैतिक मूल्यों के बिना व्यक्ति, समाज और राज्य का विकास संभव नहीं है। उनके विचार आज भी प्रासंगिक हैं और हमें नैतिकता के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं।

2.4.1.2.कौटिल्य का चरित्र निर्माण का दृष्टिकोण (Kautilya's approach to character building)

कौटिल्य (चाणक्य) ने चरित्र निर्माण पर विशेष ध्यान दिया और इसे व्यक्ति की सफलता, समाज की उन्नति और राज्य की स्थिरता के लिए आधारभूत तत्व माना। उनके अनुसार, चरित्र निर्माण केवल व्यक्तिगत स्तर तक सीमित नहीं है, बल्कि यह समाज और राष्ट्र के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उनका मानना था कि एक मजबूत चरित्र वाला व्यक्ति ही अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण रखते हुए आदर्श नेतृत्व और समाज में नैतिकता स्थापित कर सकता है।

- शिक्षा के माध्यम से चरित्र निर्माण:कौटिल्य ने कहा कि शिक्षा व्यक्ति के चरित्र निर्माण की नींव है।उन्होंने व्यावहारिक शिक्षा पर ज़ोर दिया, जिससे व्यक्ति में ज्ञान, अनुशासन और नैतिकता का विकास हो। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति में आत्म-नियंत्रण, कर्तव्यनिष्ठा और नेतृत्व क्षमता का विकास होता है।
- नैतिकता और अनुशासन :कौटिल्य के अनुसार, नैतिकता (Ethics) और अनुशासन (Discipline) व्यक्ति के चरित्र को मजबूत करते हैं।व्यक्ति को अपनी इच्छाओं और भावनाओं पर संयम रखते हुए धैर्य, सत्यनिष्ठा और कर्तव्यपालन जैसे गुणों को अपनाना चाहिए।अनुशासनहीन जीवन को उन्होंने पतन का कारण बताया।
- आत्मसंयम और आत्मनियंत्रण :कौटिल्य का मानना था कि आत्मसंयम व्यक्ति को अधर्म और अनैतिक कार्यों से दूर रखता है।इच्छाओं पर नियंत्रण रखकर व्यक्ति सही निर्णय ले सकता है और अपने चरित्र को मजबूत कर सकता है।
- कर्तव्यनिष्ठा और दायित्व बोध: कौटिल्य ने हर व्यक्ति के लिए कर्तव्यनिष्ठा को अनिवार्य बताया।उनके अनुसार, व्यक्ति का चरित्र तभी मजबूत होता है जब वह अपने कर्तव्यों का ईमानदारी और निष्ठा से पालन करता है।उन्होंने राजा और नेताओं के लिए भी स्पष्ट किया कि उन्हें प्रजा के कल्याण के लिए कार्य करना चाहिए।
- सत्यनिष्ठा और न्यायप्रियता:कौटिल्य ने कहा कि सत्यनिष्ठा (Honesty) और न्यायप्रियता (Justice) एक सशक्त चरित्र की पहचान हैं।व्यक्ति को सत्य बोलना, ईमानदारी से काम करना और अन्याय के खिलाफ खड़े होने का साहस रखना चाहिए।उन्होंने कहा कि अन्याय सहना भी उतना ही अपराध है जितना अन्याय करना।
- राजनीतिक और सामाजिक जिम्मेदारी:कौटिल्य के अनुसार, व्यक्ति का चरित्र केवल व्यक्तिगत विकास तक सीमित नहीं होना चाहिए।व्यक्ति को अपनी सामाजिक और राजनीतिक जिम्मेदारियों को समझते हुए समाज

के लिए काम करना चाहिए। एक अच्छा चरित्र वाला व्यक्ति समाज को उन्नति की ओर ले जाने में सक्षम होता है।

- धैर्य और दूरदृष्टि:कौटिल्य ने कहा कि व्यक्ति के चरित्र में धैर्य और दूरदर्शिता का होना आवश्यक है। धैर्य व्यक्ति को विपरीत परिस्थितियों में भी सही निर्णय लेने की शक्ति देता है। दूरदर्शिता व्यक्ति को भविष्य की संभावनाओं और परिणामों को समझने में मदद करती है।
- साहस और नेतृत्व क्षमता:साहस और नेतृत्व क्षमता चरित्र निर्माण के महत्वपूर्ण तत्व हैं।कौटिल्य ने कहा कि व्यक्ति को नैतिक साहस दिखाते हुए समाज और राष्ट्र के लिए आदर्श नेतृत्व प्रस्तुत करना चाहिए।

कौटिल्य के अनुसार, चरित्र निर्माण एक ऐसा निरंतर प्रयास है जो व्यक्ति को नैतिक, आत्मनिर्भर, न्यायप्रिय और समाज के प्रति जिम्मेदार बनाता है। उनका दृष्टिकोण आज भी प्रासंगिक है और हमें जीवन में सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है। उनके विचारों के आधार पर कह सकते हैं कि चरित्रवान व्यक्ति ही समाज और राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

2.4.1.3.कौटिल्य का चरित्र निर्माण में योगदान (Contribution of Kautilya in character building):

- **नैतिकता और अनुशासन:**कौटिल्य ने जीवन में अनुशासन और नैतिक मूल्यों को अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना। उनका मानना था कि किसी भी व्यक्ति को सफलता प्राप्त करने के लिए पहले स्वयं पर नियंत्रण रखना चाहिए।उनके अनुसार आत्म-नियंत्रण से ही व्यक्ति दूसरों का नेतृत्व कर सकता है।
- **शिक्षा का महत्त्व:**कौटिल्य ने शिक्षा को जीवन का प्रमुख आधार माना। उन्होंने व्यावहारिक ज्ञान को पुस्तकीय ज्ञान से अधिक महत्त्व दिया।व्यक्ति का चरित्र और व्यक्तित्व शिक्षा के माध्यम से विकसित होता है।
- **राजनीतिक और आर्थिक दृष्टिकोण:**कौटिल्य ने अर्थशास्त्र और राजनीति को आदर्श जीवन का महत्वपूर्ण अंग माना।उन्होंने सिखाया कि चरित्रवान व्यक्ति ही सक्षम नेतृत्व कर सकता है और समाज को उन्नति की ओर ले जा सकता है।
- **धैर्य और दूरदृष्टि:**कौटिल्य ने व्यक्ति को धैर्यवान और दूरदर्शी बनने की शिक्षा दी।उनके अनुसार, जीवन में आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिए साहस और धैर्य आवश्यक है।
- **न्याय और सत्यनिष्ठा:**कौटिल्य ने न्याय के सिद्धांत को चरित्र निर्माण के लिए आधार बनाया। उनके अनुसार, न्यायप्रिय और सत्यनिष्ठ व्यक्ति ही समाज में सम्मान और विश्वास प्राप्त कर सकता है।

- **आत्मनिर्भरता:**उन्होंने आत्मनिर्भर बनने पर जोर दिया और कहा कि व्यक्ति को अपने निर्णयों के प्रति उत्तरदायी रहना चाहिए।
- **राजधर्म और व्यक्ति का कर्तव्य:**कौटिल्य ने राजा और प्रजा दोनों के लिए कर्तव्यों का उल्लेख किया। व्यक्ति का चरित्र तभी निखरता है जब वह अपने कर्तव्यों का पालन ईमानदारी से करता है।

कौटिल्य के सिद्धांत और शिक्षाएँ व्यक्ति को आत्मनिर्भर और नैतिक बनाते हैं, बल्कि समाज और राष्ट्र के विकास में भी योगदान देते हैं। उनका चरित्र निर्माण में योगदान व्यक्ति को मजबूत, अनुशासित, और दूरदर्शी बनने की प्रेरणा देता है।

2.4.2. कौटिल्य और भ्रष्टाचार (Kautilya and corruption)

कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र में तत्कालीन मौर्य प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार विशेषतः वित्तीय भ्रष्टाचार का वर्णन मिलता है। कौटिल्य प्रशासन में सत्यनिष्ठा, ईमानदारी, जवाबदेयता, पारदर्शिता की स्थापना करने तथा उसे भ्रष्टाचार से बचाये रखने की आवश्यक तकनीक भी बताते हैं। भ्रष्टाचार निरोध सम्बन्धी कारकों की व्याख्या के पूर्व कौटिल्य यह भी स्पष्ट करते हैं कि प्रशासन में भ्रष्टाचार का होना एक सामान्य सी बात हैं। लेकिन इसे पूर्णतः मिटाना काफी कठिन है। कौटिल्य का मत था कि पुयता आधारित भर्ती द्वारा नियुक्ति के बावजूद भी राजकीय पदाधिकारियों में भ्रष्टाचार का पाया जाना का पाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। कौटिल्य ने सुशासन) के दस संकेतांक बताये है। उनमें से एक संकेतांक भ्रष्टाचार की रोकथाम से सम्बन्धित है। कौटिल्य प्रशासन में व्याप्त वित्तीय भ्रष्टाचार के प्रति सचेतनता प्रदर्शित करते हुए यह मत व्यक्त करते है कि सुशासन की स्थापना हेतु भ्रष्ट पदाधिकारी को दण्डित करने का स्पष्ट प्रावाधान होना चाहिए। साथ ही साथ सरकारी पदाधिकारियों में बढ़ती भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति को रोकने के लिये निरोधात्मक एवं कठोर दण्डात्मक उपाय विकसित करने का सुझाव भी देते हैं।कौटिल्य का यह स्पष्ट मत था कि प्रशासनिक क्षेत्र में विशेषतः वित्तीय प्रशासन में सच्चरित्रता (ईमानदारी) का पूरी तरह अभाव है। उन्होंने अर्थशास्त्र में सरकारी कोष (राजकोष) के गलत तरीके से इस्तेमाल के चालीस प्रकारों का वर्णन किया है। उन्होंने राजकोष की वित्तीय हानि (भ्रष्टाचार) को रोकने के लिए विभिन्न दण्डात्मक कदम उठाने का सझाव भी दिया है।

2.4.2.1.कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र में भ्रष्टाचार की परिभाषा(Definition of corruption in Kautilya's Arthashastra)-कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र के दूसरे अधिकरणअध्यक्षप्रचार में प्रकरण 25 अध्याय 9 में भ्रष्टाचार शब्द को प्राचीन आचार्यों ने निम्नलिखित तरीके से परिभाषित किया है-कि "यदि किसी अध्यक्ष की आमदनी थोड़ी

है और खर्च अधिक दिखाई देता है तो समझ लेना चाहिए कि वह राजकीय धन का अपहरण करता है।यदि जितनी आमदनी है उतना ही व्यय दिखाई दे तो समझना चाहिए कि वह न तो राजधन का गबन करता है और न रिश्वत लेता है।"आचार्य कोटिल्य का कथन है कि धन का अपहरण (गबन) करने वाला भा थोड़ा धन खर्च कर सकता है। अतः गुप्तचरों के द्वारा ही इस कार्य (गबन) का ठीक से पता लगाया जा सकता है अर्थात् सामान्यतः वित्तीय अपहरण (गबन) का पता लगाना आसान नहीं है। कौटिल्य आगे लिखते है कि जो अधिकारी नियमित आय में कमी दिखाता है, यह निश्चय ही राजधन का अपहरण करता है। यदि यह कमी उसकी अज्ञानता, प्रमाद एवं आलस्य के कारण हुई है तो उसे अपराध के अनुसार दुगुना, तिगुना दण्ड दिया जाना चाहिए। जो अधिकारी नियमित आय से दुगुनी आय दिखाता है, वह निश्चय ही प्रजा को पीडित कर इतना धन वसूल करता है। यदि वह उस दुगुनी आमदनी को राजकोष के लिए भेज देता है तो उसे दण्डित करना चाहिए जिससे की वह निकट भविष्य में ऐसा अनुचित कार्य न कर सके। यदि वह उस अधिक धन को राजकोष के लिए न भेजकर स्वयं ही हजम कर लेता है तो उसे अपराध के अनुसार कठोर दण्ड दिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त जो अधिकारी व्यय निमित्त निर्धारित राशि को खर्च न करके बचा लेता है। यह मजदूरों का पेट काटता है। उस अपराधी अधिकारी को कार्य हानि के मूल्य का तथा मजदूरी के अपहरण का यथोचित दण्ड देना आवश्यक है।इसलिए हर राजकीय अधिकारी का कर्तव्य है कि यह अपने कार्य की यथार्थता और तत्सम्बन्धी आय-व्यय का विवरण संक्षेप में तथा विस्तार से राजा के सम्मुख रखे।

कौटिल्य ने लिखा है कि जैसे जीभ में रखे मधु या विष का स्वाद लिये बिना नहीं रहा जा सकता। उसी प्रकार अर्थाधिकार कार्यों (वित्तीय कार्यों) पर नियुक्त पुरुष (सरकारी कार्मिक) धन का थोड़ा भी स्वाद (अपहरण) न ले यह असम्भव है। यहाँ कहने का आशय है कि वित्तीय कार्यों में संलग्न व्यक्ति एन का गबन किये बिना नहीं रह सकते है। कौटिल्य ने यह भी लिखा है कि हम उन्हें ऐसा करते नहीं देख सकते हैं। जिस प्रकार पानी में रहने वाली मछलियां पानी पीती नहीं दिखाई देती हैं उसी प्रकार वित्तीय कार्यों में नियुक्त कर्मचारी भी धन का अपहरण करते हुए नहीं जाने जा सकते है। कौटिल्य का यहाँ तक मानना था कि वित्तीय क्षेत्र में भ्रष्टाचार हमेशा से विद्यमान रहा है। आकाश में उड़ने वाले पक्षियों की गतिविधि का पता लगाया जा सकता है, परन्तु धन अपहरण करने वाले कर्मचारी की गतिविधि से पार पाना कठिन है।

2.4.2.2.कौटिल्य अर्थशास्त्र में भ्रष्टाचार के प्रकार (Types of corruption in Kautilya Arthashastra)- कौटिल्य ने बताया है कि अध्यक्ष द्वारा चालीस प्रकार के उपायों से राजद्रव्य (धन) का अपहरण किया जा सकता है। "ये तरीके निम्नलिखित है-

(1) पहली फसल में प्राप्त हुए द्रव्य को दूसरी फसल आने पर रजिस्टर में चढ़ाना।

(2) दूसरी फसल की आमदनी का कुछ हिस्सा पहली फसल के अन्तर्गत रजिस्टर में चढ़ा देना।

(3) राजकर की वसूली को रिश्वत लेकर छोड़ देना।

(4) राजकर से मुक्त, देवालय, ब्राहाण आदि से कर वसूलना।

(5) कर देने पर भी उसको रजिस्टर में अंकित न करना।

(6) कर न देने पर भी उसका रजिस्टर में उल्लेख करना।

(7) कम प्राप्त धन को रिश्वत लेकर पूरा दिखाना। पूरे प्राप्त धन को अधूरा कह कर लिख देना।

(8) जो द्रव्य प्राप्त हुआ है उसके स्थान पर दूसरा ही द्रव्य भर देना।

(9) एक पुरूष से प्राप्त धन को रिश्वत लेकर दूसरे के नाम पर दर्ज कर देना।

(10) देने योग्य वस्तु को न देना।

(11) जो वस्तु देने योग्य नहीं है उसको दे देना।

(12) समय पर किसी वस्तु को न देना।

(13) रिश्वत लेकर असमय पर उस वस्तु को दे देना।

(14) थोड़ा देकर भी बहुत लिख देना।

(15) बहुत देकर थोड़ा लिखना ।

(16) अभिष्ट वस्तु की जगह दूसरी वस्तु दे देना।

(17) जिस व्यक्ति को देने के लिए कहा है उसके बदले में किसी ओर व्यक्ति को दे देना।

(18) राजकर को वसूल करके उसे खजाने में जमा नहीं कराना।

(19) राजकर को वसूल न करके रिश्वत लेकर उसे जमा रजिस्टर में चढ़ा देना।

(20) राजा से वस्त्रादि क्रय करके तत्काल ही उनका मूल्य न च

(20) राजा से वस्त्रादि क्रय करके तत्काल ही उनका मूल्य न चुकाना बाद में अकेले में कुछ कम रकम देना।

(21) अधिक मूल्य में क्रय की गई वस्तुओं की रकम को कम करके रजिस्टर में लिखना।

(22) सामूहिक कर वसूली को अलग-अलग व्यक्ति से लेना।

(23) अलग-अलग व्यक्तियों से लिए जाने वाले कर को सामूहिक रूप से वसूल करना ।

(24) मूल्यवान वस्तु को कम मूल्य की वस्तु में बदलना।

(25) कम मूल्य की वस्तु को मूल्यवान वस्तु से बदलना।

(26) रिश्वत लेकर बाजार में वस्तुओं की कीमत बढ़ाना, वस्तुओं का मूल्य घटा देना।

(27) दो दिन का वेतन देना और चार दिन का बताकर लिखना।

(28) चार दिन का वेतन दिया हो और दो दिन का घटाकर लिख देना।

(29) मलमास रहित संवत्सर को मलिमास युक्त बता देना।

(30) महिने के दिन घटाकर लिख देना।

(31) नौकरों की संख्या बढ़ा कर लिखना।

(32) एक जरिये से हुई आमदनी को दूसरे जरिये से दर्ज करना।

(33) ब्राह्मणादि को स्वीकृत घन में से स्वयं ले लेना।

(34) कुटिल उपाय से अतिरिक्त धन वसूल करना।

(35) सामूहिक वसूली में से न्यूनाधिक रूप में धन लेना।

(36) वर्ण विषमता दिखाकर धन का अपहरण करना।

(37) जहाँ मूल्य निर्धारित न हों, वहां दाम बढ़ाकर लाभ उठाना।

(38) तौल में कमी-बेशी कर उपार्जन करना।

(39) नाप में विषमता पैदा करके धन कमाना।

(40) घी से भरे हुए 100 बड़े बर्तनों के स्थान पर 100 छोटे बर्तन देना।

इस प्रकार राजकीय धन के गबन के ये उपर्युक्त वर्णित चालीस तरीके हैं।

इसके अतिरिक्त कौटिल्य ने कोष में हानि (क्षय) होने के आठ अन्य कारण भी बताये हैं। वे निम्न हैं-

(1) प्रतिबन्ध-इसके तीन प्रकार है- (1) राजकर को वसूल करना। (2) वसूल करके उसे अपने अधिकार में न रखना। (3) अधिकार में करके भी उसे खजाने में जमा नहीं कराना। जो अध्यक्ष इस तरह से कोष की हानि करे उस परक्षत राशि से दस गुना जुर्माना करना चाहिए।

(2) प्रयोग-कोष धन का स्वयं ही लेन-देन करके, वृद्धि का प्रयत्न करना प्रयोग कहा जाता है। ऐसे अधिकारी पर दुगुना जुर्माना करना चाहिए।

(3) व्यवहार- कोष के द्रव्य से स्वयं ही व्यापार करना व्यवहार कहलाता है, ऐसा करने पर भी दुगुना दण्ड देना चाहिए।

(4) अवस्तार - राजकर वसूल करने वाला अधिकारी, नियत समय से कर वसूली न करके रिश्वत लेने की इच्छा से, समय व्यतीत होने का भय दिखाकर प्रजा को तंग करके जो धन एकत्र करता है, उसे अवस्तार कहते है। ऐसा करने पर अधिकारी को नुकसान की राशि का पांच गुना दण्ड देना चाहिए।

(5) परिहापण- जो अध्यक्ष अपने कुप्रबन्ध (Mismanagement) के कारण कर की आय को कम एवं व्यय की राशि को बढ़ा देता है। इस प्रकार की धन हानि को परिहापण कहते है। ऐसा करने पर उससे हानि की राशि की चार गुना दण्डवसूल किया जाये।

(6) उपभोग- राजकोष के धन का स्वयं भोग करना एवं दूसरों को भोग कराना उपभोग प्रकार का क्षय है। इसके अपराध में अध्यक्ष (अधिकारी) को यदि वह रत्नों का उपभोग करे तो प्राण दण्ड, सारद्रव्यों का उपभोग करता है तो मध्यम साहस दण्ड और फल्गु एवं कुप्य आदि पदार्थों का उपभोग करता हैं तो उसे द्रव्य वापिस लेकर उसकी लागत का दण्ड दिया जाना चाहिए।

(7) परिवर्तन - राजकोष के द्रव्यों को दूसरे द्रव्यों में बदल देना परिवर्तन कहलाता है। इस कार्य को करने वाले राजकीय कर्मचारी (अध्यक्ष) के लिए भी उपभोग क्षय के समान ही दण्ड देना चाहिए।

(8) अपहार - प्राप्त आय को रजिस्टर में न चढ़ाना, नियमित व्यय को रजिस्टर में चढ़ाकर भी खर्च न करना और प्राप्त नीवी (बचत) के सम्बन्ध में मुकर जाना ये तीन प्रकार का अपहार है। अपहार के द्वारा कोष को हानि पहुँचाने वाले अध्यक्ष को बारहगुना दण्डित करना चाहिए।

2.4.2.3.भ्रष्टाचार निरोधक कार्यवाही (Anti corruption action)

कौटिल्य अर्थशास्त्र में भ्रष्टाचार को रोकने के लिए की जाने वाली राजकीय कार्य प्रक्रिया का भी उल्लेख दिया है। कौटिल्य ने इस कार्य प्रक्रिया को दो कारकों के द्वारा समझाया है। ये दो कारक है-

भ्रष्टाचार के सम्बन्ध में विभागीय कार्य प्रक्रिया-कौटिल्य ने लिखा है कि यदि किसी अध्यक्ष के सम्बन्ध में राजा (सरकार) को यह संदेह हो जाये कि उसने अनुचित उपायों के द्वारा राजकीय धन का अपहरण (चोरी) किया है तो राजा को चाहिए कि उस विभाग के प्रधान निरीक्षक, कोषाध्यक्ष लेखक, कर लेने वाले. कर दिलाने वाले सलाहकारों को अलग-अलग बुलाकर ये जानकारी प्राप्त करेकि उनके अध्यक्ष ने गबन किया है या नहीं। यदि उपरोक्त सभी व्यक्तियों में से कोई भी व्यक्ति झूठ बोले या गलत जानकारी दे तो उसे गबन करने वाले अपराधी की तरह ही दण्डित किया जाए।

भ्रष्टाचार (गबन) सम्बन्धित सूचना का सार्वजनिक प्रसारण -राजा (सरकार) द्वारा अपने सम्पूर्ण राज्य में यह घोषणा करा दी जाये कि अपराधी अध्यक्ष ने जिस जिसके धन का गबन किया है उसकी सूचना राजदरबार में भेज दी जाये। इस प्रकार की सूचना मिलने पर राजा द्वारा प्रजा की उस धन हानि को पूरा किया जाये।

भ्रष्टाचार की शिकायत प्राप्ति होने पर अध्यक्ष पर अभियोग की कार्य प्रक्रिया -

- यदि अध्यक्ष के विरुद्ध एक साथ ही अनेक शिकायतें हों उनमें से वह किसी को भी स्वीकार न करे तो उसका एक भी अपराध साबित होने पर सभी शिकायतों का उस पर अभियोग लगाया जाये।
- यदि अभियुक्त कुछ अपराधों को स्वीकार करता है और कुछ से मुकर जाता है तो उससे पूरे सबूत मागें जाए।
- गबन किये गये बहुत से धन के सम्बन्ध में पूरे सबूत नहीं मिलते, कुछ ही धन के सम्बन्ध में सबूत मिल जाते है, तो उस पर पूरे गबन का अभियोग लगाना चाहिए।
- यदि कोई अध्यक्ष राजकीय धन का गबन करके अदा करने में असमर्थ हो तो वह धन क्रमशः उसके हिस्सेदार, उसके जामिन, उसके अधीनस्थ कर्मचारी, उसके पुत्र एवं भाई. उसकी पत्नी एवं लड़की अथवा उसके नौकर अदा करें।
- राजा जब अपराधी अध्यक्षों का पता लगा ले तो वह उन धनसम्पन्न अधिकारियों की सारी सम्पत्ति को छीन ले और उन्हें उनके उच्चपदों से गिराकर निम्न पदों पर नियुक्त कर दे। जिससे वे भविष्य में गबन न कर सकें एवं गबन को स्वयं ही उगल दे।
- ईमानदार अध्यक्षों का सम्मान -राजा को चाहिए कि वह अपने अध्यक्ष (अधिकारी) के थोड़े अपराध को क्षमा कर दे और यदि वह पूर्वापेक्षया आमदनी में थोड़ी सी भी वृद्धि कर लेता है, तो उसके प्रति प्रसन्नता एवं संतोष

प्रकट करे। इस प्रकार महान उपकार करने वाले अध्यक्ष का कृतज्ञ होकर राजा को सदैव उनका सम्मान करना चाहिए। जो अध्यक्ष राजधन का अपहरण नहीं करते, वरन् न्यायपरायण होकर राजा की समृद्धि में यत्नशील रहते हैं और प्रिय समझ कर राजा का हित करते रहते हैं, ऐसे सच्चरित्र अध्यक्षों को सदा सम्मानपूर्वक उच्च पद पर बनायें रखना चाहिए।

सूचनाकर्ता (Whistle Blowers) की भूमिका -कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में सूचनाकर्ता (Whistle Blower) के बारे में भी वर्णन किया है। जो इस प्रकार से है-

- यदि कोई निष्पक्ष, राजहितेच्छु व्यक्ति किसी अध्यक्ष के गबन की सूचना देता है तो अपराध सिद्ध हो जाने के बाद सरकार को उस अपहरण किये धन का छटा भाग सूचना देने वाले व्यक्ति को दिया जाना चाहिए।
- यदि सूचना देने वाला व्यक्ति राजकर्मचारी हो तो उसे बारहवाँ भाग दिया जाना चाहिए।
- यदि अभियोग बहुत से धन का सिद्ध हुआ है किन्तु मिला कुछ ही धन है तो सूचना देने वाले व्यक्ति को उस प्राप्त धन में से कुछ हिस्सा देना चाहिए।
- यदि अपराध सिद्ध न हुआ हो तो सूचनाकर्ता व्यक्ति को उचित शारीरिक व आर्थिक दण्ड दिया जाना चाहिए इस प्रकार के किसी भी अपराधी को क्षमा नहीं किया जाना चाहिए।।
- अभियोग साबित हो जाने के बाद सूचना देने वाले व्यक्ति अदालत से अपने को बरी करा सकता है किन्तु रिश्वत लेकर यदि वह अपराधी के पक्ष में हो जाता है, और सच्चा बयान नहीं देता है तो उसे प्राण दण्ड दिया जाना चाहिए।

सरकारी विभागों ओर छोटे-बड़े कर्मचारियों की निगरानी एवं दण्ड प्रकियाः-

- समाहर्ता एवं प्रदेष्ठा अधिकारियों का यह कर्त्तव्य है किवे पहले विभागीय अध्यक्षों तथा उनके अधीनस्थ कर्मचारियों पर उनके कार्यों व भ्रष्टाचार प्रवृत्तियों पर निगरानी रखें।
- जो व्यक्ति खानों या कारखानों से हीरे-जवाहरात आदि बहूमूल्य वस्तुओं की चोरी करे उसे प्राणदण्ड दिया जाये।
- जो व्यक्ति वस्त्र या लकड़ी के कारखानों से सारहीन वस्तुओं की चोरी करे तो उन्हें प्रथम साहस दण्ड दिया जाये।
- जो व्यक्ति राजकीय खेतों से एक माष से चार माष कीमत का जीरा, अजवायन आदि वस्तुओं को चुराये उसे 12 पण दण्ड दिया जाये जो आठ माष कीमत तक की वस्तुओं को चुराये उस पर 24 पण दण्ड दिया जाये।

इसी प्रकार बारह माष तक की वस्तु चुराने पर 36 पण एवं सौलह माष तक की वस्तु पर 48 पण दण्ड दिया जाये। यदि 2 पण मूल्य की वस्तु है तो प्रथम साहस, 4 पण मूल्य पर मध्यम साहस एवं पण मूल्य तक की वस्तु चुराने पर उत्तम साहस दण्ड एवं 10 पण मूल्य तक की चुराये तो प्राण दण्ड दिया जाये।

- कौटिल्य ने कहा है कि जो व्यक्ति गोदाम से, दुकान से, कारखानों से, शास्त्रागार से आधा माष कीमत से लेकर दो माष कीमत तक की धातुओं की, ओर उनसे निर्मित वस्तुओं और छीजन की चोरी करे तो उस पर 12 पण दण्ड़ किया जावे।
- जो व्यक्ति कोष, भाण्डागार व अक्षशाला के एक काकणी में लेकर एक माय मूल्य की वस्तु की चोरी करे तो उस पर 24 पण दण्ड किया जावे।
- जो कर्मचारी स्वयं चोरी करे तथा चोरों का बहाना बताये उसे कष्टकर प्राणदण्ड दिया जाये।
- यदि स्वर्णाध्यक्ष खाली दस्तावेज, जाली नोट या जाली मुद्रायेंबनाये तो उसे मध्यम साहस दण्ड, गांव का मुखिया करे तो उत्तम साहस दण्ड एवं समाहर्ता करे तो प्राणदण्ड दिया जाये या अपराध के अनुसार ही यथोचित दण्ड दिया जाये।
- यदि न्यायाधीश (धर्मस्थ) अदालत में किसी अभियुक्त को डराये, धमकायें, घुड़के या बाहर निकाल दे या रिश्वत ले तो उसे प्रथम साहस दण्ड दिया जाये। न्यायाधीश गाली दे, तो उसे दुगुना दण्ड दिया जाये। यदि न्यायाधीश, साक्षी से पूछने योग्य बातों को न पूछकर न पूछी जाने योग्य बातों को पूछे या बिना ही उत्तर पाये बात को छोड़ दे या गवाह को सिखाये, याद दिलाये या उसकी अधूरी बात को स्वयं ही पूरी कर दे तो उसे मध्यम दण्ड दिया जाये। इसी प्रकार वह किसी विचारणीय वस्तु के सम्बन्ध में उपयोगी बातों को न पूछकर अनुपयोगी बातें पूछे, यदि बिना गवाह के किसी मामले का निर्णय दे दें. यदि सच्चे साक्षी को कपट की बातों में डालकर झूठा बनादे, यदि व्यर्थ की बातों में साक्षी को उलझाये रखने के बाद छोड़ दें. साक्षी के कथन के क्रम को उलट-पुलट कर लिखें, यदि बीच-बीच में साक्षियों की सहायता करें, यदि निर्णित मामले को फिर से जिरह में रखें तो ऐसे न्यायाधीश को उत्तम साहस दण्ड दिया जाये। दुबारा यहीं अपराध करे तो उसे दुगुना दण्ड दिया जाये एवं पदच्युत कर दिया जाये।
- मुहर्रिर (लेखक) यदि बयानों को सही-सही न लिखे, न कही हुई बात को लिखे बुरी बात को अच्छी एवं अच्छी बात को बुरा लिखे या बात का अभिप्राय ही बदल कर लिखे तो उसे प्रथम साहस दण्ड या अपराध के अनुसार यथोचित दण्ड दिया जाये।

- धर्मस्थ या अन्य न्यायाधीश किसी निरपराधी को स्वर्ण दण्ड दे तो उन पर उसका दुगुना दण्ड दिया जाए। इसी प्रकार यदि वे किसी निरपराधी को शारीरिक दण्ड दे तो उनको दुगुना शारीरिक दण्ड दिया जाये। यदि वे दण्ड में भी कमीबेशी करें, तो उनसे आठ गुना दण्ड वसूल किया जाये। यदि वे शारीरिक दण्ड की अपेक्षा अर्थदण्ड करे तो उनमें उसका दुगुना अर्थदण्ड वसूल किया जाये। जो धर्मस्थ या प्रदेष्ठा न्यायोचित धन को नष्ट करे तथा अन्यायपूर्ण धन का संग्रह करें उन्हें धनराशि का आठ गुना दण्ड दिया जाये।
- न्यायाधीश द्वारा हवालात में बंद कैदी को यदि जेल का कर्मचारी घूस लेकर घूमने-फिरने पानी पीने, सोने-बैठने, खाने-पीने इत्यादि की स्वतंत्रता दे या दिलाये तो उत्तरोत्तर उस पर तीन पण से अधिक का दण्ड किया जाए। यदि कोई राजपुरूष किसी अपराधी को हवालात से छोड़ दे या उसके लिए कहे, उसे मध्यम साहस दण्ड किया जाए और साथ ही अपराधी को जितना देना था उसका भुगतान भी उसी राजपुरूष से लिया जाये। यदि कोई प्रदेष्ठा ऐसा करे तो उसकी सारी सम्पति जप्त कर ली जाये और उसको प्राण्दण्ड दिया जाए।
- जेलर की आज्ञा के बगैर यदि कैदी बाहर निकले तो उस पर 24 पण दण्ड और ऐसा कराने वाले व्यक्ति पर 48 पण दण्ड की व्यवस्था थी। जेल कार्मिक द्वारा कैदी की जगह बदलने, उसके खाने-पीने में अव्यवस्था करने पर 96 पण दण्ड तथा जो कैदी को कोडे मारे या रिश्वत दिलावे, उसको मध्यम साहस दण्ड और जो कैदी की हत्या करे उस पर 1000 पण दण्ड की व्यवस्था थी।
- यदि कोई कार्मिक जेलखाने के तोडे बगैर ही कैदी को बाहर निकाल दे तो उसे मध्यम साहस दण्ड एवं यदि जेल तोड़ कर निकालें तो प्राण दण्ड दिया जाये। यदि प्रदेष्ठा ऐसा करे तो उसकी सारी सम्पत्ति जब्त कर उसे प्राणदण्ड दिया जाये।

कौटिल्य का मानना था कि राजा को चाहिये कि वह पहले अपने राजकर्मचारियोंको दण्ड से शुद्ध करे। फिर वे विशुद्ध हुए, राजकर्मचारी दण्ड व्यवस्था के द्वारा नगर तथा प्रदेश की जनता को सही राह पर लाये। तभी प्रशासन में से भ्रष्टाचार को खत्म किया जा सकता है तथा राज्य में सुशासन की स्थापना की जा सकती है।

2.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(क). योग दर्शन द्वारा बताए गए पांच यमों के नाम लिखिए।

(ख)."बुराई का प्रतिकार मत करो बल्कि विरोधी की समुचित चिंतन में सहायता करो"यह कथन किसने कहा **?**

(ग). कौटिल्य अर्थशास्त्र में भ्रष्टाचार के कितने प्रकार बताये हैं **?**

(घ). जिस प्रकार पानी में रहने वाली मछलियां पानी पीती नहीं दिखाई देती हैं उसी प्रकार वित्तीय कार्यों में नियुक्त

कर्मचारी भी धन का अपहरण करते हुए नहीं जाने जा सकते है यह कथन किसका है **?**

2.6.सारांश (Summary)

महात्मा गांधी और कौटिल्य (चाणक्य) के नैतिक दर्शन में विचारों का एक विशेष अंतर देखने को मिलता है, क्योंकि दोनों की जीवन परिस्थितियाँ, समय और उद्देश्यों में भिन्नता थी। फिर भी दोनों ही महान विचारकों का नैतिक दर्शन व्यक्तिगत, सामाजिक और राजनीतिक जीवन के लिए एक मार्गदर्शक है।महात्मा गांधी के अनुसार नैतिकता का आधार सत्य, अहिंसा और प्रेम है। उनके विचारों में नैतिकता का संबंध आत्मा की शुद्धता और कर्तव्यपालन से था। कौटिल्य के अनुसार नैतिकता का आधार व्यावहारिकता और कर्तव्य पालन है। उनके लिए नैतिकता का अर्थ था ऐसा आचरण जिससे समाज, राज्य और व्यक्ति का कल्याण हो। गांधी जी ने सत्य को ईश्वर के समान माना। उनके अनुसार सत्य की साधना ही जीवन का परम उद्देश्य है। "सत्य के बिना जीवन अधूरा है।"कौटिल्य के लिए सत्य आवश्यक था, लेकिन उन्होंने इसे व्यावहारिक दृष्टिकोण से देखा। राज्य संचालन और राजनीति में उन्होंने सत्य को राजनीतिक कौशल के अनुसार प्रयोग करने की अनुमति दी।महात्मा गांधी का नैतिक दर्शन पूरी तरह से अहिंसा पर आधारित था। उनके अनुसार, किसी भी समस्या का समाधान प्रेम और अहिंसा से किया जा सकता है।कौटिल्य ने अहिंसा के विपरीत बल और शक्ति का प्रयोग आवश्यक बताया। उनके अनुसार राज्य संचालन और राष्ट्र की सुरक्षा के लिए शक्ति का उपयोग नैतिक रूप से उचित है।महात्मा गांधी का मानना था कि साधन पवित्र होने चाहिए, तभी साध्य (लक्ष्य) पवित्र हो सकता है। गलत साधनों से प्राप्त किया गया लक्ष्य नैतिक रूप से सही नहीं हो सकता।कौटिल्य का मानना था कि लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधनों की पवित्रता पर हमेशा जोर देना आवश्यक नहीं है। उनका दृष्टिकोण "साम, दाम, दंड, भेद" पर आधारित था। राज्य और समाज के हित में कुछ कठोर कदम भी नैतिक माने गए।गांधी जी ने आत्मसंयम को नैतिक जीवन का सबसे महत्वपूर्ण पहलू माना। व्यक्ति को अपनी इच्छाओं और वासनाओं पर नियंत्रण रखना चाहिए।कौटिल्य ने भी आत्मसंयम पर बल दिया, लेकिन इसे व्यावहारिक जीवन का हिस्सा माना। उनके अनुसार, आत्मसंयम व्यक्ति को सफल और प्रभावी नेता बनने के लिए आवश्यक है।गांधी जी के अनुसार धर्म का अर्थ सत्य, अहिंसा और प्रेम है। उन्होंने धर्म को व्यक्तिगत और सामाजिक नैतिकता से जोड़ा।कौटिल्य ने धर्म को राज्य के संचालन का एक साधन माना। धर्म का पालन तब तक आवश्यक है जब तक वह समाज और राज्य के हित में हो।गांधी जी का नैतिक दर्शन समाज के कमजोर वर्गों और गरीबों के कल्याण पर केंद्रित था। उनका आदर्श "सर्वोदय" (सभी का उत्थान) था।कौटिल्य का नैतिक दर्शन राष्ट्र की सुरक्षा, समृद्धि और राज्य की स्थिरता पर आधारित था। उनका उद्देश्य एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना

करना था।गांधी जी का नैतिक दर्शन आदर्शवादी था। उन्होंने नैतिकता को किसी भी परिस्थिति में सर्वोच्च स्थान पर रखा।कौटिल्य का नैतिक दर्शन यथार्थवादी था। उन्होंने राजनीति और समाज में नैतिकता को व्यावहारिक जरूरतों के अनुसार अपनाने की बात कही।दोनों विचारक अपनी-अपनी परिस्थितियों में प्रासंगिक थे। गांधी जी का नैतिक दर्शन व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में आदर्श प्रस्तुत करता है, जबकि कौटिल्य का दर्शन राजनीति और शासन व्यवस्था के लिए एक व्यावहारिक मार्गदर्शन देता है।

2.7.सूचक शब्द (Key Words)

- **नैतिक सिद्धांत:-**नैतिक सिद्धांत, सही और गलत के बारे में विचार करने और लोगों के व्यवहार को लेकर नियम तय करने की एक प्रणाली है।
- **भ्रष्टाचार:-**भ्रष्टाचार का मतलब है, किसी व्यक्ति या संगठन द्वारा सार्वजनिक पद या शक्ति का दुरुपयोग करना, ताकि किसी के व्यक्तिगत लाभ के लिए अवैध लाभ या शक्ति का इस्तेमाल किया जा सके।
- **अर्थशास्त्र:-**अर्थशास्त्र, सामाजिक विज्ञान की वह शाखा है जिसमें वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन, वितरण, विनिमय, और उपभोग का अध्ययन किया जाता है.

2.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- महात्मा गाँधी के नैतिक विचारोंका विस्तार से वर्णन कीजिए।
- महात्मा गाँधी के सत्य सम्बन्धी विचारों का वर्णन कीजिए।
- महात्मा गाँधी के सत्यग्रह सम्बन्धी विचारों का वर्णन कीजिए।
- कौटिल्य के भ्रष्टाचार सम्बन्धी विचारों का वर्णन कीजिए।

2.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(क). अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचर्य

(ख). अचार्य विनोबा

(ग). कौटिल्य ने चालीस प्रकार बताये हैं

(घ). कौटिल्य

2.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

- अरोड़ा, आर. के. (**2008)** शासन में नैतिकता: नवीन मुद्दे और उपकरण। रावत: जयपुर
- अरोड़ा, रमेश के. (संपादक) (**2014)** लोक सेवा में नैतिकता, सत्यनिष्ठा और मूल्य। न्यू एज इंटरनेशनल: नई दिल्ली
- सी. भार्गव, आर. (**2006)** भारतीय संविधान की राजनीति और नैतिकता। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस: नई दिल्ली
- डी. चक्रवर्ती, विद्युत (**2016)** भारत में शासन में नैतिकता। रूटलेज: नई दिल्ली
- ई. चतुर्वेदी, टी. एन. (संपादक) (**1996)** सार्वजनिक जीवन में नैतिकता। आईआईपीए: नई दिल्ली
- एफ. गांधी, महाथिरिम (**2009)** हिंद स्वराज। राजपाल एंड संस: दिल्ली
- जी. गोडबोले, एम. (**2003)** सार्वजनिक जवाबदेही और पारदर्शिता: सुशासन के आवश्यक तत्व। ओरिएंट लॉन्गमैन: नई दिल्ली
- एच. हूजा, आर. (**2008)** भ्रष्टाचार, नैतिकता और जवाबदेही: एक प्रशासक द्वारा निबंध। आईआईपीए: नई दिल्ली
- आई. माथुर, बी. पी. (**2014)** शासन के लिए नैतिकता: सार्वजनिक सेवाओं का पुनर्निर्माण। रूटलेज: नई दिल्ली

Subject : Public Administration -Administrative ethics in governance	
Course Code : PUBA 302	**Author :** Dr. Parveen sharma
Lesson No. : 3	**Vetter :**
सुकरात (नैतिक सिद्धांत), और इमैनुअल कांट का कर्तव्य सिद्धांत)Socrates (Moral Theory) and Immanuel Kant (Deontological theory)	

अध्याय की सरंचना

3.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

3.2.परिचय (Introduction)

3.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

3.3.1. शुभ संकल्प का स्वरूप और महत्त्व (The nature and importance of goodwill)

3.3.2. कर्तव्य का स्वरूप और महत्व (Nature and significance of duty)

3.3.3. मुख्य नैतिक नियम (The main ethical rule)

3.3.4. नैतिकता की आवश्यक मान्यताएं (Essential principles of morality)

3.4. पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

3.4.1.सुकरात का नैतिक दर्शन (Moral philosophy of Socrates)

3.4.2.सुकरात का प्रमुख नैतिक सिद्धांत (Socrates' main ethical principle)

3.4.3.सुकरात कुछ मुख्य शिक्षाएँ(main teachings of Socrates

3.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

3.6.सारांश (Summary)

3.7.सूचक शब्द (Key Words)

3.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

3.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

3.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

3.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय का अध्ययन करने के बाद-

- विद्यार्थी कान्ट के नैतिक विचारों को जान पाएंगे;
- विद्यार्थी कान्ट के कर्तव्य सिद्धांत को जान पाएंगे;
- विद्यार्थी सुकरात के नैतिक विचारों को जान पाएंगे;

3.2.परिचय (Introduction)

महान जर्मन दार्शनिक इमैन्युअल कान्ट (1724-1804) के नैतिक सिद्धांत को निरपेक्ष आदेश का सिद्धांत' अथवा 'कर्त्वयमूलक सिद्धांत' कहा जाता है, क्योंकि उनके मतानुसार किसी कर्म का नैतिक मूल्य उसके परिणामो द्वारा नहीं अपितु उस कर्म के मूल में निहित मनुष्य की विशुद्ध कर्तव्यचेतना द्वारा ही निर्धारित होता है। इमैन्युअल कान्ट यूरोप के आधुनिक युग के बहुत महत्त्पूवर्ण दार्शनिक माने जाते हैं। उनका जन्म जर्मनी के एक नगर कोनिग्जबर्ग में हुआ था और उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन इसी नगर के आस पास व्यतीत किया। अत्यंत प्रतिभासम्पन्न दार्शनिक होने के साथ-साथ वे अपने समय के प्रख्यात प्राध्यापक भी थे। उनका ज्ञान केवल दर्शन के क्षेत्र तक ही सीमित नहीं था; तत्कालीन पदार्थ विज्ञान की भी वे पर्याप्त जानकारी रखते थे। इसके अतिरिक्त भूगोल तथा खगोलशास्त्र में भी उनकी विशेष रुचि थी। 1755 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'जनरल नैचरल हिस्ट्री एण्ड थ्योरी ऑफ दि हैवन्ज' में उन्होंने नक्षत्रों की उत्पत्ति की व्याख्या करने का प्रयास किया है। कान्ट का जीवन बहुत सरल तथा नियमित था। कहा जाता है कि वे अपने जीवन में समयानुसार कार्य करने की आवश्यकता को विशेष महत्त्व देते थे और अपना प्रत्येक कार्य सदैव एक निश्चित समय पर करते थे। वे जीवन में भावनाओं अथवा इच्छाओं की अपेक्षा बुद्धि को कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण मानते थे और, उनकी इस मान्यता का उनके नैतिक दर्शन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा है। मानव जीवन में धर्म के महत्त्व को स्वीकार करते हुए भो उन्होंने उसके आडम्बरपूर्ण बाह्य पक्ष का कभी समर्थन नहीं किया। यही कारण है कि वे ऐसे कर्म को नैतिक नहीं मानते जो किसी देवी शक्ति के भय से प्रेरित होकर किया

गया है। इस प्रकार मानवीय कर्मों की नैतिकता के सम्बन्ध में कान्ट का मत तत्कालीन धर्मपरायण दार्शनिकों के मत से बहुत भिन्न है। समय-समय पर प्रकाशित अपनी अनेक पुस्तकों में कान्ट ने दर्शन की लगभग सभी मूल समस्याओं का बहुत गम्भीर विवेचन किया है। उदाहरणार्थ 1781 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'क्रिटीक ऑफ प्योर रीजन' में उन्होंने ज्ञानमीमांसा सम्बन्धी विषयों पर विस्तारपूर्वक विचार किया है। इसी प्रकार 1790 में प्रकाशित उनकी पुस्तक 'क्रिटीक ऑफ जजमेंट' का मुख्य उद्देश्य सौंदर्यशास्त्र की मूल समस्याओं का विवेचन करना ही है। इन दो प्रसिद्ध पुस्तकों के अतिरिक्त कान्ट ने 'क्रिटीक आंफ प्रैक्टिकल रीजन', 'दि फन्डामेंटल प्रिसिपल्ज ग्रॉफ दि मैटाफिजिक्स ऑफ मारल्स', 'ग्राउण्डवर्क ऑफदि मैटाफिजिक ऑफ मारल्स', 'फाउन्डेशन्स ग्रॉफ दि मैटाफिजिक ऑफ मारल्स' आदि पुस्तकों में नैतिक दर्शन की मूल समस्याओं का विस्तृत विवेचन किया है।। इन सभी पुस्तकों में कान्ट ने जिस नैतिक सिद्धांत का प्रतिपादन किया है उसका मूल आधार 'निरपेक्ष आदेश का नियम' है । उनके सम्पूर्ण नैतिक दर्शन की आधारभूत मान्यता यह है कि नैतिकता मनुष्य की इच्छाओं, भावनाओं अथवा प्रवृत्तियों पर आधारित न होकर उसकी विशुद्ध कर्तव्य चेतना पर ही आधारित होती है और मानवीय कर्मों के परिणामों का उनके नैतिक मूल्य के निर्धारण से कोई सम्बंध नहीं है। कान्ट के मतानुसार वही नियम वास्तव में नैतिक नियम है जो सार्वभौमिक हो- अर्थात् जो समान परिस्थितियों में सभी मनुष्यों पर समान रूप से लागू हो सके । ऐसे सार्वभौमिक नैतिक नियम का उद्गम मनुष्य की परिवर्तनशील भावनाएं, प्रवृत्तिया अथवा इच्छाएं नहीं अपितु केवल बुद्धि ही हो सकती है जो प्रत्येक सामान्य मनुष्य में विद्यमान रहती है और जो उसे अन्य सभी प्राणियों से पृथक् करती है। दूसरे शब्दों में, नैतिकता का मूल आधार ऐन्द्रिक अनुभव न होकर केवल बुद्धि ही है जो नैतिक नियम को सार्वभौमिक रूप प्रदान करती है। किसी भी परिस्थिति में इस सार्वभौमिक नैतिक नियम का अपवाद सम्भव नहीं है। इस प्रकार कान्ट ने मानव-जीवन में बुद्धि को सर्वाधिक महत्त्व दिया है और उनके नैतिक दर्शन में उस कठोर बुद्धिवाद का चरम विकास हुआ है।

3.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

3.3.1. शुभ संकल्प का स्वरूप और महत्त्व (The nature and importance of goodwill)

अपने नैतिक दर्शन में कान्ट ने सर्वप्रथम इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर विचार किया है कि ऐसी कौन-सी वस्तु है जो अपने आप में शुभ है और जिसका शुभत्व देश , काल, परिस्थितियों तथा मनुष्य की भावनाओं अथवा इच्छाओं पर निर्भर नहीं है-अर्थात् जो सर्वत्र एवं सर्वदा निरपेक्ष रूप से शुभ है। इस प्रश्न के उत्तर में उनका कथन है कि केवल 'शुभ-संकल्प' ही ऐसा निरपेक्ष तथा अप्रतिबंधित शुभ है।उनके मतानुसार 'संकल्प' मूलतः बौद्धिक होने के कारण संवेग,

भावना, इच्छा, प्रवृत्ति आदि से पूर्णतया भिन्न है। बुद्धि ही संकल्प का उद्गम है, अतः संकल्प वह बुद्धिमूलक तत्त्व है जो मनुष्य को कर्म करने के लिए प्रेरित करता है। यहां संकल्प का अर्थ मनुष्य की क्षणिक इच्छामात्र नहीं है, अपितु किसी कर्म को करने का उसका दृढ़ निश्चय है, जिसके कारण वह उस कर्म को करने के लिए यथासंभव सभी साधन एकत्र करने का प्रयास करता है। इस प्रकार कान्ट ने 'शुभ संकल्प' के अनुसार कर्म करने के लिए यथासंभव समस्त साधनों का उपयोग करना भी बहुत आवश्यक माना है। कान्ट के मतानुसार विशुद्ध कर्त्तव्य की चेतना पर आधारित संकल्प ही नैतिक अथवा शुभ संकल्प है। इस प्रकार बौद्धिक शक्ति होने के कारण संकल्प इच्छा से भिन्न है जो मूलतः भावनात्मक होती है। कान्ट ने 'शुभ संकल्प' की कोई स्पष्ट और निश्चित परिभाषा नहीं दी। फिर भी यह अवश्य कहा जा सकता है कि वे विशुद्ध कर्तव्यचेतना द्वारा प्रेरित संकल्प को ही 'नैतिक' अथवा 'शुभ' संकल्प मानते हैं। दूसरे शब्दों में, जब मनुष्य का संकल्प केवल विशुद्ध कर्तव्य चेतना पर आधारित होता है तो कान्ट के विचार में उसे नैतिक अथवा शुभ संकल्प कहा जा सकता है। ऐसे शुभ संकल्प को ही कान्ट अप्रतिबन्धित तथा निरपेक्ष शुभ मानते हैं।

कान्ट का मत है कि यह शुभ संकल्प ही सर्वत्र एवं सवंदा अपने-आप में शुभ है और इसका शुभत्व देश, काल, परिस्थितियों तथा इससे उत्पन्न होने वाले परिणामों पर निर्भर नहीं है। इस शुभ संकल्प के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु को कान्ट स्वतःसाध्य शुभ तथा निरपेक्ष शुभ नहीं मानते। उन्होंने स्पष्ट कहा है कि "इस विश्व में अथवा इससे बाहर शुभ संकल्प के अतिरिक्त ऐसी किसी अन्य वस्तु की कल्पना करना ही नितांत असम्भव है जो अपने-आप में तथा निरपेक्ष रूप से शुभ हो।" इस प्रकार स्पष्ट है कि कान्ट शुभ संकल्प को ही एकमात्र स्वतःसाध्य शुभ तथा निरपेक्ष शुभ मानते हैं।

कान्ट केवल शुभ संकल्प को ही शुभ नहीं मानते; वे यह स्वीकार करते हैं कि विश्व में शुभ संकल्प के अतिरिक्त अन्य वस्तुएं भी शुभ है। उदाहरणार्थ उनका कथन है कि ज्ञान, तर्कशक्ति, प्रतिभा, धैर्य, साहस, आत्मसंयम, सुख, स्वास्थ्य, सम्मान, धन, यश आदि सभी निश्चय ही कुछ परिस्थितियों में शुभ हैं। कान्ट मनुष्य के जीवन में इन सब की वांछनीयता को पूर्णतया स्वीकार करते हैं और इन्हें सामान्य परिस्थितियों में शुभ भी मानते हैं। परन्तु उनका यह निश्चित मत है कि ये शुभ संकल्प की भांति स्वतःसाध्य शुभ तथा निरपेक्ष शुभ नहीं हैं- इनका शुभत्व देश, काल, परिस्थितियों और इनके परिणामों पर ही निर्भर है। इसका अभिप्राय यही है कि ऊपर जिन वस्तुओं को शुभ कहा गया है वे सर्वत्र और सर्वदा शुभ न होकर केवल सीमित रूप में ही शुभ हैं। इन सब का प्रयोग अशुभ उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए भी किया जा सकता है; उदाहरणार्थ स्वस्थ, साहसी और बल- वान व्यक्ति अपने स्वास्थ्य, साहस तथा

बल का उपयोग दूसरो पर अत्याचार करने के लिए कर सकता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति अपने ज्ञान और धन का दूसरों के न्यायसंगत अधिकारों का हनन करने के लिए उपयोग कर सकता है। स्पष्ट है कि उक्त अशुभ उद्देश्यों के कारण स्वास्थ्य, साहस, बल, बुद्धि, सत्ता आदि को अशुभ ही माना जाएगा। इसी कारण कान्ट का कथन है कि शुभ संकल्प के अतिरिक्त विश्व में अन्य सभी शुभ वस्तुओं का शुभत्व सीमित और सापेक्ष ही है। संक्षेप में कान्ट के मतानुसार शुभ संकल्प के अतिरिक्त अन्य सभी शुभ वस्तुएं तभी तक शुभ है जब तक उनका प्रयोग नैतिक नियम के विरुद्ध तथा अशुभ उद्दे श्यों की प्राप्ति के लिए नहीं किया जाता । केवल शुभ संकल्प को स्वतःसाध्य शुभ तथा निरपेक्ष शुभ मानने के कारण कान्ट ने उसे नैतिक दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्व दिया है। उनका विचार है कि शुभ संकल्प ही अन्य सभी वस्तुओं के शुभत्व का मूल आधार है; इसके बिन कोई भी वस्तु शुभ नहीं हो सकती। शुभ संकल्प से युक्त होने पर ही कोई वस्तु वास्तव में शुभ मानी जा सकती है। इसी कारण कान्ट ने शुभ संकल्प को नैतिक दृष्टि से उच्चतम शुभ माना है। उनका मत है कि उसी कर्म का नैतिक मूल्य है जिसके मूल में मनुष्य का शुभ संकल्प निहित है। उस कर्म के परिणामों का इस संकल्प के शुभत्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसका अर्थ यह है कि सदैव अपनेआप में शुभ होने के कारण शुभ संकल्प पूर्णतः परिणामनिरपेक्ष है उसन मातुभत्व उसके परिणामों द्वारा निर्धारित नहीं होता। कान्ट का कथन है कि किसी कर्म के परिणामों को हम नियन्त्रित नहीं कर सकते, अतः शुभ संकल्प द्वारा प्रेरित प्रत्येक कर्म शुभ है - फिर चाहे उसके परिणाम कुछ भी हों। शुभ संकल्प की इसी परिणामनिरपेक्षता को स्पष्ट करते हुए उन्होंने लिखा है कि "शुभ संकल्प अपने परिणामों के कारण शुभ नहीं है अपितु वह अपने आप में तुम है। यदि दुर्भाग्य अथवा प्राकृतिक कठिनाई के कारण इस संकल्प के कोई शुभ परिणाम नहीं निकलते और यदि अधिकतम प्रयास कर के भी यह संकल्प कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाता तो भी यह एक बहुमूल्य रत्न की भांति अपने ही प्रकाश से स्वयं आलोकित होगा और अपने आप में इसका महत्त्व पूर्ण रुपेण बना रहेगा। इस प्रकार कान्ट के मतानुसार शुभ संकल्प अपनी उपयोगिता के कारण शुभ न होकर स्वयं अपने आप में शुभ है। इसी कारण इसे निरपेक्ष और उच्चतम शुभ माना गया है। परन्तु यहां यह बता देना आवश्यक है कि कान्ट शुभ संकल्प को उच्चतम शुभ मानते हुए भी उसे पूर्ण शुभ नहीं मानते। उनका कथन है कि पूर्ण शुभ में शुभ संकल्प के साथ-साथ आनन्द का भी समावेश होता है।

3.3.2. कर्तव्य का स्वरूप और महत्व (Nature and significance of duty)

कान्ट के मतानुसार केवल कर्तव्य की चेतना द्वारा प्रेरित संकल्प ही नैतिक या शुभ सकल्प स्पष्ट है कि शुभ संकल्प का कर्तव्य के साथ अनिवार्य सम्बंध है। इससे कान्ट का विचार है कि मनुष्य सदैव शुभ संकल्प के अनुसार कार्य

नहीं कर पाता, क्योंकि उसकी भावनाएं, प्रवृत्तियां तथा इच्छाएं इसमें बाधक सिद्ध होती हैं। इने प्रवृत्तियों, भावनाओं तथा इच्छाओं के कारण ही उसके आचरण में शुभ संकल्प की अभिव्यक्ति स्वतः नहीं हो पाती, प्रत्युत इसका आधार कर्तव्य की चेतना होती है। कर्तव्य की चेतना में सभी प्रकार की बाधाओं पर विश्य प्राप्त करने का अथवा बाध्यता का तत्त्व निहित रहता है। कान्ट का कथन है कि यदि मनुष्य पूर्णतः बौद्धिक प्राणी होता और उसकी इच्छाएं, भावनाएं तथा प्रवृत्तियां उसके शुभ संकल्प की अभिव्यक्ति में बाधा न डालतीं तो उसके लिए कर्तव्य तथा उसकी बाध्यता की कोई आवश्यकता न होती। ऐसे प्राणी का संकल्प पूर्णरूपेण शुभ होता और वह प्रयास किये बिना ही सदैव शुभ कर्म करता। इस प्रकार के पूर्णतया बौद्धिक प्राणी के संकल्प को कान्ट ने 'पवित्र संकल्प की संज्ञा दी है। शुभ संकल्प के विपरीत इस पवित्र संकल्प को किसी प्रकार की बाधाओं का सामना नहीं करना पड़ता, अतः शुभ कर्मों में ही इसकी स्वतः अभिव्यक्ति होती है। परन्तु कान्ट का विचार है कि ऐसा पवित्र संकल्प केवल ईश्वर में ही हो सकता है, मनुष्य में नहीं। भावनाओं, इच्छाओं तथा प्रवृत्तियों से प्रभावित होने के कारण मनुष्य पूर्णतः वौद्धिक प्राणी नहीं है, । कान्ट के मतानुसार इनमें से केवल कर्म मनुष्य किसी तात्कालिक संवेग, इच्छा, प्रवृत्ति अथवा अपने कल्याण की इच्छा से प्रेरित होकर करता है उनका नैतिक दृष्टि से कोई महत्व नहीं है। कान्ट ने अपने इस मत को अनेक उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया है। यदि कोई व्यापारी अपने सभी ग्राहकों से केवल इसलिए उचित दाम लेता है कि इससे उसके व्यापार में वृद्धि होतो उसका यह कर्म कर्तव्य के अनुरूप होते हुए भी नैतिक दृष्टि से शुभ नहीं है अर्थात् उसके इस कर्म का कोई नैतिक मूल्य नहीं है, क्योंकि यह केवल उसके अपने लाभ के उद्देश्य से प्रेरित है। आत्मकल्याण के उद्देश्य से प्रेरित मनुष्य के अन्य सभी कर्मों के सम्बंध में भी यही कहा जा सकता है। आत्मकल्याण की कामना से प्रेरित कर्मों की भांति विशिष्ट संवेगों, इच्छाओं या प्रवृत्तियों से प्रेरित कर्मों को भी कान्ट नैतिक दृष्टि से शुभ नहीं मानते। प्रायः सभी दार्शनिक तथा सामान्य व्यक्ति यह स्वीकार करते हैं कि क्रोध, घृणा, ईर्ष्या, प्रतिशोध आदि विध्वसात्मक संवेगों से प्रेरित कर्म केवल अनैतिक ही नहीं अपितु कर्ता के आनंद एवं कल्याण के लिए भी घातक हैं। कान्ट भी इसका समर्थन करते हैं, किंतु उनका मत है कि दया, सहानुभूति, उदारता आदि रचनात्मक संवेगों द्वारा प्रेरित कमों का भी वास्तव में कोई नैतिक मूल्य नहीं है। वे यह मानते हैं कि इन रचनात्मक संवेगों द्वारा प्रेरित कर्म निश्चय ही प्रशंसनीय है, किंतु उनका विचार है कि मूलतः सम्वेगात्मक होने के कारण ये कर्म भी नैतिक दृष्टि से शुभ नहीं हैं। उदाहरणार्थ यदि कोई व्यक्ति केवल दया अथवा सहानुभूति से प्रेरित होकर किसी दुखी प्राणी की सहायता करता है तो कान्ट के मतानुसार उसका यह कर्म प्रशंसनीय अवश्य है, कितु इसका कोई नैतिक मूल्य नहीं है। यदि वह केवल कर्तव्य की चेतना से प्रेरित होकर पीड़ित प्राणी की सहायता करता है तो कान्ट के विचार में उसका यह कर्म निश्चिय ही नैतिक दृष्टि से शुभ है। अपने इसी मत को एक अन्य उदाहरण द्वारा स्पष्ट

करते हुए कहते कहते हैं कि जीवन-रक्षा की स्वाभाविक इच्छा से प्रेरित होकर अपने जीवन को सुरक्षित रखने का प्रयास करना कर्तव्य के अनुरूप होते हुए भी नैतिक दृष्टि से शुभ नहीं है; इसके विपरीत अत्यधिक निराशा तथा दुःख से ग्रस्त होने पर भी जीवन-रक्षा को अपना कर्तव्य समझ कर सभी परिस्थितियों में अपने जीवन को मुरक्षित रखने का प्रयास करना नैतिक दृष्टि से शुभ है। इन सभी उदाहरणों से पूर्णतया स्पष्ट है कि कान्ट के विचार में मनुष्य के उसी कर्म का नैतिक ल्पि है जो वह केवल अपना कर्तव्य पालन करने की चेतना से प्रेरित होकर करता है। यहां यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि यदि मनुष्य का कोई कर्म कर्तव्य पालन की चेतना के साथ-साथ दया, सहानुभूति, उदारता आदि संवेगों से भी प्रेरित होता है तो क्या वह काम्ट के मतानुसार नैतिक दृष्टि से शुभ है। इस प्रश्न के उत्तर में कान्ट का कथन है कि यदि यह कर्म केवल कर्तव्य- पालन की चेतना द्वारा ही निर्धारित हुआ है तो इसके साथ अन्य संवेगों के होते हुए भी इसका नैतिक मूल्य कम नहीं होता। ऐसी स्थिति में यह कहना - जैसा कि कुछ आलोचकों ने कहा है- अनुचित है कि कान्ट ऐसे प्रत्येक कर्म को अनैतिक मानते हैं जो कर्तव्य पालन की चेतना के साथ-साथ किसी अन्य संवेग द्वारा भी प्रेरित हुवा है। वस्तुतः कान्ट का मत यह है कि यदि कोई कर्म कर्तव्य का पालन करने की चेतना से ही प्रेरित हुआ है तो उसके साथ किसी अन्य संवेग के उपस्थित होने अथवा न होने से उसके नैतिक मूल्य में कोई अन्तर नहीं पड़ता। वे मनुष्य के जीवन में दया, सहानुभूति, उदारता आदि संवेगों के महत्त्व को स्वीकार करते हैं, क्योंकि उनके विचार में ये संवेग हमारे कर्तव्य पालन में सहायक हो सकते हैं। परन्तु केवल इन्हीं संवेगों द्वारा प्रेरित कर्म प्रशंसनीय होते हुए भी उनके मतानुसार नैतिक दृष्टि से शुभ नहीं हैं, क्योंकि इनके मूल में कर्तव्य-पालन करने की चेतना का अभाव है जो वास्तव में नैतिकता का एकमात्र मूल प्राधार है। यदि कोई व्यक्ति किसी संवेग, इच्छा अथवा प्रवृत्ति से प्रेरित होकर अपने कर्तव्य का पालन करता है तो कुछ समय पश्चात् इस संवेग, इच्छा अथवा प्रवृत्ति के न रहने पर वह कर्तव्य की उपेक्षा भी कर सकता है। इसी कारण कान्ट ने कर्मों के नैतिक मूल्य को संवेग, इच्छा अथवा प्रवृत्ति पर आधारित न मानकर केवल कर्तव्य-चेतना पर ही आधारित माना है।

किसी कर्म के नंतिक मूल्य की दृष्टि से कान्ट उसके परिणामों को कोई महत्त्व नहीं देते। परिणाममूलक नैतिक सिद्धांतों के सभी समर्थकों के विरुद्ध उनका कथन है कि इच्छित अथवा वास्त विक परिणामों के बाधार पर किसी कर्म का नंतिक मूल्य निर्धारित नहीं किया जा सकता। यदि कर्मों के नैतिक मूल्य को उनसे उत्पन्न होने वाले कुछ परिणामों पर ही निर्भर मान लिया जाय तो इन परिणामों को उत्पन्न करने की इच्छा से प्रेरित प्रत्येक कर्म को नैतिक दृष्टि से शुभ मानना पडेगा, चाहे वह कर्तव्य पालन के विचार से प्रेरित हो या नहीं। किंतु यह स्थिति कान्ट को मान्य नहीं है। इसके अतिरिक्त परिणाम परिस्थितियों पर निर्भर होता है और एक कर्म का परिणाम विभिन्न परिस्थितियों

में एक ही होना आवश्यक नहीं है इस लिए यदि परिणामों में बाधार पर ही कर्मों का मूल्यांकन किया जाय, तो किसी कर्म को जो हमारा कर्तव्य है, करने के आदेश का रूप यह होगा, कि यदि अमुक परिणाम हो तो इसे करो। दूसरे शब्दों में आदेश सापेक्ष होगा, और इस प्रकार नैतिक आदेश की निरपेक्षता समाप्त हो जाएगी। इसी कारण कान्ट का विचार है कि किसी कर्म का नैतिक मूल्य केवल उसके मूल में निहित कर्तव्य पालन करने की चेतना पर ही निर्भर है, उस कर्म से उत्पन्न होने वाले परिणामों अथवा इन परिणामों को उत्पन्न करने की इच्छा पर नहीं। इस प्रकार कान्ट मानवीय कर्मों के नैतिक मूल्य का उनके परिणामों से कोई सम्बन्ध न मान कर स्वार्थवाद, सुखवाद, उपयोगितावाद आदि सभी परिणाममूलक सिद्धांतों का खंडन करते हैं। उनका विचार है कि हमें कर्मों के परिणामों की चिता किये बिना केवल कर्तव्य का पालन करने के विचार से प्रेरित हो कर ही अपने समस्त कर्म करने चाहिए। इसका कारण यह है कि कान्ट के मतानुसार मनुष्य की कर्तव्य-चेतना ही वास्तव में सम्पूर्ण नैतिकता का मूल आधार है। यहां यह उल्लेखनीय है कि बहुत प्राचीन काल में भगवान कृष्ण ने भगवद्गीता में लगभग इसी सिद्धांत का प्रतिपादन किया था। जब कुरुक्षेत्र की युद्धभूमि में अर्जुन बधुजनों के मोह के फलस्वरूप अपने कर्तव्य को भूल गया तो उसे स्वकर्तव्य का ज्ञान कराते हुए श्रीकृष्ण ने यही कहा था कि "तुम्हें फल की चिता किये बिना अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए, क्योंकि कर्म पर ही तेरा अधिकार है उसके फल पर नहीं"। इसे ही गीता में निष्काम कर्म का सिद्धांत कहा गया है जिस पर हम इस पुस्तक के अन्तिम अध्याय में विचार करेंगे। यहां इतना कह देना ही पर्याप्त है कि गीता के उक्त सिद्धांत और कान्ट के कर्तव्य संबंधी सिद्धांत में बहुत समानता है। गीता की भांति कान्ट का भी यही मत है कि मनुष्य को कर्मों के परिणामों की चिता किये बिना केवल अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए, क्योंकि कर्तव्य-पालन के विचार से प्रेरित कर्म का ही नैतिक मूल्य है। दूसरे शब्दों में, कान्ट के मतानुसार जब मनुष्य केवल कर्तव्य के लिए अपने कर्तव्य का पालन करता है और इससे किसी भी अन्य उद्देश्य की पूति की इच्छा नहीं करता तभी उसका कर्म वास्तव में नैतिक दृष्टि से शुभ माना जा सकता है। प्रश्न यह है कि कान्ट के उक्त 'कर्तव्य के लिए कर्तव्य' सम्बन्धी सिद्धांत में आनंद का क्या स्थान है। कान्ट के विरुद्ध प्राय यह कहा जाता है कि वे मनुष्य के जीवन में आनंद की पूर्णतया उपेक्षा करते हैं, परंतु वास्तव में कान्ट के मतानुसार 'पूर्ण शुभ' में शुभ संकल्प के साथ-साथ आनंद का भी समावेश होता है। यही नहीं, कर्तव्य का पालन करने में भी वे आनंद के महत्व को स्वीकार करते हैं। आनंद प्राप्त करना उन्होंने मनुष्य का 'परोक्ष कर्तव्य' भी माना हैं। वे कहते हैं कि "अपने लिए आनंद प्राप्त करना मनुष्य का अप्रत्यक्ष कर्तव्य है, क्योंकि अपनी स्थिति के प्रति अत्यधिक असंतोष और इच्छाओं की अतृप्ति के कारण वह अपने कर्तव्य का उल्लंघन करने के लिए प्रेरित हो सकता है"।" इससे पूर्णतया स्पष्ट है कि कान्ट मानव-जीवन में चानंद की उपेक्षा नहीं करते जैसा कि कुछ आलोचकों का विचार

है। परन्तु यहां यह स्पष्ट कर देना बहुत आवश्यक है कि कान्ट मनुष्य के जीवन में प्रानंद के महत्व को तभी तक स्वीकार करते हैं जब तक वह उसके कर्तव्य- पालन में बाधक सिद्ध नहीं होता। उनका स्पष्ट कथन है कि यदि आनंद- प्राप्ति की इच्छा कर्तव्य पालन में बाधक सिद्ध होती है तो मनुष्य को इस इच्छा का अवश्य परित्याग करना चाहिए। आनंद कर्तव्यों का निर्धारण करने का जाधार नहीं हो सकता। स्वयं आनंद प्राप्त करते की इच्छा से प्रेरित कर्म नैतिक दृष्टि से शुभ नहीं हो सकता। यही नहीं, कान्ट के विचार से ऐसे कर्म का भी नैतिक मूल्य नही है, जो दूसरों को आनन्द प्रदान करने के उद्देश्य से प्रेरित होकर किया जाता है यद्यपि यह कर्म प्रशंसनीय अवश्य है। कान्ट का यह भी मत है कि अपने कर्तव्य का पालन करने के विचार से प्रेरित होकर कर्म करते समय मनुष्य को एक विशेष संतोष की अनुभूति होती है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि कान्ट मनुष्य के लिए आनन्द के महत्व को स्वीकार अवश्य करते हैं, किन्तु उनके विचार में यह आनन्द उसके कर्तव्य पालन में बाधक नहीं होना चाहिए।

कान्ट द्वारा मनुष्य के समस्त कर्तव्यों को सर्वप्रथम दो वर्गों में विभाजित किया है 'पूर्णबंधी कर्तव्य' तथा 'अपूर्णबंधी कर्तव्य' । कान्ट के मतानुसार पूर्णबंधी कर्तव्य वे हैं जिनका प्रत्येक मनुष्य के लिए सभी परिस्थितियों में पालन करना आवश्यक है- अर्थात् जिनका किसी भी परिस्थिति में कोई अपवाद सम्भव नहीं है। उदाहरणार्थ ऋण चुकाना पूर्णबंधी कर्तव्य है जिसका सदैव पालन करना आवश्यक है। आत्म- हत्या न करना भी कान्ट के विचार में पूर्णबंधी कर्तव्यों के अन्तर्गत ही आता **है**। स्पष्ट है कि सापेक्ष आदेश मनुष्य को किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए कोई विशेष कर्म करने या न करने के लिए बाध्य करता है। सामान्यतः सापेक्ष आदेश का स्वरूप यह होता है : "यदिआप अमुक उद्देश्य को पूर्ति करना चाहते हैं तो आपको इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अमुक कर्म करना चाहिए।" दूसरे शब्दों में सापेक्ष आदेश के अनुसार कर्म करने के लिए किसी शर्त का होना आवश्यक है और यह शर्त है वह विशेष उद्देश्य जिसकी पूति के साधन के रूप में वह कर्म किया जाता है। सापेक्ष आदेश के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते है:- "यदि आप परीक्षा में उत्तीर्ण होना चाहते हैं तो परिश्रम कीजिए",... "यदि आप रेल गाड़ी द्वारा यात्रा करना चाहते हैं तो स्टेशन पर पहुंचिए",... यदि आप शीत से बचना चाहते हैं तो द्वार बन्द कीजिए"। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि सापेक्ष आदेश सदैव शतंयुक्त होता है इससे प्रेरित कर्म स्वतःसाध्य न होकर किसी अन्य उद्देश्य की पूति के साधनमात्र होते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि सापेक्ष आदेश के अनुसार कर्म करना मनुष्य के लिए तभी तक अनिवार्य है जब तक वह किसी विशेष उद्देश्य की पूति करना चाहता है; यदि वह इस उद्देश्य का परित्याग कर देता है तो वह इसकी पूर्ति के लिए किए जाने वाले कर्मों को भी न करने के लिये स्वतंत्र है। यही कारण है कि कान्ट ने सापेक्ष आदेश को नैतिक आदेश' के रूप में स्वीकार नहीं किया ।

मनुष्य अपने जीवन में विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति करना चाहता है। ऐसी स्थिति में सापेक्ष आदेश द्वारा विविध कर्मों में भी भिन्नता का होना अनिवार्य है। प्रत्येक सापेक्ष आदेश मनुष्य को एक विशेष उद्देश्य की पूति के लिए प्रेरित करता है, किन्तु कान्ट ने सापेक्ष आदेशों को दो वर्गों में विभक्त किया है- हेत्वाश्रित आदेश और प्रकृत आदेश । हेत्वाधित आदेश का सम्बन्ध उन उद्देश्यों मे है, जिनकी पूति के लिए सब मनुष्य नहीं, अपितु कुछ व्यक्ति प्रयास करते है- यथा परीक्षा में उत्तीर्ण होना, कोई विशेष कला सीखना, यात्रा करना इयादि। इस प्रकार के सापेक्ष आदेशों को कान्ट ने "कौशल संबंधी आदेश" कहा है। प्रकृत आदेश का संबंध उन उद्देश्यों से है, जिनकी प्राप्ति के लिए सभी मनुष्य स्वभावतः प्रयास करते हैं- यथा आनंद प्राप्त करना। इस प्रकृत बादेश को कान्ट ने "बौद्धिक आत्म प्रेम संबंधी आदेश" की संज्ञा दी है। उनका मत है कि मनुष्य कौशल संबंधी भावेश के उद्देश्य की पूति करने अथवा न करने के लिए स्वतन्त्र है, किन्तु प्रकृत आदेश से सम्बंधित उद्देश्य (आनन्द) के सम्बंध में यह नहीं कहा जा सकता। इसका अभिप्राय यह है कि कान्ट के विचार में प्रत्येक मनुष्य सदैव आनन्द प्राप्त करने की इच्छा अवश्य करता है। परन्तु यहां यह कि द्वितीय प्रकार का श्रादेश भी सापेक्ष ही है, क्योंकि मनुष्य कुछ विशेष परिस्थितियों में- यथा, कर्तव्य-पालन में बाधक सिद्ध होने पर आनन्द का भी परित्याग कर सकता है और कान्ट के मतानुसार उसे ऐसा अवश्य करना चाहिए । संक्षेप में कान्ट का विचार यह है कि प्रत्येक सापेक्ष आदेश शर्तयुक्त होता है, अतः कुछ विशेष परिस्थितियों में मनुष्य अपनी इच्छानुसार उसका उल्लंघन कर सकता है। इसी कारण उन्होंने किसी सापेक्ष आदेश को नैतिक आदेश नहीं माना। कान्ट के विचार में केवल निरपेक्ष आदेश ही उच्चतम नैतिक नियम तथा नैतिक आदेश है। सापेक्ष आदेश के विपरीत यह निरपेक्ष आदेश मनुष्य को जो कर्म करने के लिए बाध्य करता है वह किसी अन्य उद्देश्य की पूति का साधन न होकर अपने-आप में शुभ होता है। इस आदेश की परिभाषा देते हुए कान्ट ने लिखा है कि "निरपेक्ष आदेश यह है जो कर्म को किसी अन्य उद्देश्य की पूति का साधन मात्र न मानकर अपने आपमें शुभ तथा अनिवार्य मानता है।"" यह निरपेक्ष आदेश मनुष्य की भावनाओं, प्रवृत्तियों तथा इच्छाओं पर निर्भर नहीं है और इसका मनुष्य के कर्मों के परिणामों से भी कोई सम्बंध नहीं है। यह आदेश हमें कोई विशेष कर्म करने या न करने के लिए भी बाध्य नहीं करता। वस्तुतः कान्ट के मतानुसार निरपेक्ष आदेश नैतिक नियम को स्वतःसाध्य मानकर मनुष्य को सदैव उसका पालन करने के लिए बाध्य करता है। यह आदेश मनुष्य को बताता है कि उसे नैतिक नियम को सार्वभौमिक नियम मानकर स्वतःसाध्य के रूप में स्वीकारकरना चाहिए, किसी अन्य उद्देश्य की पूर्ति के साधन के रूप में नहीं। स्पष्ट है कि सापेक्ष आदेश के विपरीत कान्ट के विचार में निरपेक्ष आदेश सार्वभौमिक तथा स्वतःसाध्य उच्चतम नैतिक नियम है। इस निरपेक्ष आदेश को कान्ट ने निम्नलिखित मूल नैतिक सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत किया है: "ऐसे किसी नियम के अनुसार आचरण न करो जिसे तुम सार्वभौमिक नियम के

रूप में स्वीकार करने का संकल्प न कर सको।"" इसका अर्थ यह है कि निरपेक्ष आदेश मनुष्य को केवल ऐसे नियम के अनुसार आचरण करने की आज्ञा देता है जिसे वह सार्वभौमिक नियम के रूप में स्वीकार कर सके - अर्थात् जिस नियम को समान परिस्थितियों में सभी मनुष्यों पर लागू किया जा सके। इस प्रकार कान्ट के विचार में सार्वभौमिकता, निरपेक्ष आदेश की अनिवार्य शर्त है जिसके अभाव में इसे नैतिक आदेश नहीं माना जा सकता। सार्वभौमिकता को निरपेक्ष आदेश के लिए अनिवार्य मानते हुए कान्ट कहते हैं कि किसी नियम के अनुसार आचरण करने से पूर्व हमें अपने आप से यह प्रश्न पूछना चाहिए कि क्या हम इस नियम को इन कि सभी इसी नियम के अनुसार आचरण करें। यदि इस प्रश्न का उत्तर सार्वभौमिक नियम के रूप में स्वीकार कर सकते हैं- अर्थात् क्या हम चाहते नकारात्मक है तो हमें इस नियम के अनुसार आचरण नहीं करना नाहिए। कान्ट का यह भी कथन है कि निरपेक्ष आदेश सार्वभौमिक होने के साथ-साथ परिणाम निरपेक्ष भी होता है। वह परिणामों के आधार पर किसी नियम को 'नैतिक नियम' मानने की आज्ञा नहीं देता। परिणामों पर विचार किये बिना ही मनुष्य को सार्वभौमिक नियम के अनुसार आचरण करना चाहिए। संक्षेप में कान्ट का मत यह है कि निरपेक्ष आदेश के अनुसार केवल ऐसे नियम को ही 'नैतिक नियम' माना जा सकता है जो परिणामों पर आधारित नहीं है और जो समान परिस्थितियों में सभी मनुष्यों पर समान रूप से लागू किया जा सकता है। कुछ उदाहरणों द्वारा कान्ट ने इस निरपेक्ष आदेश के स्वरूप को स्पष्ट किया है। सर्वप्रथम उनका कथन है कि जो व्यक्ति अपना वचन भंग करता है वह इस नियम के अनुसार आचरण करता है कि जब भी मेरे लिए कठिनाई हो मुझे अपना वचन-भंग कर देना चाहिए। परन्तु कान्ट के विचार में वह अपने इस नियम को सार्वभौमिक नियम बनाने का संकल्प नहीं कर सकता, क्योंकि यदि सभी व्यक्ति कठिनाई के कारण अपना वचन भंग करने लगेंगे तो कोई भी किसी के वचन पर विश्वास नहीं करेगा और इस प्रकार अपना वचन- भंग करने से किसी की कठिनाई दूर नहीं होगी। वस्तुतः जो व्यक्ति अपनी कठिनाई दूर करने के लिए वचन-भग करता है वह यही चाहता है कि अन्य सभी व्यक्ति सदैव अपने वचन का पालन करें किन्तु वह स्वयं इस नियम का अपनी इच्छानुसार उल्लघंन कर सके । इससे स्पष्ट है कि वह अपने नियम को सार्वभौमिक न बना सकने के कारण निरपेक्ष आदेश के विरुद्ध आचरण करता है, बतः अपनी काठिनाई के कारण उसका वचन भंग करना अनैतिक है। कान्ट का मत है कि हमें अपने वचन का पालन किसी प्रकार का लाभ प्राप्त करने के लिए नहीं अपितु उसे सार्वभौमिक नियम तथा अपना कर्तव्य मानकर ही करना चाहिए। वचन-भंग की भांति आत्महत्या को भी कान्ट ने अनैतिक माना है, क्योंकि उनके विचार में इसे भी सार्वभौमिक नियम नहीं बनाया जा सकता। उत्तका कथन है कि आत्महत्या करने वाला व्यक्ति इस नियम के अनुसार कार्य करता है कि यदि जीवन मेंसुख की अपेक्षा दुःख अधिक हो तो उसे समाप्त कर देना चाहिए। परन्तु कान्ट के मतानुसार यह नियम सार्वभौमिक

प्राकृतिक नियम नहीं हो सकता, क्योंकि मानव प्रकृति का कार्य जीवन की वृद्धि करना है, उसे नष्ट करना नहीं। इसी आधार पर उन्होंने आत्महत्या को अनैतिक और अपने प्रति पूर्णबंधी कर्त्तव्य के विरुद्ध माना है। वचन-भंग तथा आत्महत्या के अतिरिक्त अपनी शारीरिक और मानसिक क्षमताग्रों का विकास न करना भी कान्ट के विचार में अनैतिक है, क्योंकि बौद्धिक प्राणी होने के नाते कोई भी व्यक्ति यह संकल्प नहीं कर सकता कि यह सार्वभौमिक नियम हो जाय अर्थात् सभी व्यक्ति अपनी शारीरिक एवं मानसिक शक्तियों के विकास के प्रति उदासीन हो जाएं। कान्ट की यह मान्यता है कि प्रकृति ने मनुष्य को शारीरिक तथा मानसिक शक्तियां कुछ विशेष उद्देश्यों की पूति के लिए प्रदान की है, अतः बौद्धिक प्राणी होने के कारण वह इनके विकास के प्रति उदासीनता को सार्वभौमिक नियम के रूप में स्वीकार नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में अपनी शारीरिक एवं मानसिक क्षमताओं का विकास न करना अनैतिक तथा अपने प्रति अपूर्ण बंधी कर्त्तव्य के विरुद्ध है। निरपेक्ष आदेश के उल्लंघन का चौथा उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कान्ट कहते हैं कि आपत्तिकाल में दूसरों की सहायता न करना भी नैतिकता के विरुद्ध है। संकटग्रस्त मनुष्यों को सहायता न देने वाला व्यक्ति यह कह सकता है कि वह उनके आनंद में किसी प्रकार की बाधा नहीं डालता और न उनसे ईर्ष्या करता है; वह तो दूसरों के सुख-दुःख की चिंता किए बिना केवल अपने आनंद की चिंता करना चाहता है। परन्तु कान्ट का कथन है कि ऐसा व्यक्ति यह संकल्प नहीं कर सकता कि सभी मनुष्य दूसरों के सुख-दुःख के प्रति उदासीन होकर केवल अपने आनंद की वृद्धि करें। इसका कारण यह है कि यदि वह दूसरों के कष्ट के प्रति उदासीनता को सार्वभौमिक नियम मान लेता है तो विपत्तिकाल में वह स्वयं कभी किसी से सहायता प्राप्त करने की आशा नहीं कर सकता। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति को कभी न कभी दूसरों की सहायता की आवश्यकता पड़ती है। इसी आधार पर कान्ट ने पीड़ित व्यक्तियों के दुःख के प्रति उदासीनता को अनैतिक तथा दूसरों के प्रति अपने अपूर्ण बंधी कर्त्तव्य के विरुद्ध माना है। इन सभी उदाहरणों द्वारा कान्ट ने यह प्रमाणित करने का प्रयास किया है कि अनैतिक आचरण को सार्वभौमिक नियम नहीं बनाया जा सकता, अतः वह नैतिकता के सर्वोच्च नियम-निरपेक्ष आदेश के विरुद्ध है। निरपेक्ष आदेश के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए कान्ट ने ऊपर जो बार उदाहरण दिये हैं उनकी अनेक दार्शनिकों ने आलोचना की है। उदाहरणार्थ पेटनने कान्ट की इस मान्यता के औचित्य में संदेह व्यक्त किया है कि किसी भ परिस्थिति में पूर्णबंधी कर्तव्यों का कोई अपवाद नहीं हो सकता। वे कहते हैं: "हमें इसमें संदेह है कि ऋण चुकाने से संबंधित पूर्ण बंधी कर्तव्य अपवादरहित है अर्थात् उसका किसी अन्य कर्तव्य के लिए परित्याग नहीं किया जा सकता। जैसा कि बहुत समय पूर्व प्लेटो ने कहा था, अपने वचन के अनुसार किसी ऐसे व्यक्ति को हथियार लौटाना हमारा कर्तव्य नहीं है जो अब पागल और हत्यारा हो गया है"।" वस्तुतः कान्ट के इस मत को स्वीकार करना बहुत कठिन है कि पूर्णबंधी कर्तव्यों का कभी कोई अपवाद हो ही नहीं

सकता। आत्महत्या के सम्बंध में भी कान्ट के मत को पेटन उचित नहीं मानते। उनका कथन है कि जब जीवन में निरन्तर पीड़ा के अतिरिक्त और कुछ न रह जाय तो उसे समाप्त कर देना अप्राकृतिक तथा अनुचित नहीं माना जा सकता। वास्तव में आत्म- हत्या के विरुद्ध कान्ट का तर्क अधिक प्रभावशाली प्रतीत नहीं होता, क्योंकि इस नियम को सार्वभौमिक बनाया जा सकता है कि जब मनुष्य के जीवन में दुःख के अतिरिक्त शेष कुछ न रह जाय तो उसे अपने जीवन का अन्त कर देना चाहिए। कुछ दार्शनिकों ने कान्ट के उस तर्क की भी आलोचना की है जिसके आधार पर उन्होंने दुखी व्यक्तियों की सहायता न करना अनैतिक माना है। उदाहरणार्थ शापिनहावर का कथन है कि पीड़ित मनुष्यों की सहायता न करने वाले व्यक्ति के आचरण के विरुद्ध कान्ट ने जो तर्क दिया है वह स्वार्थमूलक होने के कारण स्वयं उनके अपने नैतिक सिद्धांत के विरुद्ध है। जैसाकि कान्ट के मतानुसार पीड़ित मनुष्यों की सहायता न करना इसलिए अनैतिक है कि इस प्रकार की सहायता न करने वाला व्यक्ति विपत्तिकाल में स्वयं किसी से सहायता श्री आशा नहीं कर सकता। यह स्वार्थमूलक तर्क निश्चय ही कान्ट के अपने नैतिक सिद्धांत के विरुद्ध है, क्योंकि उन्होंने स्पष्ट कहा है कि केवल अपने सुख की इच्छा से प्रेरित प्रत्येक कर्म अनैतिक है । यह कहा जाता है कि बाद में कान्ट ने अपने मत में परिवर्तन किया था और यह कहा था कि मनुष्य को केवल कर्तव्य चेतना से प्रेरित होकर ही पीड़ित व्यक्तियों की सहायता करनी चाहिए, अपने दूरणामी लाभ की इच्छा से प्रेरित होकर नहीं। यह परिवर्तित मत कान्ट के मूल नैतिक सिद्धांत के अनुरूप है।

3.3.3. मुख्य नैतिक नियम (The main ethical rule)

नैतिकता के सर्वोच्च नियम निरपेक्ष आदेश के आधार पर कान्ट ने कुछ ऐसे नैतिक नियमों का प्रतिपादन किया है जो उनके विचार में प्रत्येक मनुष्य के लिए अनिवार्य हैं। उनका कथन है कि बौद्धिक प्राणी होने के नाते प्रत्येक मनुष्य को इन नैतिक नियमों के अनुसार अवश्य आचरण करना चाहिए। वस्तुतः ये नैतिक नियम मनुष्य के कर्तव्य निर्धारण में बहुत सहायक सिद्ध हो सकते हैं ।

- **सार्वभौमिकता का नियम :-** निरपेक्ष आदेश के अनुसार प्रत्येक मनुष्य को केवल ऐसे नियम के आधार पर आचर करना चाहिए जिसे वह सार्वभौमिक नियम के रूप में स्वीकार करने का संकल्प कर सके। इसे ही कान्ट ने 'सार्वभौमिकता का नियम' कहा है। यह नियम हमें बताता है कि हम जिन विशेष नैतिक नियमों के आधार पर कर्म करते हैं वे पूर्णतः वस्तुनिष्ठ, निष्पक्ष तथा निवैयक्तिक होने चाहिएं। किसी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं है कि वह अपने आपको तथा अपने मित्रों और सम्बन्धियों को किसी भी परिस्थिति में उस विशेष नैतिक नियम से मुक्त समझे जिसका सदैव पालन करना वह दूसरों के लिए आवश्यक मानता है। कान्ट के

विचार में नैतिक नियम सदैव अपवादरहित होता है, क्योंकि किसी नियम को सार्वभौमिक नियम के रूप में स्वीकार करने तथा अपने आपको अथवा किसी अन्य व्यक्ति को उसका अपवाद मानने में आत्मविरोध स्पष्ट है। व्यावहारिक जीवन में नैतिकता की दृष्टि से कान्ट के उक्त सार्वभौमिकता के नियम का बहुत महत्व है। लगभग सभी दार्शनिक यह स्वीकार करते हैं कि सार्वभौमिकता नैतिक नियम को अनिवार्य शतं है-अर्थात् नैतिक नियम किसी व्यक्ति की इच्छा पर निर्भरत होकर सामान परिस्थितियों में सभी व्यक्तियों पर समान रूप से लागू होता है। उदाहरणार्थ आर० एम० हेयर ने इसी नियम को 'सार्वभौमिकता का सिद्धांत कह कर इसे नैतिकता की अनिवार्य शर्त माना है। कान्ट द्वारा प्रतिपादित सार्वभौमिकता का यह नियम बस्तुनिष्ठता, निर्वैयक्तिकता और निष्पक्षता पर झोर देता है जो नैतिकता के लिए अनिवार्य हैं।

- **मनुष्यता को साध्य मानने का नियम :-** कान्ट का दूसरा महत्त्वपूर्ण नैतिक नियम मनुष्य के व्यक्तित्व की स्वतन्त्रता और उसके सम्मान से सम्बंधित ये है। इस नियम को उन्होंने निम्नलिखित सूत्र के रूप में प्रस्तुत किया है। "इस प्रकार कार्य करो कि स्वयं तुम में तथा दूसरों में निहित मनुष्यता साधन मात्र न रह कर सदैव अपने आप में साध्य बनी रहे"। यह नियम बताता है कि हमें स्वयं अपनी तथा दूसरों की स्वतंत्रता एवं प्रतिष्ठा का पूर्ण सम्मान करना बाहिए। इसके अनुसार हमें अपने आपको केवल इच्छाओं की तृप्ति का तथा अन्य व्यक्तियों को केवल अपनी इच्छाओं की तृप्ति का साधन मात्र कदापि नहीं मानना चाहिए । प्रथम नैतिक नियम की भांति यह नियम भी सभी मनुष्यों पर समान रूप से लागू होता है, अतः यह भी सार्वभौमिक नियम है। कान्ट का विचार है कि बौद्धिक प्राणी होने के नाते प्रत्येक मनुष्य का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व तथा गौरव होता है जिसे अपनी इच्छाओं की तृप्ति के लिए कुचलने का किसी को अधिकार नहीं है। इसके अतिरिक्त किसी व्यक्ति को यह अधिकार भी नहीं है कि वह दूसरों की इच्छाओं को तृप्त करने के लिए स्वयं अपने आपको साधन मात्र बना कर अपने गौरव एवं स्वतंत्र व्यक्तित्व को नष्ट कर दे। इस- प्रकार यह नियम हमें अपनी तथा अन्य सभी व्यक्तियों की मनुष्यता का सम्मान करने के लिए बाध्य करता है। यहां यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि क्या व्यावहारिक जीवन में इस नियम के अनुसार आचरण करना सम्भव है। इस प्रश्न के उत्तर में यही कहा जा सकता है कि कान्ट इसे पूर्णतया सम्भव मानते हैं। यह सत्य है कि हमारी सामाजिक व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रूप में दूसरों की इच्छाओं की पूति के लिए कार्य करता है और इस प्रकार वह उनकी इच्छाओं की पूर्ति का साधन बनता है। हमारे कल्याण के लिए भी अन्य व्यक्ति कार्य करते हैं और इस दृष्टि से वे हमारे कल्याण के साधन बन जाते हैं। परन्तु कान्ट के विचार में इसते उक्त नियम का उल्लंघन नहीं होता। इसका कारण यह है कि जब मनुष्य विवशता अथवा अन्य प्रयोजन से नहीं, अपितु कर्तव्य-चेतना से प्रेरित होकर ही

दूसरों के कल्याण के लिए कार्य करता है; तो इसे उनकी इच्छाओं की तृप्ति का साघन मात्र नहीं माना जा सकता। इसी प्रकार जब कोई व्यक्ति विवशता या स्वार्थ के कारण अथवा दुःख से मुक्ति प्राप्त करने के लिए नहीं, प्रत्युत केवल अप कत्तं व्य का पालन करने के लिए ही जीवन का बलिदान करता है तो यह नह कहा जा सकता, कि वह अपने आपको दूसरों की इच्छाओं की पूति का साथ मात्र बना रहा है। स्पष्ट है कि इस नियम का उल्लंघन तभी होता है, जब मनुष्य अपने आपको अथवा दूसरों को साधन मात्र मान लेता है, और स्वार्थ विवश होकर दूसरों की इच्छाओं की तृप्ति करता है अथवा अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए अन्य व्यक्तियों को विवश करता है। दूसरे शब्दों में, यह कहा सकता है कि ऐसी प्रत्येक प्रथा इस नियम के विरुद्ध है जो मनुष्य को साधन म मान लेती है और उसे अन्य व्यक्तियो की इच्छाओं की पूर्ति के लिए विक करती है। इसी आधार पर कान्ट ने दासता, शोषण, चोरी, वचनभंग, झूठ, बलात्कार, हत्या आदि को अनैतिक माना है, क्योंकि उनके विचार में इन सब मनुष्यता को अपने आप में साध्य मानने के नियम का स्पष्टतः उल्लंघन ही है। ये सब अथवा इनमें से कोई एक दुष्कर्म करने वाला व्यक्ति दूसरों को अप इच्छाओं की तृप्ति का साधन मात्र मान लेता है। कान्ट यह भी मानते हैं कि केवल दुःख से मुक्त होने के लिए आत्महत्या करना भी इस नियम का स्पष्ट उल्लघंन है, क्योंकि जो व्यक्ति ऐसा करता है वह अपने भीतर निहित मनुष्यता को सुख प्राप्ति का साधन मात्र समझता है। संक्षेप में कान्ट का यह नियम प्रत्येक मनुष्य को मनुष्यता का सम्मान करने के लिए बाध्य करने के साथ-साथ अनेक अपराधों का भी निषेध करता है, अतः व्यावहारिक जीवन में इसका महत्त्व स्पष्ट और निर्विवाद है।

- **स्वाधीनता का नियम :** इस नियम द्वारा कान्ट ने यह बताय कि मनुष्य जिन सार्वभौमिक नैतिक नियमों का पालन करता है वे उस पर कि बाह्य शक्ति द्वारा आरोपित न होकर आत्मप्रेरित ही होते हैं। स्वाधीनता इस नियम को उन्होंने निम्नलिखित वाक्य में प्रस्तुत किया है: "इस प्रकार क करो कि तुम्हारा संकल्प अपने आपको सार्वभौमिक नियमों का विधायकसदस्य समझ सके"।" कान्ट के इस नियम का मूल सिद्धान्त यह है कि मनुष्य का बौद्धिक संकल्प स्वयं ही उन सार्वभौमिक नैतिक नियमों का विधान करता है जिन वह अपने व्यावहारिक जीवन में पालन करता है। इसका अभिप्राय यह है सच्ची नैतिकता बाह्यारोपित न होकर केवल आत्मप्रेरित ही होती है। नैतिक नियमों का पालन किसी प्रकार के प्रलोभन अथवा भय के कारण अपितु अपने बौद्धिक एवं स्वतंत्र संकल्प से प्रेरित होकर ही करना चाहिए यह नियम प्रलोभन तथा भय के साथ-साथ भावनाओं, इसछाओं एवं प्रवृत्तियों से प्रेरित होकर नैतिक नियमों का पालन करने का निषेध करता है। कान्ट का विचार है कि जब मनुष्य केवल भावनाओं इच्छाओं अथवा प्रवृत्तियों से प्रेरित होकर कर्म करता है तो उसका संकल्प इन

अबौद्धिक शक्तियों के आधीन होने के कारण बौद्धिक एवं स्वाधीन नहीं होता। ऐसी स्थिति में इन अबौद्धिक तत्त्वों द्वारा प्रेरित उसके कर्म को नैतिक नहीं माना जा सकता । कान्ट के विचार में इस प्रकार का कर्म स्वाधीनता के नियम के विरुद्ध है, क्योंकि इसे करते समय मनुष्य का संकल्प स्वाधीन न होकर कुछ विशेष इच्छाओं, भावनाओं अथवा मूलप्रवृत्तियों द्वारा शासित होता है। इच्छाधों से प्रेरित कर्म के अतिरिक्त कान्ट ऐसे कर्म को भी स्वाधीनता के नियम के विरुद्ध मानते हैं जो ईश्वर अथवा किसी अन्य बाह्य शक्ति द्वारा दिये जाने वाले पुरस्कार की आशा से प्रेरित होकर अथवा ऐसी शक्ति के दंड के भय से बाध्य होकर किया जाता है। दूसरे शब्दों में, कान्ट के मतानुसार स्वर्ग के प्रलोभन अथवा नर्क के भय के फलस्वरूप किया जाने वाला कर्म, स्वाधीनता के नियम के विरुद्ध होने के कारण नैतिक नहीं है। इस प्रकार स्पष्ट है कि स्वाधीनता के नियम के आधार पर कान्ट नैतिकता के सम्बंध में उत्स धार्मिक दृष्टिकोण को पूर्णतया अस्वीकार करते है जिसके अनुसार ईश्वर के आदेश के अनुरूप किया गया कर्म उचित और उसके आदेश के विरुद्ध किया गया कर्म अनुचित है। स्वाधीनता के नियम द्वारा कान्ट ने इस महत्त्वपूर्ण तथ्य कीऔर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है कि सच्ची नैतिकता का उद्गम मनुष्य के बौद्धिक एवं स्वाधीन संकल्प में ही हो सकता है, अतः नैतिक नियम बाह्या-रोपित न होकर आत्मप्रेरित ही होता है।

- **साध्यों के राज्य का नियम :-** कान्ट का यह नियम अन्य सभी नियमों की अपेक्षा अधिक व्यापक है, क्योंकि इसमें पूर्वणित तीनों नियमों का समावेश हो जाता है। इस व्यापक नियम को उन्होंने निम्नलिखित वाक्य में प्रस्तुत किया है: "इस प्रकार कार्य करो कि तुम अपने आपको साध्यों के राज्य का नियम विधायक सदस्य समझ सको"।" इस नियम द्वारा कान्ट ने यह बताया है कि सार्वभौमिकता के नियम का पालन करने वाला प्रत्येक व्यक्ति अपनेआप को एक ऐसे आदर्श समाज का सदस्य समझे जिसमें सभी मनुष्य स्वयं अपने आपको तथा दूसरों को साधन मात्र न मानकर साध्य मानते हैं और एक-दूसरे के स्वतंत्र व्यक्तित्व का सम्मान करते हुए केवल आत्म प्रेरित नैतिक नियमों के अनुसार आचरण करते हैं। स्पष्ट है कि इस नियम में सार्वभौमिकता का नियम, मानवता को साध्य मानने का नियम तथा स्वाधीनता का नियम वे तीनों ही सम्मिलित हैं। यही कारण है कि इसे सर्वाधिक व्यापक नियम माना गया है। वस्तुतः इस नियम द्वारा कान्ट ने एक ऐसे आदर्श मानव-समाज की कल्पना की है जिसमें सभी व्यक्ति मनुष्य होने के नाते एक-दूसरे की प्रतिष्ठा का सादर करते हैं और बौद्धिक एवं स्वाधीन संकल्प से युक्त होने के कारण केवल आत्मप्रेरित सार्वभौमिक नैतिक नियमों का ही पालन करते हैं। इसी आदर्श मानव-समाज को उन्होंने 'साध्यों का राज्य' कहा है। इस प्रकार के आदर्श मानव-समाज में प्रत्येक व्यक्ति दूसरों द्वारा शासित न होकर स्वयं अपने आप पर शासन करता है। ऐसे समाज में

प्रत्येक मनुष्य के कर्म उसके अपने हित द्वारा नहीं अपितु आत्मप्रेरित, वस्तुनिष्ठ, एवं सार्वभौमिक नियमद्वारा ही निर्धारित होते हैं। वह तभी तक अपने हित के लिए कार्य करता है जब तक उसका यह कार्य इस आत्मप्रेरित नैतिक नियम के विरुद्ध न हो। कान्ट के विचार में इस आदर्श समाज का सर्वोच्च प्रशासक ईश्वर ही हो सकता है जो समस्त नियमों का विधायक है किन्तु जो पूर्णतया बौद्धिक होने के कारण स्वयं इन नियमों द्वारा शासित नहीं होता। इस आदर्श समाज के सदस्यों के विपरीत ईश्वर की कोई आवश्यकताएं नहीं हैं, फलतः उसमें ऐसी इच्छाए उत्पन्न नहीं होतीं जो सार्वभौमिक वस्तुनिष्ठ नैतिक नियम के अनुसार आचरण करने में बाधा डालती हैं। परन्तु ईश्वर के समान महत्त्वपूर्ण न होते हुए भी इस आदर्श समाज के प्रत्येक सदस्य को ऐसी प्रतिष्ठा प्राप्त है जिसका महत्त्व अन्य सभी वस्तुओं के महत्त्व की अपेक्षा कहीं अधिक है। यह सर्वोच्च प्रतिष्ठा उसे आत्म- प्रेरित नैतिक नियम के अनुसार आचरण करने के कारण ही प्राप्त होती है और वह इसका किसी अन्य वस्तु के लिए कदापि परित्याग नहीं कर सकता। वस्तुतः इस सर्वोच्च प्रतिष्ठा के कारण ही साध्यों के राज्य का प्रत्येक सदस्य साधन मात्र न होकर अपने आप में साध्य माना जाता है। परन्तु कान्टं यह स्वीकार करते हैं कि ऐसा राज्य एक आदर्श है जिसे व्यावहारिक जीवन में प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। फिर भी उनके मतानुसार हमें इसकी प्राप्ति के लिए सतत प्रयास करना चाहिए। हम इस आदर्श की ओर तभी अग्रसर हो सकते हैं जब हम अपने स्वाधीन संकल्प से प्रेरित होकर सदैव निरपेक्ष आदेश के अनुसार आचरण करें और सम्पूर्ण मानवता को अपने आप में साध्य मानते हुए केवल कर्तव्य के लिए अपने कर्तव्य का पालन करें। कान्ट के अनुसार साध्यों के राज्य का उच्चतम चादयों प्राप्त करने के लिए निरपेक्ष आदेश के अनुसार किए गए आचरण में ही सच्ची नैतिकता निहित है। इस प्रकार उपयुक्त चारों नियमों द्वारा कान्ट का नैतिक दर्शन हमारे कर्तव्यों के निर्धारण में पर्याप्त सीमा तक सहायता प्रदान करता है।

3.3.4. नैतिकता की आवश्यक मान्यताएं (Essential principles of morality)

निरपेक्ष आदेश के नियमों के अतिरिक्त कान्ट ने नैतिकता की कुछ आवश्यक आधारभूत मान्यताओं का भी उल्लेख किया है। उनके मतानुसार नैतिकता के लिए तीन आधारभूत मान्यताओं को स्वीकार करना अनिवार्य है। ये तीन मान्यताएं हैं संकल्प की स्वतन्त्रता, आत्मा की अमरता और ईश्वर का अस्तित्व । अपनी पुस्तक 'क्रिटीक ऑफ प्योर रीजन' में कान्ट ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि इन तीनों को तर्कबुद्धि द्वारा प्रमाणित नहीं किया जा सकता। इसी कारण नैतिक दर्शन से सम्बंधित अपनी पुस्तक 'क्रिटीक ऑफ प्रैक्टिकल रोजन' में उन्होंने कहा है कि ये तीनों मान्यताएं केवल हमारी आस्था का ही विषय हैं, तर्कबुद्धि का नहीं। दूसरे शब्दों में, कान्ट के मतानुसार

हम अपनी तर्कबुद्धि द्वारा संकल्प की स्वतन्त्रता, आत्मा की अमरता और ईश्वर की सत्ता का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते; हम इन तीनों को केवल अपनी आस्था के आधारपर ही स्वीकार कर सकते हैं। परन्तु कान्ट का निश्चित मत है कि तर्क- बुद्धि द्वारा प्रमाणित न होते हुए भी हमारी आस्था पर आधारित ये तीनों मान्यताएं नैतिकता के लिए अनिवार्य हैं।

- **संकल्प की स्वतंत्रता :-** कान्ट नैतिक नियम को मनुष्य पर किसी बाह्य शक्ति द्वारा आरोपित न मानकर केवल आत्मप्रेरित ही मानते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य नैतिक नियम का पालन किसी बाह्य शक्ति द्वारा बाध्य होकर नहीं अपितु स्वयं अपने स्वतन्त्र संकल्प से प्रेरित होकर ही करता है। ऐसी स्थिति में हमें यह मानना पड़ता है कि मनुष्य को संकल्प की स्वतंत्रता प्राप्त है- अर्थात् वह कोई कर्म करने अथवा न करने के लिए स्वतंत्र है। हम प्रायः यह कहते हैं कि उस व्यक्ति को वह कर्म करना चाहिए अथवा नहीं करना चाहिए। कान्ट के मतानुसार जब हम ऐसा कहते हैं तो हम यह मान लेते हैं कि यदि वह व्यक्ति चाहे तो वह उस कर्म को कर सकता है अथवा छोड़ सकता है। इसी तथ्य को उन्होंने वाक्य में व्यक्त किया है : "मुझे करना चाहिए, अतः मैं कर सकता हूँ"। कान्ट का यह प्रसिद्ध वाक्य मनुष्य के संकल्प-स्वातंत्र्य की ओर संकेत करता है जो उनके विचार में नैतिकता के लिए अनिवार्य है। यदि मनुष्य को अपनी इच्छानुसार कर्म करने की स्वतंत्रता नहीं है तो यह कहना निरर्थक है कि उसे कोई कर्म करना चाहिए अथवा नहीं करना चाहिए। इससे स्पष्ट है कि 'चाहिए' अथवा 'कर्तव्य' का विचार मूलतः मनुष्य के संकल्प-स्वातंत्र्य पर ही आधारित है। यदि यह मान लिया जाय कि मनुष्य के समस्त कर्म आवश्यक रूप में किसी बाह्य शक्ति अथवा स्वयं उसकी प्रवृत्तियों,इच्छाओं अथवा भावनाओं द्वारा ही निर्धारित होते हैं तो उसके जीवन में 'कर्तव्य' का कोई अर्थ ही नहीं रह जाएगा। ऐसी स्थिति में उसे अपने कर्मों के लिए उत्तरदायी मानना और उनके कारण उसकी प्रशंसा अथवा निदा करना नितान्त निरर्थक होगा। जिस कर्म को करने या न करने के लिए मनुष्य बाध्य है उसे करने या छोड़ने के लिए वह स्वयं उत्तरदायी नहीं हो सकता, फलतः किसी भी स्थिति में उसकी प्रशंसा अथवा निंदा नहीं की जा सकती। यही कारण है कि कान्ट ने मनुष्य के संकल्प की स्वतंत्रता को नैतिकता के लिए अनिवार्य माना है जिसके अभाव में नंतिक उत्तरदायित्व तथा कर्तव्य का विचार ही निरर्थक हो जाता है। संकल्प-स्वातंत्र्य के स्वरूप पर कान्ट ने विस्तारपूर्वक विचार किया है। उनका कथन है कि जब मनुष्य का संकल्प किन्हीं बाह्य कारणों अथवा शक्तियों द्वारा प्रभावित तथा निर्धारित नहीं होता तभी उसे स्वतंत्र माना जा सकता है। दूसरे शब्दों में, मानवीय संकल्प का बाह्य शक्तियों द्वारा निर्धारित अथवा शासित न होना ही संकल्प-स्वातंत्र्य है। परन्तु कान्ट स्वयं यह स्वीकार करते हैं कि संकल्प-स्वातंत्र्य का उपर्युक्त अर्थ केवल निषेधात्मक है। इस निषेधात्मक अर्थ के अतिरिक्त

उन्होंने संकल्प-स्वातंत्र्य का विध्यात्मक अर्थ भी बताया है। इसके अनुसार मनुष्य का संकल्प जिन नियमों का पालन करता है उनका विधान भी वह स्वयं ही करता है। कान्ट का विचार है कि यद्यपि संकल्प बाह्य शक्तियों अथवा नियमों द्वारा शासित नहीं होता, फिर भी वह नियमरहित नहीं है। वह ऐसे विशेष नियमों द्वारा ही शासित होता है जिनका विधान वह स्वयं करता है, कोई अन्य बाह्य शक्ति नहीं। इस प्रकार संकल्प-स्वातंत्र्य का विध्यात्मक अर्थ यह है कि संकल्प केवल आत्मप्रेरित नियमों द्वारा ही निर्धारित अथवा शासित होता है। हम पिछले खंड में देख चुके हैं कि ऐसे संकल्प को ही कान्ट ने 'स्वाधीन संकल्प' की संज्ञा दी है। संक्षेप में कान्ट के मतानुसार उपर्युक्त निषेधात्मक तथा विध्यात्मक दोनों अर्थों में संकल्प-स्वातंत्र्य नैतिकता के लिए अनिवार्य है, क्योंकि इसके अभाव में नैतिक उत्तरदायित्व एवं कर्तव्य का विचार निरर्थक हो जाता है।

- **आत्मा की अमरताः** संकल्प की स्वतंत्रता की भांति आत्मा की अमरता को भी कान्ट नैतिकता की आवश्यक आधारभूत मान्यता के रूप में स्वीकार करते हैं। उनका कथन है कि मनुष्य की नैतिक पूर्णता के लिए आत्मा की अमरता को मानना बहुत आवश्यक है। कान्ट के विचार में नैतिक पूर्णता का अर्थ है निरपेक्ष आदेश के अनुसार केवल कर्तव्य-चेतना से प्रेरित होकर सदैव कर्म करना । परंतु, मनुष्य की भावनार इच्छाएं तथा प्रवृत्तियां उसकी नैतिक पूर्णता में बाधा डालती हैं। इनसे प्रेरित होकर वह प्रायः अपने कर्तव्य के विरुद्ध आचरण करता है। ऐसी स्थिरत में नैतिक पूर्णता के लिए वासनाओं, इच्छाओं प्रवृत्तियों और पर विजय प्राप्त करना बहुत आवश्यक है। परंतु कान्ट के मतानुसार यह अत्यंत कठिन कार्य है, अतः मनुष्य केवल एक ही जीवन में इसे पूर्ण नहीं कर सकता। अपनी वासनानों तथा इच्छाओं पर पूर्ण विजय प्राप्त करने के लिए उसे अनेक जन्मों तक निरंतर प्रयास करने की आवश्यकता होती है। यह सतत प्रयास वह तभी कर सकता है जब उसका एक ही जीवन में अंत न हो जाय अर्थात् जब उसकी आत्मा अनश्वर तथा अमर हो और वह अनेक जीवन प्राप्त कर सके। इसी आधार पर कान्ट ने आत्मा की अमरता को नैतिक पूर्णता के लिए अनिवार्य माना है।
- ईश्वर का अस्तित्व :- यद्यपि कान्ट यह मानते हैं कि नैतिक नियमों का निर्माण ईश्वर नहीं करता और ईश्वर के दंड के भय से किया हुआा कर्म नैतिक नहीं होता है, फिर भी उन्होंने ईश्वर की सत्ता को नैतिकता की आवश्यक मान्यता के रूप में स्वीकार किया है। अपनी इस मान्यता को उचित प्रमाणित करने के लिए उन्होंने निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किया हैः- यह सत्य है कि मनुष्य को आनंद प्राप्त करने के लिए नहीं अपितु केवल कर्तव्य का पालन करने के लिए ही कर्म करना चाहिए, किन्तु जो व्यक्ति केवल कर्तव्य चेतना से प्रेरित होकर कर्म करता है उसे अंततः आनंद अवश्य प्राप्त होना चाहिए। परंतु प्रायः यह देखा जाता है कि अपने कर्तव्य का पालन

करने वाले व्यक्ति को आनंद की प्राप्ति नहीं होती। ऐसी स्थिति में एक ऐसे सर्व- शक्तिमान न्यायाधीश की आवश्यकता है जो कर्तव्यपरायण व्यक्ति को उसके सद्गुण के उपयुक्त आनंद प्रदान करने में समर्थ हो। स्पष्ट है कि ऐसा न्यायाधीश केवल ईश्वर ही हो सकता है जो सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान तथा सर्वव्यापक है। ईश्वर ही दुराचारी व्यक्ति को दुःख और सद्गुणी व्यक्ति को आनंद प्रदान कर सकता है जिसका वह अधिकारी है, अतः दुराचार को दुःख से तथा सद्गुण को आनंद से युक्त करने के लिए ईश्वर का अस्तित्व स्वीकार करना आवश्यक है। इस प्रकार कान्ट के मतानुसार ईश्वर की सत्ता को स्वीकार किए बिना 'पूर्ण शुभ' - जिसमें सद्गुण तथा आनंद दोनों सम्मिलित होते हैं- की कल्पना साकार नहीं हो सकती। इसी आधार पर उन्होंने नैतिकता के लिए ईश्वर के अस्तित्व को अनिवार्य माना है।

समस्त मानवीय कमों की नैतिकता को केवल कर्तव्य- चेतना तक ही सीमित कर देते हैं। कि उनके विचार में केवल कर्तव्य-चेतना से प्रेरित कर्म ही शुभ अथवा नैतिक है। उन्होंने स्पष्ट कहा है कि यदि कोई व्यक्ति प्रेम, दया, उदारता, सहानुभूति आदि ऐसे कर्म का कोई नैतिक मूल्य नहीं है। परंतु अनेक दार्शनिकों इस मत को स्वीकार नहीं किया। उनका कथन है कि केवल कर्तव्यपालन करने की इच्छा से प्रेरित होकर जो कर्म किया जाता है उसकी अपेक्षा वह कर्म नैतिक दृष्टि से कहीं अधिक उत्कृष्ट है जो दया, उदारता, स्नेह, सहानुभूति, परोपकार आदि स्वाभाविक मानवीय प्रवृत्तियों से प्रेरित होकर उदाहरणार्थ यदि कोई व्यक्ति स्नेह और सहानुभूति से प्रेरित श्री मनुष्य की सेवा तथा सहायता करता है तो उसका यह कर्म कर्म की अपेक्षा नैतिक दृष्टि से अधिक मूल्यवान माना जाएगा होते हुए भी केवल कर्तव्य- चेतना से बाध्य होकर उस दुःखी मनुष्य और सहायता करता है। इमैनुएल कांट (Immanuel Kant) का कर्तव्य सिद्धांत (Deontological Ethics) नैतिक दर्शन का एक प्रमुख आधार है। इसमें उन्होंने नैतिकता को कर्तव्य, तर्क और मानव गरिमा के आधार पर परिभाषित किया। उनके इस सिद्धांत का प्रशासनिक नैतिकता में भी गहरा प्रभाव है। कांट का नैतिक दर्शन इस विचार पर आधारित है कि नैतिकता का आधार परिणाम नहीं, बल्कि कर्तव्य है।अतः प्रत्येक व्यक्ति को ऐसा आचरण करना चाहिए कि उसका कार्य सार्वभौमिक नियम बन सके।प्रत्येक व्यक्ति को साधन के रूप में नहीं, बल्कि एक उद्देश्य के रूप में देखा जाना चाहिए।अर्थात, लोगों का उपयोग केवल अपने लाभ के लिए नहीं किया जा सकता।

प्रत्येक व्यक्ति के नैतिक निर्णय तर्क और निष्पक्षता पर आधारित होने चाहिए, न कि भावनाओं या व्यक्तिगत इच्छाओं पर।कांट का कर्तव्य सिद्धांत प्रशासनिक नैतिकता में नैतिक और जिम्मेदार प्रशासन की नींव रखता है। कांट के अनुसार प्रशासकों को सभी नागरिकों के साथ समान और निष्पक्ष व्यवहार करना चाहिए। प्रशासकों को

नैतिक नियमों और संविधान के प्रति कर्तव्यनिष्ठ होना चाहिए, भले ही परिणाम उनके पक्ष में न हों। प्रशासनिक अधिकारी अपने कार्यों के लिए जवाबदेह हैं और उन्हें जनता की भलाई के लिए कार्य करना चाहिए।यदि कोई आदेश या निर्णय अनैतिक हो, तो प्रशासक को इसका विरोध करना चाहिए। नागरिकों के हितों को प्राथमिकता देना, न कि व्यक्तिगत लाभ को।एक प्रशासक को रिश्वत लेने से मना करना चाहिए, भले ही इससे उसे व्यक्तिगत हानि हो। यदि कोई नीति अल्पसंख्यक वर्ग के अधिकारों को नुकसान पहुंचा रही हो, तो उसे निरस्त किया जाना चाहिए।कांट का कर्तव्य सिद्धांत प्रशासनिक नैतिकता के लिए एक मजबूत आधार प्रदान करता है, जो तर्क, कर्तव्य और मानव गरिमा पर आधारित है।

1-4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

1.4.1.सुकरात का नैतिक दर्शन (Moral philosophy of Socrates)

सुकरात नेऐसे नैतिक सिद्धांतों के प्रतिपादन का प्रयास किया जो केवल व्यक्ति विशेष की इच्छाओं तथा भावनाओं पर ही आधारित न हों, अपितु मनुष्य होने के नाते सभी व्यक्तियों पर समान रूप से लागू हो सकें। सुकरात भी मौखिक उपदेशों द्वारा ही अपने विचारों का प्रचार किया करते थे, अतः उनके द्वारा लिखित कोई भी पुस्तक आज हमें उपलब्ध नहीं है। सुकरात के जीवन और दर्शन को जानने के लिए मुख्यतः प्लेटो के ग्रंथों को ही आधार मानना पड़ता है, क्योंकि उनमें सुकरात के विचारों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। परंतु प्लेटो द्वारा वर्णित सुकरात के विचारों का मूल्यांकन करते समय इस बात का ध्यान रख लेना आवश्यक है कि प्लेटो स्वयं बहुत बड़े दार्शनिक थे, अतः निश्चयपूर्वक यह कहना बहुत कठिन है कि उन्होंने अपने ग्रंथों में सुकरात के मुख से जो विचार व्यक्त कराए हैं वे किस सीमा तक सुकरात के दर्शन को वास्तव में अभिव्यक्त करते हैं और उन पर स्वयं प्लेटो के दर्शन का कितना प्रभाव है। इस कठिनाई के कारण सुकरात के दर्शन के विषय में कोई निश्चित मत व्यक्त करना बहुत कठिन है। परंतु फिर भी सुकरात के नैतिक सिद्धांतों पर विचार करने के लिए हमें प्लेटो के ग्रंथों की ही सहायता लेनी पडती है, क्योंकि हमारे लिए ये ग्रंथ ही सुकरात के दर्शन को जानने का मुख्य साधन हैं।प्लेटो के मतानुसार सुकरात ने 'सत्य की खोज' ही दर्शन का मूल उद्देश्य माना है। सुकरात का दृढ़ विश्वास था कि जीवन और जगत् के विषय में हमारा जान बहुत ही सीमित है, अतः सर्वप्रथम हमें इस सम्बन्ध में अपनी अनभिज्ञता स्वीकार करनी चाहिए। वे प्रायः कहा करते थे कि सबसे पहले प्रत्येक व्यक्ति को यह तथ्य समझ लेना चाहिए कि वह कुछ नहीं जानता अर्थात् वह जीवन और जगत् के विषय में नितांत अनभिज्ञ है। सुकरात के अनुसार इस सत्य का ज्ञान दर्शन का मूल स्रोत है। अपने श्रोताओं तथा शिष्यों को इसी सत्य का ज्ञान कराने के लिये सुकरात उनसे अनेक दार्शनिक

प्रश्न पूछा करते थे। उदाहरणार्थ वे उनसे पूछते थे कि 'उचित' एवं 'शुभ' का क्या अर्थ है, साहस और सदाचार क्या है, सत्य और न्याय का स्वरूप क्या है इत्यादि । इस प्रकार के दार्शनिक प्रश्न पूछकर सुकरात स्वयं इनका उत्तर नहीं देते थे अपितु अपने शिष्यों को इस तथ्य का ज्ञान कराते थे कि हममें से कोई भी इनके ठीक-ठीक और निश्चित उत्तर नहीं जानता । अपनी इसी पूर्ण अनभिज्ञता को स्वीकार करते हुए वे अपने सम्बन्ध में सदा यही कहा करते थे कि मुझे एक ही बात का ठीक-ठीक ज्ञान है और वह यह कि मैं कुछ नहीं जानता । इस प्रकार महान विचारक होते हुए भी सुकरात ने जीवन और जगत् के विषय में विनम्रतापूर्वक अपना अज्ञान स्वीकार करना दर्शन का प्रथम सोपान माना है।

1.4.2.सुकरात का प्रमुख नैतिक सिद्धांत (Socrates' main ethical principle)

- **ज्ञान ही सद्गुण है":-**ज्ञान को ही नैतिकता का मूल आधार मानते हुए वे कहते हैं कि "ज्ञान ही सद्गुण है"। इसी सिद्धांत को सुकरात का प्रमुख नैतिक सिद्धांत माना जाता है, जिसकी अनेक विचारकों ने विस्तृत् व्याख्या की है। सुकरात के विचार में 'ज्ञान' का अर्थ बहुत व्यापक है। ज्ञान कुछ विशेष तथ्यों की जानकारी तक ही सीमित नहीं है अपितु शुभ-अशुभ, उचित-अनुचित, सत्य-असत्य, न्याय-अन्याय आदि के भेद को ठीक-ठीक समझना भी ज्ञान के अंतर्गत ही आता है। अरस्तु ने सुकरात के इस सिद्धांत की व्याख्या करते हुए कहा है कि उनके मतानुसार समस्त नैतिक सद्गुण वस्तुतः ज्ञान के ही रूप हैं, क्योंकि यदि हमें 'शुभ', 'सत्य' 'न्याय', आदि का ठीक-ठीक ज्ञान हो तो हम अपने जीवन में ऐसे कर्म कभी नहीं कर सकते जो अशुभ या अनुचित हों। सुकरात मानते हैं कि कोई भी व्यक्ति जानबूझ कर अनुचित कर्म नहीं करता, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य शुभ की इच्छा करता है। यदि कोई मनुष्य अशुभ की इच्छा रखता है तथा अनुचित कर्म करता है तो इसका अर्थ यही है कि उसे शुभ और उचित का ज्ञान ही नहीं है,वह नहीं जानता कि उसके लिए शुभ एवं उचित क्या है। इस प्रकार सुकरात के विचार में सभी प्रकार की बुराइयां केवल अज्ञान से ही उत्पन्न होती है, अतः बुराइयों से मुक्त होने के लिए अज्ञान का निराकरण आवश्यक है। मनुष्य को नैतिक सद्गुणों का ज्ञान कराया जा सकता है और उसे श्रेष्ठ व्यक्ति बनाने का यही एकमात्र उपाय है। अपने सभी शिष्यों को सद्गुणों की शिक्षा देकर उन्होंने सदैव अपने इस विश्वास को कार्यान्वित करने का प्रयास किया। अनेक दार्शनिक सुकरात के इस सिद्धांत को पूर्णतः सत्य नहीं मानते। इस सिद्धांत पर आपत्ति करते हुए अरस्तु ने कहा है कि श्रेष्ठ मनुष्य होने के लिए सद्गुणों का ज्ञान ही पर्याप्त नहीं है, उनके अनुसार आचरण करना भी आवश्यक है। यह अनिवार्य नहीं है कि जो व्यक्ति सद्गुणों का ज्ञान प्राप्त कर चुका है वह सदैव उनके अनुसार आचरण करेगा। इस संभावना को

अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि सद्गुणों का ज्ञान प्राप्त कर लेने के पश्चात् भी कोई व्यक्ति अपने व्यावहारिक जीवन में सदैव उनके अनुसार आचरण न करे। इसी कारण वर्तमान युग में भी बहुत-से दार्शनिक सुकरात के इस सिद्धांत को पूर्ण तया स्वीकार नहीं करते।

- **सद्गुण, शुभ और सुखः-** सुकरात के मतानुसार ज्ञान की भांति सद्गुण का भी बहुत व्यापक अर्थ है। वे सद्गुण, शुभ तथा सुख को एक दूसरे से पृथक् न मान कर सम्मिलित मानते है। उनका कथन है कि विवेक, साहस, संयम, न्याय आदि सभी सद्गुण अंततः ज्ञान के ही रूप हैं, अतः उनमें कोई मौलिक भेद नहीं है। सुकरात के इस सिद्धांत को 'सद्गुणों की एकता का सिद्धांत' कहा जाता है। इस सिद्धांत के अनुसार सभी सद्गुण परस्पर पूरक होते हैं, अतः उनमें कोई विरोध संभव नहीं है। परंतु सुकरात के इस सिद्धांत की सत्यता संदिग्ध ही प्रतीत होतीहै, क्योंकि यदि किसी व्यक्ति में कोई एक सद्गुण है तो इसका अर्थ यह नहीं कि उसमें अन्य सभी सद्गुण भी अवश्य ही होंगे। उदाहरणार्थ एक व्यक्ति साहसी होते हुए भी अन्यायी हो सकता है। ऐसी स्थिति में सुकरात द्वारा प्रतिपादित, समस्त सद्गुणों की एकता का सिद्धांत पूर्णतः संतोषप्रद प्रतीत नहीं होता। वस्तुतः सुकरात सद्गुण की कोई स्पष्ट और निश्चित परिभाषा नहीं दे सके। वे कभी तो सद्गुण को आनंद का पर्याय बताते हैं और कभी ज्ञान का ।इसी प्रकार शुभ के संबंध में सुकरात ने जो विचार प्रकट किये हैं वे भी बहुत अस्पष्ट तथा अनिश्चित है। वे शुभ के अंतर्गत आनंद को भी सम्मिलित करते है और आनंद से स्वतंत्र शुभ की सत्ता स्वीकार नहीं करते। दूसरे शब्दों में, उनके मतानुसार जो कुछ वास्तव में आनंदमय है वह शुभ है और जो कुछ शुभ है वह आनंदप्रद है। उनका यह भी कथन है कि 'अमूर्त शुभ' की धारणा निरर्थक है, क्योंकि कोेई विशेष वस्तु अथवा विचार ही शुभ हो सकता है। उन्होंने स्वतःसाध्य शुभ तथा साघनमूलक शुभ के भेद को भी स्पष्ट नहीं किया, क्योंकि सम्भवतः वे इन दोनों को पृथक् नहीं मानते थे। यद्यपि सुकरात 'शुभ' की कोई निश्चित परिभाषा नहीं दे सके, फिर भी उनका यह दृढ़ विश्वास था कि 'शुभ' पूर्णतः व्यक्तिनिष्ठ नहीं है। वे यह तो स्वीकार करते थे कि अंततः मनुष्य ही शुभ का अनुभव करता है, अतः शुभ मनुष्य के अनुभव से पृथक् नहीं है। परंतु वे इस विचार से सहमत नहीं थे कि शुभ केवल व्यक्ति विशेष की इच्छाओं अथवा भावनाओं पर ही आधारित है। उनके मतानुसार शुभ का सम्बन्ध मानव-कल्याण से है, अतः उसे पूर्णतया व्यक्ति- निष्ठ नहीं माना जा सकता। इस प्रकार सुकरात ने शुभ के सम्बन्ध में व्यक्तिनिष्ठवाद तथा सापेक्षतावाद का खंडन किया है।

सद्गुण तथा शुभ की भांति सुख के विषय में भी सुकरात का मत पूर्णतः स्पष्ट नहीं है। वे सुख को सद्गुण और शुभ से भिन्न नहीं मानते । इसी कारण उन्होंने कहा है कि सुख मनुष्य के शुभ आचरण में ही निहित है। यद्यपि उनका

पालन करने की ही शिक्षा दी। वस्तुतः वे अपने देश के कानून तथा उसके प्रति अपने कर्त्तव्य को इतना अधिक महत्त्व देते थे कि उसके लिए उन्होंने अपने जीवन का सहर्ष बलिदान कर दिया। उन पर देश के युवकों को भ्रष्ट करने का आरोप लगाकर एथेन्स के तत्कालीन शासकों ने उन्हें मृत्यु-दंड दिया था। कहा जाता है कि सुकरात के कुछ मित्रों ने उन्हें जेल से भाग जाने का अवसर प्रदान किया था, किंतु वे इसके लिए तैयार नहीं हुए, क्योंकि ऐसा करना उनके विचार में कायरता एवं कर्तव्यत्याग का द्योतक था। वे सत्य और कर्त्तव्य के मार्ग से हटने की अपेक्षा आत्मबलिदान करना कहीं अधिक श्रेयस्कर समझते थे, अतः उन्होंने सहर्ष मृत्यु- दण्ड स्वीकार कर लिया। वस्तुतः संयम, त्याग, सत्य एवं कर्त्तव्य के प्रति उनकी अगाध निष्ठा का यह प्रबलतम प्रमाण है। सुकरात ग्रीक दार्शनिक थे जिन्हें पश्चिमी दर्शन के संस्थापक तथा विचारों की नैतिक परंपरा को अपनाने वाले पहले नैतिक विचारकों में से एक के रूप में संदर्भित किया जाता है।

3.4.3.सुकरात कुछ मुख्य शिक्षाएँ(main teachings of Socrates):

- **सुकरात पद्धति:** यह सीखने और सिखाने का एक ऐसा तरीका है जिसमें सोच और समझ को बेहतर बनाने के लिये प्रश्नों और उत्तरों का उपयोग किया जाता है। सुकरात ने सदाचार, न्याय, साहस आदि जैसे विषयों के संदर्भ में इस तरीके का इस्तेमाल किया था। उनका मानना था कि स्वयं से सवाल करके कोई व्यक्ति सच्चाई का पता लगाने के साथ बेहतर इंसान बन सकता है।
- **सुकरात का विरोधाभासी सिद्धांत:** ये ऐसे कथन हैं जो विरोधाभासी प्रतीत होते हैं लेकिन इनसे गहन अंतर्दृष्टि प्राप्त होती है। उनमें से कुछ निम्न हैं जैसे: "केवल एक चीज जो मैं जानता हूँ वह यह है कि मैं कुछ नहीं जानता", "कोई भी स्वेच्छा से गलत नहीं करता है", "सद्गुण ही ज्ञान है" आदि। ये विरोधाभास पारंपरिक ज्ञान को चुनौती देने के साथ किसी को अपने मूल्यों और कार्यों पर पुनर्विचार करने हेतु प्रेरित करते हैं।
- **सुकरात की नैतिकता:** इसके अनुसार सद्गुण सबसे उच्च मूल्य है और इससे खुशी का मार्ग प्रशस्त होता है। सुकरात के अनुसार सद्गुण को प्रश्न पूछकर तथा उत्तर देकर सीखा जा सकता है। उनके अनुसार व्यक्ति को अपने तर्क और विवेक से कार्य करना चाहिये न कि दूसरों के अनुसार। ये शिक्षाएँ लोक सेवा में नैतिक निर्णय लेने के क्रम में प्रासंगिक हैं क्योंकि इससे व्यक्ति निम्नलिखित के लिये प्रोत्साहित होता है:

- कोई भी कार्रवाई करने से पहले मुद्दों की स्पष्टता और उन्हें समझने पर बल देना।
- अपने स्वयं के पूर्वाग्रहों और उद्देश्यों पर सवाल उठाने के साथ विभिन्न दृष्टिकोणों और तर्कों पर विचार करना।
- अपने आचरण में उत्कृष्टता और सत्यनिष्ठा को महत्त्व देने के साथ भ्रष्टाचार से दूर रहना।

- दूसरों की प्रतिष्ठा और अधिकारों का सम्मान करने के साथ करुणा और समानुभूति के साथ कार्य करना।
- विभिन्न नीतियों, कार्यक्रमों और परियोजनाओं के संबंध में सार्वजनिक परामर्श, विचार-विमर्श और मूल्यांकन करने के क्रम में सुकरात की पद्धति का उपयोग किया जाना।
- अहंकार, अज्ञानता एवं हठधर्मिता को दूर करने तथा विनम्रता, जिज्ञासा, समालोचनात्मक विचार एवं आत्म-सुधार को बढ़ावा देने के लिये सुकरात के विरोधाभासी सिद्धांतों का पालन करना।
- आचार संहिता, नैतिकता और लोक सेवा से संबंधित मूल्यों का पालन करने और इनसे समझौता करने वाले किसी भी प्रलोभन या दबाव का प्रतिरोध करने हेतु सुकरात के नैतिकता संबंधी सिद्धांतों का पालन किया जाना।

समालोचनात्मक विचार, ज्ञान की खोज, नैतिकता और लोक कल्याण को प्राथमिकता देने से संबंधित सुकरात की शिक्षाएँ लोक सेवा में नैतिक निर्णय लेने के क्रम में सहायक होती हैं। जो लोक सेवक इन शिक्षाओं को अपनाते हैं वे तार्किक एवं नैतिक रूप से उचित निर्णय ले सकते हैं जिससे अंततः समाज के सर्वोत्तम हितों को बढ़ावा मिलता है।

3-5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(अ). महान दार्शनिक इमॅन्युएल कांट किस देश से सम्बन्ध रखते थे **?**

(आ).महान जर्मन दार्शनिक इमैन्युअल कान्ट के नैतिक सिद्धांत क्या कहलाता है **?**

(इ)**.**"सद्गुण ही ज्ञान है" यह सिद्धांत किस दार्शनिक ने दिया **?**

(ई).सुकरात ने नैतिकता का मूल आधार किसे माना है **?**

(उ). नैतिकता का आधार परिणाम नहीं**,** बल्कि कर्तव्य है यह विचारधारा किस दार्शनिक की है **?**

3.6.सारांश (Summary)

सुकरात और इमैनुअल कांट दोनों ही नैतिक दर्शन के प्रमुख विचारक हैं, लेकिन उनके नैतिक सिद्धांत अलग-अलग दृष्टिकोणों पर आधारित हैं। सुकरात (469-399 ई.पू.) एक प्राचीन ग्रीक दार्शनिक थे, जिनका नैतिक दर्शन "नैतिकता के ज्ञान" और "गुण (Virtue)" पर आधारित था।सुकरात का मानना था कि *"ज्ञान ही गुण है" (Knowledge is Virtue).*किसी व्यक्ति के गलत कार्य करने का कारण उसकी अज्ञानता है। सही कार्य के लिए सही ज्ञान आवश्यक है।उन्होंने यह भी कहा कि जो व्यक्ति सही और गलत के बीच का ज्ञान रखता है, वह स्वाभाविक रूप से सही कार्य करेगा।सुकरात ने आत्मा की उन्नति को सबसे महत्वपूर्ण कार्य बताया। उन्होंने कहा

कि भौतिक सुख-सुविधाएँ आत्मा के विकास से कमतर हैं। सुकरात ने नैतिकता को सार्वभौमिक और अपरिवर्तनीय माना। उनके अनुसार, नैतिक मूल्यों का अस्तित्व समाज या संस्कृति से परे है।सुकरात ने प्रश्नोत्तरी और संवाद की पद्धति (Dialectic Method) का उपयोग किया, जिसमें वे लोगों से प्रश्न पूछकर उन्हें सत्य की ओर ले जाते थे।इमैनुअल कांट (1724-1804) आधुनिक नैतिक दर्शन के एक महान विचारक थे। उनके नैतिक सिद्धांत को कर्तव्य-आधारित नैतिकता (Deontology) कहा जाता है।कांट के अनुसार, नैतिकता का आधार *कर्तव्य है,* न कि परिणाम।नैतिकता का अर्थ है कि हम *कर्तव्य* का पालन करें, भले ही परिणाम कुछ भी हो।कांट का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत "श्रेणीबद्ध अनिवार्यता" है। यह एक ऐसा नैतिक नियम है, जिसे बिना किसी शर्त के लागू किया जा सकता है। कांट के अनुसार,ऐसा कार्य करो जिसे तुम यह चाहो कि वह सार्वभौमिक नियम बन जाए।किसी व्यक्ति को केवल साधन के रूप में नहीं, बल्कि *स्वयं में साध्य* मानो।इसका अर्थ है कि हमें मनुष्यों का सम्मान करना चाहिए और उनका उपयोग केवल अपने स्वार्थ के लिए नहीं करना चाहिए।व्यक्ति नैतिकता के नियमों को स्वयं अपने विवेक से चुनता है और उन्हें पालन करने के लिए बाध्य होता है।नैतिकता का आधार "सद्भावना" (Good Will) है।सद्भावना का अर्थ है कि व्यक्ति सही कर्तव्य का पालन करने की ईमानदार इच्छा रखता हो।कांट ने परिणामवाद का विरोध किया। उनके अनुसार, सही कार्य का मूल्य इसके परिणाम से नहीं, बल्कि उस कार्य को करने के पीछे की *नीयत* से तय होता है।

3.7.सूचक शब्द (Key Words)

- **'शुभ संकल्प'-** जब मनुष्य का संकल्प केवल विशुद्ध कर्तव्य चेतना पर आधारित होता है तो कान्ट के विचार में उसे नैतिक अथवा शुभ संकल्प कहा जा सकता है।
- **निरपेक्ष**-निरपेक्ष का अर्थ है किसी पर अवलंबित न हो या जो किसी पर निर्भर न हो ।
- **'कर्तव्य के लिए कर्तव्य'**-जब मनुष्य केवल कर्तव्य के लिए अपने कर्तव्य का पालन करता है और इससे किसी भी अन्य उद्देश्य की पूति की इच्छा नहीं करता।
- **सद्गुण-**सद्गुण को अंग्रेज़ी में 'Virtue' कहते हैं. यह शब्द ग्रीक भाषा के 'ऐरेट' शब्द से बना है, जिसका अर्थ है- श्रेष्ठता. सद्गुण वह मनोवृत्ति है जिसे अभ्यास और प्रयत्न के ज़रिए मज़बूत बनाया जा सकता है
- **सार्वभौमिकता-**सार्वभौमिकता वह विचार है जो मानता है कि कुछ तथ्य है जो सभी देश-काल में सत्य है। जिसका अस्तित्व पूरे ब्रह्माण्ड में एक ही रूप में है।

3.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- कान्ट के शुभ संकल्प के स्वरूप और महत्त्व की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
- कान्ट के कर्तव्य सिद्धांत की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
- ज्ञान ही सद्गुण है सुकरात इस सिद्धांत की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
- सुकरात के नैतिक विचारों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
- कान्ट के मुख्य नैतिक नियमों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
- कान्ट के कर्तव्य सिद्धांत के लिए आवश्यक नैतिक मान्यताओं की विस्तार से व्याख्या कीजिए।

3.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(अ). जर्मनी

(आ).निरपेक्ष आदेश का सिद्धांत' अथवा 'कर्त्वयमूलक सिद्धांत' कहलाता है।

(इ)**.**सुकरात

(ई).ज्ञान को

(उ). महान दार्शनिक इमॅन्युएल कांट

3.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

- अरोड़ा**,** आर. के. (**2008)** शासन में नैतिकता: नवीन मुद्दे और उपकरण। रावत: जयपुर
- अरोड़ा**,** रमेश के. (संपादक) (**2014)** लोक सेवा में नैतिकता**,** सत्यनिष्ठा और मूल्य। न्यू एज इंटरनेशनल: नई दिल्ली
- सी. भार्गव**,** आर. (**2006)** भारतीय संविधान की राजनीति और नैतिकता। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस: नई दिल्ली
- डी. चक्रवर्ती**,** विद्युत (**2016)** भारत में शासन में नैतिकता। रूटलेज: नई दिल्ली
- ई. चतुर्वेदी**,** टी. एन. (संपादक) (**1996)** सार्वजनिक जीवन में नैतिकता। आईआईपीए: नई दिल्ली
- एफ. गांधी**,** महाथिरिम (**2009)** हिंद स्वराज। राजपाल एंड संस: दिल्ली
- जी. गोडबोले**,** एम. (**2003)** सार्वजनिक जवाबदेही और पारदर्शिता: सुशासन के आवश्यक तत्व। ओरिएंट लॉन्गमैन: नई दिल्ली

- एच. हूजा, आर. (**2008)** भ्रष्टाचार, नैतिकता और जवाबदेही: एक प्रशासक द्वारा निबंध। आईआईपीए: नई दिल्ली
- आई. माथुर, बी. पी. (**2014)** शासन के लिए नैतिकता: सार्वजनिक सेवाओं का पुनर्निर्माण। रूटलेज: नई दिल्ली

Subject : Public Administration -Administrative ethics in governance	
Course Code : PUBA 302	**Author :** Dr. Parveen sharma
Lesson No. : 4	**Vetter :**
अनुप्रयुक्त नैतिकता- असमानता, गर्भपात, भ्रूण हत्या, आत्महत्या, पर्यावरण क्षरण **(Applied ethics: inequality,abortion,foeticide,suicide, environmental degradation)**	

अध्याय की सरंचना

4.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

4.2.परिचय (Introduction)

4.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

4.3.1.अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र का अर्थ ,क्षेत्र व महत्व (Meaning, scope and importance of applied ethics)

4.3.2.गर्भपात (Abortion)

4.3.2.1.गर्भपात के समर्थन में नैतिक तर्क (Moral arguments in support of abortion)

4.3.2.2.गर्भपात के विरोध में नैतिक तर्क (Moral arguments against abortion)

4.3.2.3.गर्भपात और कानून (Abortion and the law)

4.3.3.पर्यावरण नैतिकता (Environmental Ethics)

4.3.3.1.पर्यावरण नैतिकता के प्रकार (Types of environmental ethics)

4.3.3.2.पर्यावरण नैतिकता और धर्म (Environmental ethics and religion)

4.3.3.3.पर्यावरणीय नैतिकता बनाये रखने के उपाय (Measures to maintain environmental ethics)

4.3.3.4.पर्यावरणीय नैतिकता का महत्त्व (Importance of environmental ethics)

4.3.4.भ्रूण हत्या(Foeticide)

4.3.4.1.भ्रूण हत्या के मुख्य कारण(Main reasons for foeticide):

4.3.4.2.भ्रूण हत्या के निवारण के लिए नैतिक समाधा न (Moral solutions to prevent foeticide)

4.3.4.3.भ्रूण हत्या के पक्ष व विपक्ष में नैतिक तर्क (Moral arguments for and against foeticide)

4.3.4.4.भ्रूण हत्या और सरकारी डॉक्टरों का कर्तव्य (Foeticide and the duty of government doctors)

4.3.4.5.भ्रूण हत्या और प्रशासनिक नैतिकता(Foeticide and administrative ethics)

4.3.4.6.भ्रूण हत्या रोकने में प्रशासनिक नैतिकता की चुनौतियां (Challenges of administrative ethics in preventing foeticide)

4.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

4.4.1.असमानता (Inequality)

4.4.1.1.असमानता के नैतिक और सामाजिक प्रभाव (Ethical and social implications of inequality)

4.4.1.2.असमानता को कम करने के उपाय (Measures to reduce inequality)

4.4.2.आत्महत्या (suicide)

4.4.2.1.आत्महत्या के पक्ष- विपक्ष में दार्शनिकों के नैतिक विचार (Moral views of philosophers for and against suicide)

4.4.2.2.आत्महत्या के बारे में विभिन्न धार्मिक दृष्टिकोण (Different religious views on suicide)

4.4.2.3.लोक प्रशासन की भूमिका (Role of Public Administration)

4.5..स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

4.6.सारांश (Summary)

4.7.सूचक शब्द (Key Words)

4.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

4.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

4.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

4.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय का अध्ययन करने के बाद विद्यार्थी-

- अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र (**Applied Ethics)** के सवरूप को जान पायेंगें **;**
- असमानता, गर्भपात, भ्रूण हत्या, आत्महत्या, पर्यावरण क्षरण की अवधारणाओं के साथ अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र (**Applied Ethics)** के सम्बन्ध को जान पाएंगे।

4.2.परिचय (Introduction)

अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र दर्शनशास्त्र की एक शाखा है जिसका विषय नैतिक नियमों, सिद्धांतों या अवधारणाओं को वास्तविक जीवन के मुद्दों जैसे कि इच्छामृत्यु, गर्भपात, सरोगेसी आदि के लिए लागू करना है। "अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र" या "व्यावहारिक नैतिकता" जैसे पदों की उत्पत्ति हाल ही में हुई है जैसा कि **1970** के दशक के दौरान इसे प्रमुखता मिली जब दार्शनिकों, सिद्धांतकारों और शिक्षाविदों ने समाज में निरंतर व्याप्त समस्याओं को दूर करने के लिए नीतिशास्त्रीय सिद्धांतों और नैतिक दर्शन का उपयोग करना शुरू किया। **1960** और **1970** के दशक में दर्शनशास्त्र का विषय विभिन्न अन्य क्षेत्रों के व्यवसायियों जैसे चिकित्सा, विधि, व्यापार, इंजीनियरिंग, वैज्ञानिकों, डिजाईनर, आदि के संपर्क में आया। इस परस्पर संबंध ने संव्यावसायिक नीतिशास्त्र एवं संबंधित विषयों के प्रति रुचि पैदा की, जिससे चिकित्सीय नीतिशास्त्र और व्यावसायिक नीतिशास्त्र जैसे क्षेत्रों का विकास हुआ।अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र नैतिक दर्शन से अपना बौद्धिक प्रोत्साहन प्राप्त करता है और इसका उद्देश्य समाज में उभरती नैतिक समस्याओं का समाधान प्रदान करना है।

ऐसे विषयों की एक विस्तृत श्रृंखला है जो अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र की विषय-वस्तु बनाते हैं और इन विषयों का अस्तित्व प्राचीन समय से देखा जा सकता है। प्रत्येक समाज में लोग व्यक्तिगत स्वतंत्रता, सामाजिक समानता, अन्याय, उपेक्षित समूहों के शोषण और न्याय, समानता एवं पारदर्शिता के परस्पर संबंधित अन्य मामलों के बारे में व्यापक चिंताओं से प्रभावित होते हैं। दार्शनिकों ने न केवल सही, शुभ, सद्गुण और अन्य परस्पर संबंधित अवधारणाओं के बारे में नैतिक सिद्धांत विकसित किए हैं, बल्कि साथ ही साथ उन्होंने नैतिक समस्याओं पर भी

चर्चा की है। अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र की चिंता केवल सैद्धांतिक होने के बजाय व्यावहारिक प्रकृति की है। सैद्धांतिक और व्यावहारिक क्षेत्रों में एक निरंतर अंतराल रहा है क्योंकि लोग सार्वजनिक नीति तैयार करने और नैतिक समस्याओं को हल करने के लिए सिद्धांतों के अनुप्रयोग को समझने में में विफल रहते हैं। अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र सार्वजनिक और निजी जीवन के क्षेत्रों और अन्य जैसे, स्वास्थ्य, संबंधों, विधि, आदि क्षेत्रों में वास्तविक दुनिया की कृत्यों और उनके नैतिक संदर्भों में कार्य करता है। यह गर्भपात, अनुसंधान में मानव और पशुओं की सुरक्षा, सकारात्मक कृत्य, कार्यस्थल में नैतिक मुद्दे, गोपनीयता, सूचना की स्वतंत्रता, भावी पीढ़ियों के लिए दायित्व, बौद्धिक संपदा अधिकार, नस्ल और लिंग के आधार पर भेदभाव,पर्यावरण सम्बन्धी विषयों पर चर्चा करता है।

4.3-अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

4.3.1.अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र का अर्थ,क्षेत्र व महत्व (Meaning, scope and importance of applied ethics)

(अ).अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र (Applied Ethics) एक ऐसा क्षेत्र है जो नैतिक सिद्धांतों और विचारों को व्यावहारिक परिस्थितियों में लागू करने का अध्ययन करता है। यह दर्शनशास्त्र की वह शाखा है जो नैतिक समस्याओं, दुविधाओं और विवादास्पद मुद्दों को वास्तविक जीवन की परिस्थितियों में हल करने का प्रयास करती है।

(आ). अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र के मुख्य क्षेत्र (Main areas of applied ethics):

- **चिकित्सा नीतिशास्त्र (Medical Ethics):**यह स्वास्थ्य और चिकित्सा से संबंधित नैतिक समस्याओं का अध्ययन करता है।उदाहरण: गर्भपात, यूटानेशिया, अंग प्रत्यारोपण, क्लोनिंग आदि।
- **व्यावसायिक नीतिशास्त्र (Business Ethics):**यह व्यापारिक कार्यों और निर्णयों में नैतिक सिद्धांतों के अनुप्रयोग का अध्ययन करता है।उदाहरण: भ्रष्टाचार, उपभोक्ता अधिकार, पर्यावरणीय उत्तरदायित्व आदि।
- **पर्यावरणीय नीतिशास्त्र (Environmental Ethics):**यह पर्यावरण और मानव के बीच संबंधों को नैतिक दृष्टिकोण से समझने की कोशिश करता है।उदाहरण: जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता संरक्षण, प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग।
- **प्रौद्योगिकी और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस नीतिशास्त्र (Technology and AI Ethics):**प्रौद्योगिकी के नैतिक प्रभावों का विश्लेषण।उदाहरण: गोपनीयता (Privacy), डेटा सुरक्षा, स्वचालन से रोजगार पर प्रभाव।

- **राजनीतिक नीतिशास्त्र (Political Ethics):**यह राजनीति में नैतिकता और सार्वजनिक नीतियों पर चर्चा करता है।उदाहरण: मानव अधिकार, युद्ध, आप्रवासन नीति।

(इ). अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र का महत्व(Importance of Applied Ethics):

- **समाज में नैतिकता को बनाए रखना:** यह नैतिक सिद्धांतों को व्यवहारिक समस्याओं पर लागू करके उनके समाधान की प्रक्रिया को सरल करता है।
- **व्यक्तिगत और सामूहिक जिम्मेदारी:** यह लोगों और संगठनों को अपनी जिम्मेदारियों को समझने में मदद करता है।
- **विवादों का समाधान:** यह जटिल नैतिक मुद्दों पर विचार-विमर्श और निर्णय लेने में सहायता करता है। अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र जीवन के हर क्षेत्र में नैतिकता की भूमिका को समझने और उसे लागू करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। यह सुनिश्चित करता है कि हमारा आचरण और निर्णय नैतिक दृष्टिकोण से सही हो।

4.3.2.गर्भपात (Abortion)

गर्भपात (Abortion) का अर्थ गर्भ को समय से पहले समाप्त करना होता है, जिससे भ्रूण (fetus) या गर्भस्थ शिशु का विकास रुक जाता है। गर्भपात को दो मुख्य श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है प्रथम स्वाभाविक गर्भपात यह तब होता है जब गर्भ प्राकृतिक रूप से समाप्त हो जाता है, आमतौर पर गर्भावस्था के पहले 20 हफ्तों में।इसके कारणों में भ्रूण के विकास में समस्या, हार्मोनल असंतुलन, संक्रमण, या मां की स्वास्थ्य स्थिति शामिल हो सकती है। दूसरा चिकित्सीय गर्भपात यह गर्भावस्था को जानबूझकर समाप्त करने की प्रक्रिया है, जो किसी महिला की स्वास्थ्य स्थिति, व्यक्तिगत कारणों या अवांछित गर्भावस्था के कारण की जाती है। वर्तमान संदर्भ में गर्भपात का अर्थ है "गर्भावस्था की समाप्ति" जब गर्भपात कराने के लिए एक सचेत निर्णय लिया जाता है, तो तरह के निर्णय को नैतिक कहा जाये या अनैतिक ।एक तरफ वे लोग हैं जो गर्भपात को हत्या, घृणित और जघन्य अपराध मानते हैं। दूसरी और वे लोग हैं जो गर्भपात को प्रतिबंधित करने के किसी भी प्रयास को महिलाओं के अपने शरीर के बारे में खुद निर्णय लेने और उनके और उनके परिवारों के लिए सबसे अच्छा क्या है, के अधिकारों का घोर उल्लंघन मानते हैं। गर्भपात और नैतिकता का विषय अत्यंत जटिल, संवेदनशील, और विविध दृष्टिकोणों से प्रभावित है। यह विभिन्न धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और व्यक्तिगत मान्यताओं पर निर्भर करता है। इसे समझने के लिए कुछ मुख्य पहलुओं पर विचार किया जा सकता है:-

4.3.2.1.गर्भपात के समर्थन में नैतिक तर्क (Moral arguments in support of abortion)

- **महिला के अधिकार:** महिलाओं को अपने शरीर पर अधिकार होना चाहिए। वे महिलाओं को अपने शरीर के साथ क्या करना है यह तय करने का नैतिक अधिकार है । यह तय करने में स्वतंत्र होनी चाहिए कि गर्भ जारी रखना है या नहीं।बहुत से लोग अपने शरीर पर नियंत्रण रखने के अधिकार को एक महत्वपूर्ण नैतिक अधिकार मानते हैं। अगर महिलाओं को अवांछित भ्रूण का गर्भपात करने की अनुमति नहीं है तो वे इस अधिकार से वंचित हो जाती हैं। एक महिला को यह तय करने का अधिकार है कि वह अपने शरीर के साथ क्या कर सकती है और क्या नहीं भ्रूण महिला के शरीर के अंदर मौजूद होता है एक महिला को यह तय करने का अधिकार है कि भ्रूण उसके शरीर में रहेगा या नहीं इसलिए गर्भवती महिला को भ्रूण गिराने का अधिकार है
- **जीवन की गुणवत्ता का प्रश्न:**यदि किसी महिला को लगता है कि वह बच्चे को उचित जीवन नहीं दे सकती (आर्थिक, सामाजिक, या मानसिक कारणों से), तो गर्भपात नैतिक विकल्प हो सकता है।
- **स्वास्थ्य और सुरक्षा:** यदि गर्भावस्था से महिला के स्वास्थ्य को खतरा हो या भ्रूण में कोई गंभीर दोष हो, तो गर्भपात आवश्यक और नैतिक हो सकता है।
- **बलात्कार या यौन हिंसा के मामलों में:** ऐसे मामलों में गर्भपात को नैतिक माना जाता है, क्योंकि यह महिला की भावनात्मक और मानसिक स्थिति को ध्यान में रखता है।
- **लैंगिक समानता:** गर्भपात का अधिकार लैंगिक समानता के लिए महत्वपूर्ण है।महिला मुक्ति आंदोलन गर्भपात के अधिकार को लैंगिक समानता के लिए महत्वपूर्ण मानता है।उनका कहना है कि यदि किसी महिला को गर्भपात की अनुमति नहीं दी जाती है तो उसे न केवल गर्भावस्था को जारी रखने के लिए मजबूर किया जाता है, बल्कि समाज द्वारा उससे कई वर्षों तक होने वाले बच्चे का भरण-पोषण और देखभाल करने की भी अपेक्षा की जाती। पुरुषों के साथ पूर्ण राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक समानता प्राप्त करने के लिए महिलाओं को गर्भपात की सुविधा की आवश्यकता है
- **पूर्णता के लिए:** गर्भपात का अधिकार प्रत्येक महिला के लिए अपनी पूर्ण क्षमता प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण है
- **असुरक्षित गर्भपात पर रोक:** गर्भपात पर प्रतिबंध लगाने से महिलाओं को अवैध गर्भपातकर्ताओं का सहारा लेने के लिए मजबूर होना पड़ता है

  व्यक्ति के रूप में देखना: महिला को एक व्यक्ति के रूप में देखना चाहिए, न कि केवल भ्रूण के लिए एक आश्रय स्थल के रूप में।

- **स्वतंत्रता से वंचित करना** :इससे कुछ लोग यह दावा करने लगे हैं कि गर्भपात पर प्रतिबन्ध लगाना अनैतिक है, क्योंकि ऐसा करने से महिलाओं को अपनी पसंद चुनने की स्वतंत्रता से वंचित किया जाता है और 'अनिच्छुक महिलाओं को अवांछित गर्भ धारण करने के लिए मजबूर किया जाता है।' यदि महिलाओं को यह चुनने का अधिकार होगा कि वे बच्चे चाहती हैं या नहीं, तभी वे पुरुषों के साथ समानता प्राप्त कर सकती हैं: पुरुष गर्भवती नहीं होते, और इसलिए उन पर समान प्रतिबंध नहीं हैं। महिलाओं की स्वतंत्रता और जीवन के विकल्प बच्चे पैदा करने, इसके साथ जुड़ी रूढ़िवादिता, सामाजिक रीति-रिवाजों और दमनकारी कर्तव्यों के कारण सीमित हो जाते हैं।महिलाओं को अपने शरीर पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करने के लिए गर्भपात का अधिकार होना चाहिए (जिसमें भ्रूण को जन्म देने या न देने का निर्णय लेने का अधिकार भी शामिल है) - इस अधिकार के बिना उन्हें पुरुषों के समान नैतिक दर्जा प्राप्त नहीं है।

4.3.2.2.गर्भपात के विरोध में नैतिक तर्क (Moral arguments against abortion)

- **जीवन का अधिकार:**कुछ लोगों का मानना है कि भ्रूण एक जीवित प्राणी है, और गर्भपात उसे जीवन से वंचित करता है, जो अनैतिक है।
- **प्राकृतिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप:**यह दृष्टिकोण कहता है कि गर्भपात प्राकृतिक जीवन प्रक्रिया में हस्तक्षेप है, जो गलत है।
- **धार्मिक मान्यताएँ:**कई धर्म गर्भपात को पाप मानते हैं, क्योंकि वे इसे ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध मानते हैं।
- **भ्रूण का संभावित जीवन:**भ्रूण को एक संभावित मानव जीवन के रूप में देखा जाता है, जिसे खत्म करना अनैतिक माना जा सकता है।

4.3.2.3.गर्भपात और कानून (Abortion and the law)

- गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम, 1971 (Medical Termination of Pregnancy Act, 1971) भारत सरकार का एक अधिनियम है, जो कुछ विशेष परिस्थितियों में गर्भ को समाप्त करने की अनुमति देता है।
- एमटीपी क़ानून 1971 के तहत इन परिस्थितियों में गर्भपात की इजाज़त है-

1- अगर **गर्भ की अवधि 12 सप्ताह** से ज़्यादा की नहीं है, तो **एक डॉक्टर की सलाह** के बाद गर्भपात किया जा सकता है।

2- अगर **गर्भ की अवधि 12 सप्ताह से ज़्यादा की है, लेकिन 20 हफ़्ते से कम** है, तो **दो डॉक्टरों की राय** के बाद निम्नलिखित आधारों पर गर्भ को समाप्त किया जा सकता है –

- **गर्भवती महिला की जान को खतरा हो या उसके शारीरिक अथवा मानसिक स्वास्थ्य को नुक़सान** पहुँचने का ख़तरा हो।
- अगर ये ख़तरा हो कि **होने वाले बच्चे को कोई गंभीर शारीरिक या मानसिक बीमारी** होगी।
- **20 सप्ताह से ज्यादा के गर्भ** को समाप्त करने के लिये **कोर्ट की इजाजत** लेनी होगी।

गर्भ का चिकित्सकीय समापन (संशोधन) अधिनियम 2021-केंद्र सरकार ने व्यापक गर्भपात देखभाल प्रदान करने तथा महिलाओं को और अधिक सशक्त बनाने के लिये MTP अधिनियम 1971 में 2021 में संशोधन किया।

- गर्भ का चिकित्सकीय समापन (संशोधन) अधिनियम 2021 को चिकित्सीय, मानवीय तथा सामाजिक आधार पर सुरक्षित और वैध गर्भपात सेवाओं का विस्तार करने के लिये लाया गया है।
- इस संसोधन के तहत **गर्भनिरोधक विधि या उपकरण की विफलता** के मामले में विवाहित महिला द्वारा 20 सप्ताह तक के गर्भ को समाप्त किया जा सकता है।
- यह विधेयक अविवाहित महिलाओं को भी गर्भनिरोधक विधि या उपकरण की विफलता के कारण हुई गर्भावस्था को समाप्त करने की अनुमति देता है।
- गर्भधारण से 20 सप्ताह तक के गर्भ की समाप्ति के लिये एक पंजीकृत चिकित्सक की राय आवश्यक है।
- 20-24 सप्ताह तक के गर्भ की समाप्ति के लिये दो पंजीकृत चिकित्सकों की राय की आवश्यकता होगी।
- **भ्रूण से संबंधित गंभीर असामान्यता** के मामले में 24 सप्ताह के बाद के गर्भ की समाप्ति के लिये राज्य-स्तरीय मेडिकल बोर्ड की राय आवश्यक होगी।
- महिलाओं की विशेष श्रेणियों के लिये गर्भ को समाप्त करने की सीमा को 20 सप्ताह से बढाकर 24 सप्ताह कर दिया गया है। इनमे शामिल है –
    - **दुष्कर्म से पीड़ित महिलायें**
    - **दिव्यांग महिलाएँ**
    - **नाबालिग महिलायें**

- **अन्य कमजोर महिलायें**

- गर्भ को समाप्त करने वाली किसी महिला की पहचान को **कानून में अधिकृत व्यक्ति** को छोड़कर किसी भी अन्य व्यक्ति के समक्ष प्रकट नहीं किया जा सकेगा।

सुप्रीम कोर्ट ने महिलाओं के गर्भपात के अधिकार पर एक ऐतिहासिक फैसला सुनाते हुए सभी महिलाओं को गर्भपात कराने का कानूनी अधिकार दे दिया है। इस फैसले के प्रमुख बिंदु इस प्रकार हैं-

- सुप्रीम कोर्ट ने **गर्भ का चिकित्सकीय समापन एक्ट** के प्रावधानों की व्याख्या करते हुए कहा है, कि विवाहित और अविवाहित सभी महिलाओं को कानून सम्मत तरीके से 24 सप्ताह तक के गर्भ को समाप्त करने का अधिकार है।
- दरअसल अभी तक सिर्फ विवाहित महिलाओं को ही 20 सप्ताह से अधिक और 24 सप्ताह से कम समय के गर्भ को समाप्त करने का अधिकार था। लेकिन अब सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले के बाद **अविवाहित महिलाओं** को भी इस समय सीमा तक गर्भ को समाप्त करने का अधिकार होगा।
- सुप्रीम कोर्ट ने अपने निर्णय में कहा है कि सिर्फ विवाहित महिलाओं को ही कानूनन गर्भपात का अधिकार होने की बात मान लेना, इस रूढिवादी सोच को मानना होगा कि सिर्फ विवाहित महिलाओं को ही यौन गतिविधियों में शामिल होना चाहिये।
- सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम में 2021 का संशोधन विवाहित और अविवाहित महिलाओं के बीच भेदभाव नहीं करता है।
- कोर्ट ने कहा कि विवाहित और अविवाहित महिलाओं के बीच यह कृत्रिम भेद संवैधानिक कसौटी पर टिक नहीं सकता। कानून का लाभ दोनों को समान रूप से मिलेगा।
- सुप्रीम कोर्ट ने इस फैसले में यह भी स्पष्ट किया है, कि एमटीपी एक्ट के तहत **दुष्कर्म की परिभाषा में वैवाहिक दुष्कर्म** भी शामिल है।
- कोर्ट ने कहा कि अगर वैवाहिक दुष्कर्म की वजह से पत्नी गर्भवती होती है, तो उसे सुरक्षित और कानून सम्मत तरीके से गर्भ को समाप्त करने का अधिकार है।

- हालांकि कोर्ट ने 'वैवाहिक बलात्कार' को सिर्फ़ एमटीपी क़ानून के संदर्भ में ही समझे जाने की बात कही है, क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के दायरे में वैवाहिक बलात्कार अभी शामिल नहीं है और सुप्रीम कोर्ट की एक अन्य बेंच के पास ये मामला लंबित है।
- कोर्ट ने कहा है कि गर्भ को समाप्त करने के बारे में **महिला की सहमति** ही पर्याप्त होगी।
- अगर महिला नाबालिग या मानसिक रूप से अस्वस्थ है, तो उसके **संरक्षक की सहमति** चाहिए होती है।

सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के निम्न प्रभाव से उत्पन्न होंगे

- सुप्रीम कोर्ट के अनुसार भारत में प्रतिदिन 8 महिलायें असुरक्षित गर्भपात के कारण मर जाती है। ऐसी स्थिति में इस फैसले के दूरगामी प्रभाव होंगे।
- यह फैसला महिलाओं के प्रजनन अधिकार की स्वायत्तता पर मुहर लगाता है। साथ ही कानून सम्मत तरीके से तय अवधि में गर्भपात का कानूनी अधिकार और स्वायत्तता देने में विवाहित, अविवाहित, सिंगल मदर सभी को बराबरी पर रखता है।
- कोर्ट ने अपने फैसले में कानून होने के बावजूद महिलाओं को कानून सम्मत सुरक्षित गर्भपात कराने में आने वाली बाधाओं का भी उल्लेख किया है, और कहा है कि इन बाधाओं के चलते महिलाएं असुरक्षित तरीके से गर्भ को समाप्त करने के लिये मजबूर होती हैं।
- कोर्ट ने गर्भपात के लिए **पर्याप्त ढांचागत संसाधनों तथा जानकारी का अभाव, सामाजिक कलंक और सुरक्षित देखभाल उपलब्ध ना होने** पर चिंता जताई है।
- पीठ ने कहा कि कानूनी विवादों में फंसने का डाक्टरों का भय भी सुरक्षित गर्भपात के लिए एक बाधा है।

एक महिला के अपने शरीर पर नियंत्रण के अधिकार के नैतिक और नैतिक निहितार्थ गर्भपात के पक्षधरों का मानना है कि महिलाओं को गर्भपात करवाने से रोकना उन्हें अपने शरीर पर नियंत्रण रखने और अपने खुद के चिकित्सकीय निर्णय लेने के अधिकार से वंचित करता है। कुछ लोग यह भी कह सकते हैं कि महिलाओं को गर्भपात करवाने की अनुमति न देने से कई महिलाएं जीवन भर गरीबी में रहती हैं। गर्भपात करवाने वाली कई महिलाएं सामाजिक-आर्थिक रूप से चुनौतीपूर्ण पृष्ठभूमि से आती हैं और उन्हें अपनी शिक्षा पूरी करना या नए बच्चे की देखभाल करते हुए सफल करियर बनाए रखना मुश्किल या असंभव लगता है। इसके अलावा, गर्भपात करवाने वाली कई महिलाओं के पहले से ही एक या उससे ज़्यादा बच्चे होते हैं और नए बच्चे के आने से माँ के लिए दूसरे

बच्चों की उचित देखभाल करना मुश्किल हो सकता है, खासकर अगर वह अकेली हो और उसके पास ज़रूरी भावनात्मक और व्यावहारिक सहायता देने के लिए परिवार के सदस्य और दोस्त न हों। लेकिन बच्चे की जान लेने के अलावा इन चुनौतियों के लिए दूसरे समाधान भी हैं। बलात्कार या अनाचार के मामलों में गर्भपात की नैतिकता क्या बलात्कार या अनाचार के मामलों में गर्भपात नैतिक है? इस सवाल का जवाब देना आसान नहीं है। यहां तक कि जीवन के पक्षधर भी इस बात से सहमत होंगे कि बलात्कार की शिकार महिला के लिए बलात्कारी के बच्चे को गर्भ में रखना और फिर उसके बड़े होने पर उसकी देखभाल करना बेहद अनुचित है। इसके अलावा, बलात्कार और अनाचार के कई पीड़ित अपने खिलाफ किए गए अपराधों के परिणामस्वरूप मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं से पीड़ित होते हैं और नए बच्चे की देखभाल करने के लिए संघर्ष कर सकते हैं।दूसरी ओर, कोई इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि भ्रूण भी एक मानव जीवन है। इसके अलावा, हाल ही में किए गए शोध से पता चलता है कि भ्रूण सिर्फ़ बारह सप्ताह में ही दर्द महसूस करने में सक्षम हो सकता है , जो कि मूल रूप से माना जाने वाले समय से बहुत पहले है। क्या किसी ऐसे इंसान को दर्द और पीड़ा देना नैतिक या नैतिक है जो अपनी माँ के खिलाफ़ किए गए अपराध के लिए निर्दोष है?

गर्भपात का नैतिक मूल्यांकन हर व्यक्ति, समाज और परिस्थिति के आधार पर अलग हो सकता है। कुछ मुख्य बिंदु हैं:महिलाओं के अधिकार और भ्रूण के जीवन के अधिकार के बीच संतुलन बनाना।नैतिकता को कठोर और अटल नियमों की बजाय दयालुता और सहानुभूति के साथ देखना।प्रत्येक स्थिति का विश्लेषण करके यह तय करना कि कौन-सा विकल्प महिला और समाज के लिए बेहतर है।गर्भपात नैतिकता के मामले में कोई सार्वभौमिक उत्तर नहीं है। यह व्यक्तिगत, सामाजिक, और सांस्कृतिक संदर्भों पर निर्भर करता है। यह सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है कि महिलाओं को उनकी स्थिति और परिस्थितियों के अनुसार सही निर्णय लेने की स्वतंत्रता मिले, और समाज इस प्रक्रिया में उनके प्रति संवेदनशील रहे।

4.3.3.पर्यावरण नैतिकता (Environmental Ethics)

पर्यावरण नैतिकता अध्ययन का एक क्षेत्र है जो पर्यावरण की रक्षा और संरक्षण के लिए मनुष्यों के नैतिक दायित्वों को समझने का प्रयास करता है। यह नैतिकता की एक शाखा है जो प्रकृति के आंतरिक मूल्य, सभी जीवित चीजों के अंतर्संबंध और नैतिक सिद्धांतों के अनुसार कार्य करने की मनुष्यों की जिम्मेदारी की व्याख्या करती है ।पर्यावरण नैतिकता नैतिक विचार की एक शाखा है जो मनुष्यों और उनके प्राकृतिक पर्यावरण के बीच संबंधों पर ध्यान केंद्रित करती है। यह पर्यावरण की रक्षा और संरक्षण के लिए हमारे नैतिक दायित्वों को समझने और

उनका मूल्यांकन करने का एक समग्र दृष्टिकोण है। पर्यावरण नैतिकता मनुष्यों और पर्यावरण दोनों के हितों को एक साथ लाने का प्रयास करती है, ये नैतिक सिद्धांत पर्यावरण के प्रति हमारे नैतिक दायित्वों को समझने और इसे बचाने के लिए हमें कैसे कार्य करना चाहिए, यह समझने के लिए एक रूपरेखा प्रदान करते हैं। पर्यावरण नैतिकता के क्षेत्र को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है -

- पर्यावरण नैतिकता केअनुसार, मनुष्यों को अपने व्यवहार को नैतिक मूल्यों के आधार पर करना चाहिए.
- पर्यावरण नैतिकता में गैर-मानव जानवरों के अधिकारों को भी शामिल किया जाता है ।
- पर्यावरण नैतिकता के ज़रिए, मनुष्यों के पृथ्वी, जानवरों, और पौधों के साथ संबंधों की खोज की जाती है।
- पर्यावरण नैतिकता के ज़रिए, यह समझा जाता है कि मनुष्यों पर पर्यावरण की देखभाल करने की नैतिक ज़िम्मेदारी है या नहीं ।
- पर्यावरण नैतिकता के ज़रिए, यह समझा जाता है कि मनुष्यों के कार्यों का पर्यावरण पर क्या असर पड़ता है।
- पर्यावरण नैतिकता व्यावहारिक दर्शन की ऐसी शाखा है जिसके तहत पर्यावरणीय मूल्यों की वैचारिक नींव के साथ-साथ जैवविविधता एवं पारिस्थितिकी प्रणालियों की रक्षा एवं रखरखाव के क्रम में सामाजिक दृष्टिकोण, कार्यों तथा नीतियों से संबंधित मुद्दों का अध्ययन किया जाता है।
- पर्यावरण नैतिकता से इस बात का मूल्यांकन होता है कि मनुष्य पर्यावरण के साथ किस प्रकार संबंधित है और इनके कार्यों का पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ता है। इसके तहत संसाधन खपत, प्रदूषण एवं संरक्षण प्रयासों जैसे मुद्दों पर विचार किया जाता है।

  पर्यावरणीय नैतिकता का तात्पर्य उन मूल्यों और सिद्धांतों से है, जो मानव और प्रकृति के बीच संतुलित संबंध को बनाए रखने में सहायक होते हैं। यह मानवता को पर्यावरण की देखभाल और संरक्षण की नैतिक जिम्मेदारी का एहसास कराता है।

4.3.3.1.पर्यावरण नैतिकता के प्रकार (Types of environmental ethics)

• **स्वतंत्रतावादी विस्तार (libertarian extension):** लिबर्टेरियन एक्सटेंशन एक प्रकार की पर्यावरणीय नैतिकता है जो पर्यावरण और उसके संसाधनों के साथ जो चाहे करने के व्यक्ति के अधिकार पर केंद्रित है। यह अवधारणा इस बात पर भी जोर देती है कि किसी व्यक्ति को अपने मूल्यों को दूसरों पर नहीं थोपना चाहिए और इसके बजाय दूसरों की पसंद का सम्मान करना चाहिए।

•पारिस्थितिक विस्तार (**Ecological extension):** पारिस्थितिक विस्तार एक प्रकार की पर्यावरणीय नैतिकता है जो पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन और स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए प्राकृतिक पर्यावरण और उसके संसाधनों को संरक्षित करने पर केंद्रित है। यह अवधारणा भविष्य की पीढ़ियों के लिए इसे बनाए रखने के लिए प्रकृति के साथ काम करने वाले मनुष्यों के महत्व पर जोर देती है।

•संरक्षण नैतिकता(Conservation ethics): संरक्षण नैतिकता एक प्रकार की पर्यावरणीय नैतिकता है जो यह सुनिश्चित करके भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करने पर ध्यान केंद्रित करती है कि वर्तमान संसाधन समाप्त न हों या मरम्मत से परे क्षतिग्रस्त न हों। यह अवधारणा व्यक्तियों को प्राकृतिक संसाधनों का जिम्मेदारी से और विवेकपूर्ण तरीके से उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करती है ताकि भविष्य की पीढ़ियों के लिए पर्याप्त मात्रा में संसाधन उपलब्ध रहें।

स्वतंत्रतावादी विस्तार व्यक्ति के प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करने के अधिकार को बढ़ावा देता है, पारिस्थितिकी विस्तार मनुष्यों को प्रकृति के साथ काम करने के लिए प्रोत्साहित करता है, और संरक्षण नैतिकता प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग पर जोर देती है। इनमें से प्रत्येक प्रकार की पर्यावरणीय नैतिकता के अपने लाभ हैं और पर्यावरण की सर्वोत्तम सुरक्षा के बारे में विचार करते समय इन्हें ध्यान में रखा जाना चाहिए।

4.3.3.2.पर्यावरण नैतिकता और धर्म(Environmental ethics and religion)

पर्यावरण नैतिकता और धर्म का आपस में गहरा संबंध है, क्योंकि धार्मिक ग्रंथ अक्सर हमें पर्यावरण और अपने साथी मनुष्यों का सम्मान करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। ईसाई धर्म, यहूदी धर्म, हिंदू धर्म और बौद्ध धर्म जैसे कई धर्म प्राकृतिक दुनिया को महत्व देते हैं और इसकी देखभाल करने की हमारी जिम्मेदारी को पहचानते हैं। विशेष रूप से, तीन अब्राहमिक धर्म - यहूदी धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम - पृथ्वी के प्रबंधन में विश्वास साझा करते हैं, उत्पत्ति की पुस्तक में घोषणा की गई है, "और भगवान ने कहा, 'हमें अपनी छवि में, अपनी समानता में मनुष्य बनाना चाहिए, ताकि वे समुद्र में मछलियों और आकाश में पक्षियों, मवेशियों और सभी जंगली जानवरों और जमीन पर चलने वाले सभी जीवों पर शासन कर सकें।" इससे पता चलता है कि मनुष्यों का प्रकृति के साथ एक विशेष संबंध है और उन्हें इसकी देखभाल और सुरक्षा करनी चाहिए। हिंदू धर्म में, धर्म के रूप में जानी जाने वाली एक अवधारणा है जो प्रत्येक व्यक्ति के अपने पर्यावरण के प्रति नैतिक और नैतिक दायित्वों से संबंधित है। इसमें अहिंसा या अहिंसा का विचार शामिल है, जो सुझाव देता है कि सभी जीवित चीजों के साथ करुणा और सम्मान के साथ व्यवहार किया जाना चाहिए। बौद्ध धर्म हमें प्राकृतिक दुनिया के प्रति नैतिक दृष्टिकोण अपनाने के

लिए भी प्रोत्साहित करता है, यह विचार करके कि हमारे कार्य पर्यावरण को कैसे प्रभावित करेंगे।आखिरकार, किसी की मान्यताओं के बावजूद, पर्यावरण को समझना और उसका सम्मान करना इस ग्रह पर सामंजस्यपूर्ण तरीके से रहने के लिए महत्वपूर्ण है।

4.3.3.3.पर्यावरणीय नैतिकता बनाये रखने के उपाय (Measures to maintain environmental ethics)

- प्राकृतिक संसाधनों का न्यायोचित उपयोग
- ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के लोगों के मध्य समानता
- भावी पीढ़ियों के लिए संसाधनों का संरक्षण
- जानवरों के पर्यावरणीय अधिकार
- पर्यावरण शिक्षा
- पारम्परिक मूल्य प्रणालियों का संरक्षण
- जानवरों को अनावश्यक हानि न पहुँचाना
- इको-टूरिज्म की रोकथाम
- पर्यावरण अनुकूल वस्तुओं का उपयोग करना
- पर्यावरण को साफ़ और स्वच्छ रखना
- पर्यावरण प्रभाव आकलन
- पर्यावरण की सुरक्षा में सामुदायिक भागीदारी

4.3.3.4.पर्यावरणीय नैतिकता का महत्त्व (Importance of environmental ethics):

- **परस्पर संबद्धता को महत्त्व देना:** पर्यावरणीय नैतिकता के तहत सभी जीवों तथा पारिस्थितिकी तंत्र के साथ उनकी परस्पर संबद्धता को पहचान मिलती है। इस परिप्रेक्ष्य से मानव एवं अन्य प्रजातियों के कल्याण हेतु जैवविविधता तथा पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण के महत्त्व पर प्रकाश पड़ता है।उदाहरण के लिये वर्षा वनों के विनाश से न केवल अनगिनत प्रजातियों के आवास का नुकसान होता है, बल्कि कार्बन पृथक्करण तथा जलवायु विनियमन जैसी महत्त्वपूर्ण पारिस्थितिकी सेवाएँ भी बाधित होती हैं।
- **सतत् विकास:** पर्यावरणीय नैतिकता से सतत् विकास की आवश्यकता को बल मिलता है जिसके तहत भविष्य की पीढ़ियों की ज़रूरतों को पूरा करने की क्षमता से समझौता किये बिना वर्तमान की ज़रूरतों को पूरा

करने पर बल दिया जाता है।जलवायु परिवर्तन, जैवविविधता क्षरण एवं प्रदूषण जैसे मुद्दों का सामना करने के क्रम में स्थायी भविष्य सुनिश्चित करने के लिये निर्णय लेने में नैतिक सिद्धांतों को अपनाना आवश्यक है।

- **न्याय और समानता:** पर्यावरणीय नैतिकता पर्यावरणीय निर्णय लेने में न्याय और समानता के सिद्धांतों को रेखांकित करती है। इसमें स्थानीय तथा वैश्विक स्तर पर कमज़ोर समुदायों पर पर्यावरणीय क्षरण के प्रभावों पर विचार करने पर बल दिया जाता है।उदाहरण के लिये हाशिये पर रहने वाले समुदाय अक्सर पर्यावरण प्रदूषण एवं जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का खामियाजा भुगतते हैं, जिससे असमानताएँ और बढ़ जाती हैं। पर्यावरण न्याय के तहत निष्पक्ष व्यवहार के साथ पर्यावरणीय निर्णयों में सभी लोगों की भागीदारी को महत्त्व दिया जाता है।
- **प्रबंधन एवं ज़िम्मेदारी:** पर्यावरणीय नैतिकता के तहत पर्यावरण की देखभाल एवं सुरक्षा की ज़िम्मेदारी के क्रम में पृथ्वी के प्रबंधक के रूप में मनुष्यों के कर्त्तव्यों पर बल दिया जाता है। इसमें ऐसी प्रथाओं को अपनाना शामिल है जो पर्यावरण को होने वाले नुकसान को कम करने एवं प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करने के साथ जलवायु परिवर्तन की तीव्रता को कम करने पर केंद्रित हों।उदाहरण के लिये नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को अपनाना तथा एकल-उपयोग प्लास्टिक के उपभोग को कम करना, ज़िम्मेदार प्रबंधन के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाता है।
- **वैश्विक सहयोग:** पर्यावरणीय चुनौतियाँ राष्ट्रीय सीमाओं से परे हैं, जिसके लिये वैश्विक सहयोग की आवश्यकता होती है। पर्यावरणीय नैतिकता के तहत आम पर्यावरणीय खतरों से निपटने के क्रम में सभी देशों की साझा ज़िम्मेदारी पर बल दिया जाता है।उदाहरण के लिये जलवायु परिवर्तन पर अंतर्राष्ट्रीय समझौते नैतिक सिद्धांतों के आधार पर वैश्विक पर्यावरण सहयोग को बढ़ावा देने के प्रयासों को दर्शाते हैं।
- **जैवविविधता का क्षरण:** पर्यावरणीय नैतिकता के दृष्टिकोण से निर्वनीकरण से जैवविविधता के क्षरण के बारे में चिंताएँ उत्पन्न होती हैं। वन, पौधों एवं जंतुओं की प्रजातियों की एक विशाल शृंखला के आवास स्थल होते हैं। निर्वनीकरण से पारिस्थितिकी तंत्र बाधित होने से इनके निवास स्थल का ह्रास होने के कारण प्रजातियाँ विलुप्त हो जाती हैं।नैतिक रूप से भावी पीढ़ियों के कल्याण के लिये जैवविविधता को संरक्षित करना महत्त्वपूर्ण है।
- **जलवायु परिवर्तन:** जलवायु परिवर्तन का निर्वनीकरण में प्रमुख योगदान है। वन, कार्बन सिंक के रूप में कार्य करने तथा वायुमंडल से कार्बन डाइ-ऑक्साइड को अवशोषित करने के साथ वैश्विक जलवायु को विनियमित करने में सहायक होते हैं। जब जंगलों को साफ किया जाता है, तो वनों में संग्रहीत कार्बन वायुमंडल में

उत्सर्जित होने से ग्रीनहाउस गैस में वृद्धि होती है।पर्यावरणीय नैतिकता के दृष्टिकोण से वनों को संरक्षित करके तथा वनों की कटाई की दर को कम करके, जलवायु परिवर्तन की तीव्रता को कम करना एक नैतिक अनिवार्यता है।

- **स्थानीय अधिकार एवं पर्यावरणीय न्याय:** कई स्थानीय समुदाय अपनी आजीविका, सांस्कृतिक प्रथाओं तथा आध्यात्मिक विश्वासों के लिये जंगलों पर निर्भर रहते हैं। वनों की कटाई से अक्सर स्थानीय लोगों के अधिकारों का उल्लंघन होता है, जिससे विस्थापन एवं पारंपरिक ज्ञान की हानि के साथ सामाजिक संघर्ष को बढ़ावा मिलता है।नैतिक रूप से स्थानीय समुदायों के अधिकारों का सम्मान करने के साथ वन प्रबंधन को प्रभावित करने वाले निर्णयों में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।
- **अंतर-पीढ़ीगत समानता:** निर्वनीकरण के चलते भविष्य की पीढ़ियों की स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र तक पहुँच से समझौता किया जा सकता है।हमारा कर्त्तव्य है कि नैतिक रूप से भावी पीढ़ियों के हितों पर विचार करें तथा उनके उपयोग के लिये प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करें।
- संसाधनों की सुरक्षा के लिए-पर्यावरण, प्रजातियों और संसाधनों की सुरक्षा के लिए पर्यावरणीय नैतिकता आवश्यक है। यह हमें अपनी तात्कालिक आवश्यकताओं से आगे सोचने तथा अपने कार्यों के दीर्घकालिक प्रभावों पर विचार करने के लिए प्रोत्साहित करता है।यह हमें अपने पर्यावरण के प्रति जिम्मेदारी सिखाता है, तथा पर्यावरण अनुकूल प्रथाओं की वकालत करता है जो प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करने में मदद करती हैं। पर्यावरणीय नैतिकता बेहतर सार्वजनिक नीतियों और कानूनों को भी बढ़ावा देती है, जो यह सुनिश्चित करने में मदद करती है कि हमारे पर्यावरण की उचित देखभाल की जाए।
- जागरूकता के लिए -यह टिकाऊ प्रथाओं को बढ़ावा देता है और लोगों को पर्यावरण पर उनके कार्यों के प्रभाव के बारे में अधिक जागरूक बनने के लिए प्रोत्साहित करता है।यह सभी जीवित चीजों के परस्पर संबंध और उनका सम्मान करने की आवश्यकता पर जोर देता है। यह हमें दुनिया में अपने स्थान के बारे में सोचने और प्राकृतिक पर्यावरण को संरक्षित करने में हम कैसे योगदान दे सकते हैं, इस बारे में सोचने के लिए प्रोत्साहित करता है।पर्यावरणीय नैतिकता प्रकृति के साथ बेहतर संबंध बनाने में मदद करती है, तथा इसके आंतरिक मूल्य को पहचानती है, न कि केवल इसके साधनात्मक मूल्य को।

पर्यावरणीय मुद्दों को नैतिक, न्यायसंगत तथा सतत् तरीके से हल करने की तात्कालिकता समकालीन विश्व में पर्यावरणीय नैतिकता की बढ़ती आवश्यकता को दर्शाती है। पर्यावरणीय निर्णय लेने और नीतियों में नैतिक

सिद्धांतों को एकीकृत कर व्यक्ति एवं संगठन प्रकृति के साथ अधिक न्यायपूर्ण, अनुकूल तथा सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित कर

पर्यावरण और लोकप्रशासन के बीच घनिष्ठ संबंध है, क्योंकि लोकप्रशासन (Public Administration) के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास के उद्देश्य को प्रभावी ढंग से लागू किया जा सकता है। लोकप्रशासन वह प्रणाली है जो शासन की नीतियों और योजनाओं को लागू करती है और नागरिकों तक सेवाएं पहुंचाती है। पर्यावरण के संदर्भ में, लोकप्रशासन का उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण और पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करना है।लोकप्रशासन पर्यावरण संरक्षण से संबंधित नीतियों और कानूनों को लागू करता है।लोकप्रशासन जल, जंगल, खनिज और अन्य प्राकृतिक संसाधनों का न्यायसंगत और सतत प्रबंधन सुनिश्चित करता है।वायु, जल, और भूमि प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए लोकप्रशासन नीतियों का निर्माण और कार्यान्वयन करता है।प्राकृतिक आपदाओं (जैसे बाढ़, भूकंप, सूखा) के प्रभाव को कम करने और पुनर्वास कार्यों में लोकप्रशासन की भूमिका महत्वपूर्ण है।संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) को लागू करने में लोकप्रशासन की भूमिका प्रमुख है, विशेष रूप से पर्यावरणीय लक्ष्यों जैसे जलवायु परिवर्तन, स्वच्छ ऊर्जा, और जैव विविधता संरक्षण।सरकार पर्यावरण संरक्षण के लिए विभिन्न नीतियां और योजनाएं बनाती है, जिनके कार्यान्वयन की जिम्मेदारी लोकप्रशासन पर होती है।पर्यावरण और लोकप्रशासन का संबंध समाज में सतत विकास और पर्यावरणीय स्थिरता को सुनिश्चित करता है। लोकप्रशासन के माध्यम से पर्यावरणीय नीतियों और योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन संभव है। इन दोनों का समन्वय न केवल वर्तमान पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान करता है, बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक सुरक्षित और स्वच्छ पर्यावरण सुनिश्चित करता है।

पर्यावरणीय नैतिकता और प्रशासनिक नैतिकता दो ऐसे महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं, जो हमारे समाज के सतत विकास और शासन में पारदर्शिता सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।पर्यावरणीय और प्रशासनिक नैतिकता का आपसी संबंध गहरा और परस्पर पूरक है। यह दोनों समाज और शासन में संतुलन और सतत विकास सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं। प्रशासनिक नैतिकता प्रभावी नीतियों और जिम्मेदार शासन के माध्यम से पर्यावरणीय नैतिकता के सिद्धांतों को लागू करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पर्यावरणीय नैतिकता और प्रशासनिक नैतिकता के आपसी सम्बन्ध को निम्न प्रकार स्पष्ट का सकते है-

- **सतत विकास)Sustainable Development):** पर्यावरणीय नैतिकता यह सुनिश्चित करती है कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस तरह किया जाए कि भविष्य की पीढ़ियों की जरूरतें प्रभावित न हों।प्रशासनिक

नैतिकता, पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रभावी कानून, नीतियां और योजनाएं बनाकर और उन्हें पारदर्शिता के साथ लागू करके सतत विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक होती है।

- **पर्यावरण संरक्षण में नीतिगत समर्थन:**प्रशासनिक नैतिकता सुनिश्चित करती है कि पर्यावरण से संबंधित नीतियों और योजनाओं को पारदर्शिता और जवाबदेही के साथ लागू किया जाए।उदाहरणप्लास्ट :िक उपयोग पर प्रतिबंध, वन संरक्षण, और जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए नीति निर्माण।
- **संसाधनों का न्यायपूर्ण उपयोग और वितरण:**पर्यावरणीय नैतिकता प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग और संरक्षण की बात करती है।प्रशासनिक नैतिकता यह सुनिश्चित करती है कि संसाधनों का वितरण सभी वर्गों के बीच समानता और निष्पक्षता के साथ हो।**उदाहरण:** ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में जल आपूर्ति का समान वितरण।
- **जलवायु परिवर्तन और आपदा प्रबंधन:**पर्यावरणीय नैतिकता जलवायु परिवर्तन के कारणों को रोकने और पर्यावरण को संरक्षित करने की वकालत करती है।प्रशासनिक नैतिकता प्राकृतिक आपदाओं के प्रभाव को कम करने और आपदा प्रबंधन के माध्यम से नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करती है।**उदाहरण:** स्वच्छ ऊर्जा को बढ़ावा देना और कार्बन उत्सर्जन को कम करने के लिए योजनाओं का क्रियान्वयन।
- **भ्रष्टाचार और पर्यावरणीय क्षति:**पर्यावरणीय नैतिकता किसी भी गतिविधि या परियोजना से पर्यावरण को होने वाले नुकसान को रोकने पर जोर देती है।प्रशासनिक नैतिकता यह सुनिश्चित करती है कि भ्रष्टाचार के कारण पर्यावरण संरक्षण परियोजनाओं में देरी या कमी न हो।**उदाहरण:** अवैध खनन या वनों की कटाई रोकने के लिए पारदर्शी प्रशासन।
- **शिक्षा और जागरूकता:**पर्यावरणीय नैतिकता पर्यावरण संरक्षण के प्रति नागरिकों की जागरूकता बढ़ाने की बात करती है।प्रशासनिक नैतिकता इसे शिक्षा और जागरूकता अभियानों के माध्यम से लागू करती है।**उदाहरण:** स्वच्छ भारत अभियान, वनीकरण योजनाएं।
- **स्थानीय और वैश्विक सहयोग:**पर्यावरणीय समस्याएं अक्सर वैश्विक होती हैं, जैसे जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता की हानि।प्रशासनिक नैतिकता विभिन्न देशों और संगठनों के बीच सहयोग को बढ़ावा देकर वैश्विक पर्यावरणीय मुद्दों को हल करने में सहायक होती है।**उदाहरण:** पेरिस जलवायु समझौता।

पर्यावरणीय और प्रशासनिक नैतिकता का आपसी संबंध समाज में संतुलित विकास, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और शासन में पारदर्शिता सुनिश्चित करता है। प्रशासनिक नैतिकता पर्यावरणीय नैतिकता के आदर्शों को

लागू करने का माध्यम है, जबकि पर्यावरणीय नैतिकता प्रशासनिक निर्णयों के लिए नैतिक आधार प्रदान करती है। इन दोनों का समन्वय एक स्वस्थ और टिकाऊ समाज के निर्माण में सहायक है।

4.3.4.भ्रूण हत्या(Foeticide)

भ्रूण हत्या (Foeticide) एक गंभीर सामाजिक और नैतिक मुद्दा है, जिसमें गर्भ में पल रहे भ्रूण को जानबूझकर नष्ट कर दिया जाता है। यह समस्या विशेष रूप से भारत और अन्य विकासशील देशों में अधिक गहराई से जुड़ी हुई है, जहां पारंपरिक समाज में लड़कियों को लड़कों की तुलना में कम महत्व दिया जाता है। इसके परिणामस्वरूप, कन्या भ्रूण हत्या जैसी प्रवृत्तियां भी सामने आती हैं। इस विषय पर नैतिक दृष्टिकोण से विचार करना आवश्यक है। अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र (Applied Ethics) नैतिकता के उन व्यावहारिक पक्षों का अध्ययन करता है, जिनका उपयोग वास्तविक जीवन की जटिल परिस्थितियों में किया जाता है। भ्रूण हत्या, विशेष रूप से नैतिक दृष्टिकोण से, एक ऐसा विषय है जो अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र की कई शाखाओं से जुड़ा हुआ है। यह व्यक्तिगत अधिकारों, समाज के कल्याण, और जीवन के मूल्य जैसे गहन नैतिक प्रश्नों को उठाता है।

4.3.4.1.भ्रूण हत्या के मुख्य कारण(Main reasons for foeticide):

भ्रूण हत्या (Feticide) वह प्रक्रिया है जिसमें गर्भ में पल रहे भ्रूण को जन्म से पहले समाप्त कर दिया जाता है। विशेष रूप से भारत और अन्य देशों में भ्रूण हत्या मुख्यतः कन्या भ्रूण (Female Foeticide) के रूप में होती है, जो गंभीर सामाजिक और नैतिक समस्या है। भ्रूण हत्या के मुख्य कारण:-

- पितृसत्तात्मक समाज (Patriarchal Society):समाज में लड़कों को वंश चलाने वाला और परिवार का सहारा माना जाता है, जबकि लड़कियों को बोझ समझा जाता है।पारिवारिक संपत्ति और नाम लड़कों के माध्यम से आगे बढ़ने की धारणा भ्रूण हत्या को बढ़ावा देती है।
- हेज प्रथा:कई समाजों में लड़कियों की शादी के समय दहेज देने की प्रथा अभी भी प्रचलित है।दहेज के आर्थिक बोझ से बचने के लिए लोग कन्या भ्रूण हत्या जैसे घृणित कार्य की ओर प्रवृत्त होते हैं।
- आर्थिक दबाव:कुछ परिवार यह मानते हैं कि लड़कियाँ आर्थिक रूप से योगदान नहीं देतीं और उनका पालन-पोषण व शादी खर्चीला होता है।आर्थिक असमानता और गरीबी भी भ्रूण हत्या को जन्म देती है।
- भ्रांत धारणाएँ और अंधविश्वास:कई समुदायों में यह धारणा है कि पुत्र की प्राप्ति से मोक्ष मिलता है या परिवार का भविष्य उज्ज्वल होता है।ऐसे अंधविश्वास भ्रूण हत्या को बढ़ावा देते हैं।

- लिंग परीक्षण की सुविधा:आधुनिक चिकित्सा तकनीक जैसे अल्ट्रासाउंड और अम्नियोसेंटेसिस के जरिए भ्रूण के लिंग का पता लगाया जा सकता है।
- कानूनन प्रतिबंध होने के बावजूद, कई जगहों पर ये परीक्षण अवैध रूप से किए जाते हैं।
- कानूनों का कमजोर अनुपालन:भ्रूण हत्या रोकने के लिए कानून जैसे पीएनडीटी अधिनियम (Pre-Conception and Pre-Natal Diagnostic Techniques Act, 1994) लागू हैं।फिर भी, इन कानूनों का सख्ती से पालन न होना भ्रूण हत्या का एक कारण बनता है।
- शिक्षा और जागरूकता की कमी:समाज में शिक्षा की कमी के कारण लोग लड़का-लड़की में भेदभाव करते हैं और भ्रूण हत्या को सही मानते हैं।जागरूकता की कमी के चलते लोग कानून और नैतिकता की अनदेखी करते हैं।
- सामाजिक दबाव:कुछ परिवारों में पुत्र न होने पर महिला पर दबाव डाला जाता है, जिसके कारण वह कन्या भ्रूण हत्या के लिए मजबूर हो जाती है।
- संस्कृति और परंपराएँ:लड़कियों को विवाह के बाद "पराया धन" मानना और लड़कों को परिवार का उत्तराधिकारी समझना इस समस्या को और गहराता है।
- स्वास्थ्य सेवाओं का दुरुपयोग:निजी क्लिनिक और अल्ट्रासाउंड केंद्रों पर भ्रूण के लिंग का पता लगाकर अवैध रूप से गर्भपात करवाया जाता है।

4.3.4.2.भ्रूण हत्या के निवारण के लिए नैतिक समाधान

भ्रूण हत्या न केवल एक नैतिक समस्या है, बल्कि यह समाज में लिंग असमानता, पितृसत्तात्मक मानसिकता, और जीवन के प्रति कम होते सम्मान का भी संकेत है। इस समस्या के निवारण के लिए व्यक्तिगत, सामाजिक, और कानूनी स्तर पर नैतिक समाधान आवश्यक हैं। ये समाधान केवल दंडात्मक नहीं होने चाहिए, बल्कि समाज में जागरूकता और सकारात्मक बदलाव लाने का माध्यम भी बनें।

- **जीवन का महत्व समझाना:**भ्रूण एक संभावित जीवन है, और उसके अधिकारों को मान्यता देना महत्वपूर्ण है।स्कूलों और समुदायों में नैतिक शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से जीवन और मानवाधिकारों के प्रति सम्मान को बढ़ावा दिया जा सकता है।

- **लिंग समानता के प्रति जागरूकता:**भ्रूण हत्या, विशेष रूप से कन्या भ्रूण हत्या, लिंग भेदभाव की देन है।महिलाओं के अधिकार, उनके महत्व और योगदान को लेकर समाज में सकारात्मक सोच को प्रोत्साहित करना।
- **धार्मिक और नैतिक मूल्यों का प्रचार:**अधिकांश धर्म जीवन को पवित्र मानते हैं। धार्मिक नेताओं और संगठनों को भ्रूण हत्या के खिलाफ संदेश फैलाने में शामिल किया जा सकता है।
- **महिलाओं की स्वतंत्रता और निर्णय का सम्मान:**महिलाओं को शिक्षित और सशक्त बनाना ताकि वे अपने निर्णय खुद ले सकें।माता-पिता, पति या परिवार द्वारा जबरदस्ती किए गए निर्णयों को रोकने के लिए जागरूकता अभियान।
- **आर्थिक और सामाजिक सहायता:**कई बार आर्थिक असुरक्षा भ्रूण हत्या का कारण बनती है।सरकार और एनजीओ ऐसी महिलाओं को वित्तीय और मानसिक समर्थन प्रदान करें जो अनचाहे गर्भ या कन्या भ्रूण को लेकर संघर्ष कर रही हैं।
- **पितृसत्तात्मक मानसिकता को चुनौती देना:**समाज में बेटियों को बोझ मानने की धारणा बदलने के लिए बड़े स्तर पर संवाद और कार्यक्रम।"बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ" जैसी पहल को और प्रभावी बनाना।
- **लड़कियों के लिए अवसर:**लड़कियों को शिक्षा, रोजगार, और समान अवसर प्रदान करके समाज में उनका महत्व बढ़ाना।कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए बेटियों के प्रति सम्मान बढ़ाने वाली नीतियां लागू करना।
- **लिंग निर्धारण पर प्रतिबंध का कड़ाई से पालन:**भ्रूण का लिंग पता लगाने के लिए तकनीकों का दुरुपयोग रोकने हेतु कानून को प्रभावी ढंग से लागू करना।ऐसे क्लीनिक और डॉक्टरों पर कठोर दंड लगाना जो लिंग निर्धारण और भ्रूण हत्या को बढ़ावा देते हैं।
- **गर्भपात कानूनों की समीक्षा:**उन परिस्थितियों को स्पष्ट करना जब गर्भपात नैतिक और कानूनी रूप से उचित हो सकता है (जैसे बलात्कार, माता के जीवन को खतरा, या गंभीर विकलांगता)।
- **जनता की भागीदारी:**भ्रूण हत्या के मामलों की रिपोर्ट करने के लिए गुप्त और सुरक्षित व्यवस्था।समाज को भ्रूण हत्या रोकने में सक्रिय भूमिका निभाने के लिए प्रोत्साहित करना।
- **मातृत्व देखभाल में सुधार:** गर्भवती महिलाओं को पर्याप्त स्वास्थ्य सेवाएं और सलाह उपलब्ध कराना ताकि वे गर्भधारण को सुरक्षित और सकारात्मक रूप में देख सकें।

- **मानसिक स्वास्थ्य सहायता:**महिलाओं को गर्भधारण के दौरान मानसिक और भावनात्मक समर्थन प्रदान करना।अवसाद और सामाजिक दबाव का सामना करने में मदद करना।
- **सांस्कृतिक रीति-रिवाजों में बदलाव:**उन परंपराओं और रीति-रिवाजों को बदलना जो बेटों को प्राथमिकता देते हैं।समाज में बेटियों के लिए सकारात्मक और गर्वित दृष्टिकोण विकसित करना।
- **जिम्मेदार मीडिया:**फिल्मों, टेलीविजन और सोशल मीडिया में ऐसे संदेशों का प्रचार जो भ्रूण हत्या को हतोत्साहित करें और बेटियों के महत्व को बढ़ावा दें।
- **समुदाय आधारित प्रयास:**स्थानीय स्तर पर समुदायों को जागरूक और सशक्त बनाना ताकि वे भ्रूण हत्या के खिलाफ सक्रिय भूमिका निभा सकें।महिलाओं के लिए सहायता समूह बनाना, जहां वे अपने अनुभव साझा कर सकें और समाधान पा सकें।
- **स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका:**एनजीओ और समाजसेवी संस्थाएं महिलाओं को स्वास्थ्य, शिक्षा, और कानूनी सहायता प्रदान कर भ्रूण हत्या रोकने में मदद कर सकती हैं।
- **प्राकृतिक विज्ञान का सही उपयोग:**लिंग निर्धारण और अन्य तकनीकों का दुरुपयोग रोकने के लिए सख्त निगरानी।भ्रूण के विकास और देखभाल के लिए वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग।
- **संतुलित जनसंख्या नीति:**सरकारें उन नीतियों को लागू करें जो जनसंख्या में लिंग अनुपात को संतुलित बनाए रखें।
- **समाज में सकारात्मक बदलाव:**दीर्घकालिक योजनाओं के माध्यम से भ्रूण हत्या को समाप्त करने के लिए सामूहिक प्रयास।

4.3.4.3.भ्रूण हत्या के पक्ष व विपक्ष में नैतिक तर्क

- **जीवन का अधिकार (Right to Life):**हर जीवित प्राणी को जीने का अधिकार है। भ्रूण, भले ही वह गर्भ के प्रारंभिक अवस्था में हो, एक जीवन का बीज है। इसे समाप्त करना जीवन के मूल अधिकार का उल्लंघन माना जाता है।
- **भेदभाव और लिंग आधारित भ्रूण हत्या:**कन्या भ्रूण हत्या समाज में लिंग असमानता और महिला विरोधी मानसिकता को प्रकट करती है। यह न केवल एक जीवन को समाप्त करता है बल्कि महिलाओं के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण को और भी कमजोर करता है।

- **धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण:**अधिकांश धर्मों में भ्रूण हत्या को पाप और अनैतिक कृत्य माना गया है। धर्म जीवन के हर रूप को पवित्र मानते हैं और इसे खत्म करने का अधिकार किसी को नहीं देते।
- **भविष्य की पीढ़ियों पर प्रभाव:**भ्रूण हत्या समाज के लिंग अनुपात, जनसंख्या संरचना और सामाजिक संतुलन पर गहरा प्रभाव डालती है। लंबे समय में, यह एक असंतुलित और अस्वस्थ समाज का निर्माण कर सकती है।
- **माता की स्वतंत्रता और अधिकार:**कुछ तर्क यह देते हैं कि माता को अपने शरीर पर पूर्ण अधिकार होना चाहिए और भ्रूण को रखना या न रखना उसका व्यक्तिगत निर्णय होना चाहिए। हालांकि, यह स्वतंत्रता नैतिक दायित्वों से भी बंधी होती है।
- कुछ परिस्थितियों में भ्रूण हत्या नैतिक रूप से उचित हो सकती है:-**मेडिकल जरूरत:**यदि भ्रूण मां के जीवन के लिए खतरा बन रहा हो, तो भ्रूण हत्या को नैतिक रूप से स्वीकार्य माना जा सकता है।**बलात्कार के मामले:**ऐसी स्थितियों में भ्रूण को रखना महिला के मानसिक स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव डाल सकता है।**गंभीर विकलांगता:**यदि भ्रूण के स्वस्थ जीवन जीने की संभावना न हो, तो इस पर विचार किया जा सकता है।

4.3.4.4.भ्रूण हत्या और सरकारी डॉक्टरों का कर्तव्य (Foeticide and the duty of government doctors)

भ्रूण हत्या (खासतौर पर कन्या भ्रूण हत्या) एक गंभीर सामाजिक और नैतिक समस्या है, जो जीवन के अधिकार, लिंग समानता और चिकित्सा नैतिकता का उल्लंघन करती है। इस संदर्भ में सरकारी डॉक्टरों का कर्तव्य महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि वे न केवल स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने वाले होते हैं, बल्कि समाज में नैतिकता, कानून और मानवाधिकारों को लागू करने के भी प्रमुख स्तंभ हैं। सरकारी डॉक्टरों के प्रमुख कर्तव्य निम्न प्रकार से है -

(अ).नैतिकता का पालन करना-सरकारी डॉक्टरों को हमेशा चिकित्सा नैतिकता (Medical Ethics) का पालन करना चाहिए।

- **जीवन के प्रति सम्मान:**भ्रूण को संभावित जीवन माना जाता है। डॉक्टर का कर्तव्य है कि वे उसकी रक्षा करें और इसे नष्ट करने से बचें।
- **हिप्पोक्रेटिक शपथ का पालन:**डॉक्टरों को किसी भी स्थिति में जानबूझकर भ्रूण हत्या करने में शामिल नहीं होना चाहिए।
- **प्रोफेशनल इंटीग्रिटी:**भ्रूण हत्या के लिए चिकित्सा उपकरणों या तकनीकों का दुरुपयोग नहीं करना।

(आ). कानून का पालन और लागू करना-सरकारी डॉक्टरों पर यह जिम्मेदारी है कि वे भ्रूण हत्या रोकने वाले कानूनों का पालन करें और अन्य लोगों को भी इसके लिए जागरूक करें।

- **पीसीपीएनडीटी अधिनियम (PCPNDT Act):**डॉक्टरों को लिंग निर्धारण परीक्षण (Sex Determination Test) करने से बचना चाहिए।यदि कोई इस कानून का उल्लंघन करता है, तो उसे रिपोर्ट करना डॉक्टर का कर्तव्य है।
- **गर्भपात कानून (MTP Act):**केवल वैध परिस्थितियों में ही गर्भपात की अनुमति देना (जैसे महिला के जीवन को खतरा हो, बलात्कार का मामला हो, या भ्रूण में गंभीर विकार हो)।

(इ).गर्भवती महिलाओं को नैतिक परामर्श देना

- **समाज में भ्रूण हत्या के प्रभाव:**डॉक्टर का कर्तव्य है कि वह गर्भवती महिलाओं और उनके परिवारों को भ्रूण हत्या के नैतिक, कानूनी और सामाजिक प्रभावों के बारे में जानकारी दें।
- **मनोवैज्ञानिक समर्थन:**कई बार महिलाओं पर परिवार द्वारा भ्रूण हत्या का दबाव डाला जाता है। ऐसे में डॉक्टर को उनकी सहायता और मार्गदर्शन करना चाहिए।
- **लिंग समानता का प्रचार:**डॉक्टरों को गर्भवती महिलाओं और उनके परिवारों को समझाना चाहिए कि बेटियां बोझ नहीं हैं और बेटा-बेटी दोनों समान हैं।

(ई). भ्रूण हत्या के खिलाफ सक्रिय भूमिका निभाना -सरकारी डॉक्टर समाज में भ्रूण हत्या रोकने में सक्रिय भूमिका निभा सकते हैं।

- **जागरूकता अभियान चलाना:**ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में भ्रूण हत्या के खिलाफ जागरूकता फैलाना।महिलाओं और परिवारों को भ्रूण हत्या के परिणामों के बारे में शिक्षित करना।
- **सामाजिक और कानूनी बदलाव को बढ़ावा देना:**महिलाओं के अधिकार और लिंग समानता पर जोर देना।भ्रूण हत्या के मामलों को रोकने के लिए स्थानीय प्रशासन के साथ मिलकर काम करना।

(उ). भ्रूण हत्या रोकने में तकनीकी साधनों का जिम्मेदार उपयोग

- **अल्ट्रासाउंड और अन्य तकनीकों का सही उपयोग:**डॉक्टरों को अल्ट्रासाउंड और अन्य तकनीकों का उपयोग केवल वैध चिकित्सा उद्देश्यों के लिए करना चाहिए, न कि भ्रूण के लिंग का पता लगाने के लिए।

- **तकनीकी उपकरणों की निगरानी:**सरकारी डॉक्टरों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके अस्पताल या क्लिनिक में किसी भी तकनीक का दुरुपयोग न हो।

(ऊ).शिकायतों को संबोधित करना और रिपोर्ट करना

भ्रूण हत्या के मामलों की पहचान:यदि डॉक्टर को संदेह हो कि किसी महिला पर भ्रूण हत्या का दबाव डाला जा रहा है, तो उन्हें तुरंत संबंधित अधिकारियों को सूचित करना चाहिए।

गुप्त जानकारी की सुरक्षा:डॉक्टर को मरीज की गोपनीयता का सम्मान करना चाहिए, लेकिन यदि कोई कानून का उल्लंघन हो रहा है, तो उचित कदम उठाने चाहिए।

डॉक्टरों के लिए नैतिक चुनौतियां

(अ). सामाजिक दबाव:डॉक्टरों को कई बार परिवारों और समुदायों के दबाव का सामना करना पड़ता है, जो भ्रूण हत्या चाहते हैं।

(आ). भ्रष्टाचार:कुछ डॉक्टर आर्थिक लाभ के लिए भ्रूण हत्या और लिंग परीक्षण में शामिल हो जाते हैं।

(इ). अज्ञानता:ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में भ्रूण हत्या को सामाजिक मान्यता प्राप्त है, जिसे बदलना मुश्किल होता है।

सरकारी डॉक्टरों का कर्तव्य केवल चिकित्सा सेवाएं प्रदान करना नहीं है, बल्कि भ्रूण हत्या जैसी सामाजिक बुराइयों को रोकने में सक्रिय भूमिका निभाना भी है। उन्हें नैतिकता, कानून, और चिकित्सा के मूलभूत सिद्धांतों का पालन करते हुए समाज को शिक्षित और सशक्त बनाना चाहिए। भ्रूण हत्या के खिलाफ लड़ाई में डॉक्टर एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं, और उनकी जिम्मेदारी है कि वे जीवन को बचाने और समाज में सकारात्मक बदलाव लाने के लिए अपने कर्तव्यों का पालन करें।

4.3.4.5.भ्रूण हत्या और प्रशासनिक नैतिकता(Foeticide and administrative ethics)

प्रशासनिक नैतिकता (Administrative Ethics) का संबंध प्रशासन में नैतिक मूल्यों, ईमानदारी, और कर्तव्यनिष्ठा के साथ काम करने से है। भ्रूण हत्या जैसे संवेदनशील मुद्दे पर प्रशासन की भूमिका न केवल कानून लागू करने तक सीमित है, बल्कि इसमें सामाजिक सुधार और नैतिकता को बढ़ावा देना भी शामिल है। भ्रूण हत्या की रोकथाम के लिए प्रशासन को नैतिकता, पारदर्शिता, और जवाबदेही के साथ काम करना चाहिए। भ्रूण हत्या के संदर्भ में प्रशासनिक नैतिकता की भूमिका को निम्न बिंदुओं में स्पष्ट कर सकते हैं-

- **कानूनों का निष्पक्ष और नैतिक रूप से पालन :**प्रशासन का कर्तव्य है कि वह भ्रूण हत्या को रोकने वाले कानूनों को प्रभावी ढंग से लागू करे।लिंग निर्धारण परीक्षण (जैसे अल्ट्रासाउंड का दुरुपयोग) पर पूर्ण प्रतिबंध और इस प्रक्रिया में शामिल लोगों पर कार्रवाई।गर्भपात के लिए तय वैध परिस्थितियों (जैसे महिला के स्वास्थ्य का खतरा या बलात्कार के मामले) में ही अनुमति देना।
- **नैतिक नेतृत्व और पारदर्शिता :**भ्रूण हत्या रोकने में भ्रष्टाचार (जैसे डॉक्टरों और क्लीनिकों द्वारा रिश्वत लेकर लिंग परीक्षण करना) बड़ी समस्या है।प्रशासनिक अधिकारियों को भ्रूण हत्या से जुड़े मामलों में सख्त और निष्पक्ष कार्रवाई करनी चाहिए।स्वास्थ्य और प्रशासनिक सेवाओं में पारदर्शिता सुनिश्चित करना।प्रशासनिक अधिकारी समाज में भ्रूण हत्या के खिलाफ जागरूकता और नैतिकता का उदाहरण बनें।
- **सामाजिक कल्याण और नैतिक मूल्यों का प्रचार:**प्रशासन को ऐसी योजनाएं लागू करनी चाहिए जो महिलाओं को सशक्त और आत्मनिर्भर बनाएं, ताकि उन्हें बेटी को बोझ समझने की आवश्यकता न हो।उदाहरण: "बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ" योजना का प्रभावी क्रियान्वयन। लिंग समानता को बढ़ावा देने के लिए प्रशासन समाज में यह संदेश दे कि बेटा और बेटी समान हैं। शिक्षा और रोजगार में बेटियों को प्राथमिकता देकर इस असमानता को दूर करना।
- **नैतिक शिक्षा और जागरूकता अभियान:** समाज में भ्रूण हत्या की अनैतिकता को स्पष्ट करनाकरने के लिए प्रशासन स्कूलों, कॉलेजों, और समुदायों में भ्रूण हत्या के नकारात्मक प्रभावों और इसके नैतिक पहलुओं पर चर्चा करे व धार्मिक और सामाजिक संगठनों के माध्यम से भ्रूण हत्या के खिलाफ नैतिक संदेश फैलाए।मीडिया का सकारात्मक उपयोग हो जिसके लिए टेलीविजन, रेडियो, और सोशल मीडिया के माध्यम से भ्रूण हत्या के खिलाफ अभियान चलाएं।
- **कमजोर वर्गों की सहायता:**गरीब और पिछड़े वर्गों में यह धारणा प्रबल है कि बेटी का पालन-पोषण महंगा और कठिन होता है।प्रशासन को बालिकाओं के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, और दहेज जैसी कुरीतियों को समाप्त करने हेतु योजनाएं बनानी चाहिए।गर्भवती महिलाओं को मुफ्त स्वास्थ्य जांच और प्रसव सेवाएं देना।गर्भधारण से जुड़े खर्चों को कम करने के लिए सरकारी हस्तक्षेप।
- **भ्रूण हत्या के रोकथाम के लिए तकनीकी उपाय:**गर्भवती महिलाओं के मेडिकल रिकॉर्ड का डिजिटलकरण करना और नियमित निगरानी।अल्ट्रासाउंड क्लीनिकों पर निगरानी रखने के लिए तकनीकी उपाय जैसे सीसीटीवी और सॉफ्टवेयर का उपयोग।डॉक्टरों और अस्पतालों को भ्रूण हत्या में शामिल होने से रोकने के लिए सख्त दिशानिर्देश।

- **कठोर दंड और निगरानी:**भ्रूण हत्या में शामिल डॉक्टरों, क्लीनिकों, और अन्य लोगों को कड़ी सजा देना।भ्रूण हत्या के मामलों की जांच के लिए विशेष जांच दल (Special Investigation Team) का गठन।भ्रूण हत्या के मामलों की रिपोर्ट करने के लिए गुप्त हेल्पलाइन और शिकायत प्रणाली।जागरूक नागरिकों को भ्रूण हत्या के खिलाफ लड़ाई में शामिल करना।
- **भ्रष्टाचार पर नियंत्रण :**भ्रूण हत्या से जुड़े मामलों में अक्सर स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं और अधिकारियों के बीच भ्रष्टाचार देखा जाता है।प्रशासन को भ्रूण हत्या से जुड़े किसी भी भ्रष्टाचार के मामलों में जीरो-टॉलरेंस नीति अपनानी चाहिए।

4.3.4.6.भ्रूण हत्या रोकने में प्रशासनिक नैतिकता की चुनौतियां (Challenges of administrative ethics in preventing foeticide)

- **सामाजिक मान्यताओं का विरोध:**ग्रामीण क्षेत्रों में भ्रूण हत्या को पितृसत्तात्मक सोच और धार्मिक मान्यताओं के कारण उचित ठहराया जाता है।
- **भ्रष्टाचार:**भ्रूण हत्या में शामिल डॉक्टरों और अल्ट्रासाउंड क्लीनिकों को अक्सर प्रशासनिक अधिकारियों का संरक्षण मिलता है।
- **कानून का सीमित क्रियान्वयन:**लिंग परीक्षण और भ्रूण हत्या को रोकने वाले कानूनों का सही क्रियान्वयन न होना।
- **संसाधनों की कमी:**कमजोर वर्गों को आर्थिक और सामाजिक सहायता देने के लिए पर्याप्त संसाधनों का अभाव।

प्रशासनिक नैतिकता भ्रूण हत्या जैसे संवेदनशील मुद्दे को प्रभावी ढंग से संबोधित करने के लिए महत्वपूर्ण है। प्रशासन को ईमानदारी, जवाबदेही, और समाज के प्रति नैतिक कर्तव्यों का पालन करते हुए भ्रूण हत्या को रोकने के लिए कदम उठाने चाहिए। यह केवल एक कानूनी समस्या नहीं है, बल्कि सामाजिक और नैतिक सुधार का विषय भी है, जिसके लिए प्रशासन को समाज के साथ मिलकर काम करना होगा।

4.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

4.4.1.असमानता (Inequality)

असमानता और **अनुप्रयुक्त नैतिकता** का विश्लेषण इस बात पर केंद्रित है कि समाज में व्याप्त आर्थिक, सामाजिक, लैंगिक, और राजनीतिक असमानताओं का नैतिक दृष्टिकोण से मूल्यांकन कैसे किया जाए और इन्हें

कम करने के लिए व्यावहारिक समाधान कैसे लागू किए जाएं।असमानता केवल आर्थिक नहीं, बल्कि अवसरों, संसाधनों, और अधिकारों के वितरण में असंतुलन का परिणाम है। **अनुप्रयुक्त नैतिकता** इन समस्याओं को सुलझाने में नैतिक सिद्धांतों और व्यावहारिक दृष्टिकोणों का उपयोग करती है। क्या हर व्यक्ति के साथ समानता से व्यवहार करना हमारा नैतिक कर्तव्य है?सभी मनुष्यों के साथ समानता से व्यवहार करना उनका मूल अधिकार है।असमानता को समाप्त करना नैतिक कर्तव्य है, चाहे इसके परिणाम कुछ भी हों।जाति, धर्म, या लिंग के आधार पर भेदभाव करना कर्तव्यनिष्ठा के खिलाफ है।न्याय आधारित नैतिकता इस बात पर जोर देती है कि समाज में संसाधनों का वितरण समान और न्यायपूर्ण होना चाहिए।जो लोग अधिक वंचित हैं, उन्हें विशेष सहायता प्रदान की जानी चाहिए।आरक्षण नीति वंचित समुदायों को समान अवसर प्रदान करने का एक प्रयास है।पूर्ण समानता लागू करने से व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर असर पड़ सकता है।अनुप्रयुक्त नैतिकता यह संतुलन बनाने का प्रयास करती है कि समानता और स्वतंत्रता दोनों को बनाए रखा जाए।उच्च आय वालों पर कर लगाकर गरीबों की मदद करना समानता का प्रयास है, लेकिन इसे स्वतंत्रता के साथ संतुलित किया जाना चाहिए।

असमानता का अर्थ है संसाधनों, अधिकारों, और अवसरों का असमान वितरण। यह विभिन्न प्रकारों में देखी जा सकती है:-

•आर्थिक असमानता: धन और संसाधनों का असमान वितरण।

•सामाजिक असमानता: जाति, धर्म, या लिंग के आधार पर भेदभाव।

•लैंगिक असमानता: पुरुषों और महिलाओं के बीच अधिकारों और अवसरों में अंतर।

•शैक्षिक असमानता: शिक्षा तक पहुँच का असमान वितरण।

•राजनीतिक असमानता: राजनीतिक प्रतिनिधित्व और अधिकारों में असंतुलन

4.4.1.1.असमानता के नैतिक और सामाजिक प्रभाव (Ethical and social implications of inequality)

•संसाधनों केअसमान वितरण के कारण गरीबी और भुखमरी बढ़ती है।तथा समाज के कमजोर वर्गों को विकास के लाभ नहीं मिलते।

•असमानता से सामाजिक तनाव, अपराध, और हिंसा बढ़ती है।समाज में विभाजन और भेदभाव को बढ़ावा मिलता है व सामाजिक अन्याय बढ़ता है।वंचित वर्गों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाएँ नहीं मिलतीं।इससे अवसरों की असमानता और बढ़ती है: मूलभूत आवश्यकताओं तक पहुँच का अभाव।

•वंचित वर्गों का राजनीतिक प्रतिनिधित्व कमजोर हो जाता है।निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में सभी की समान भागीदारी नहीं होती।लोकतंत्र का कमजोर होना।

4.4.1.2.असमानता को कम करने के उपाय (Measures to reduce inequality)

•शिक्षा और जागरूकता:सभी के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करना।समाज में समानता के महत्व को समझाना।

•आर्थिक सुधार:गरीबों को आर्थिक सहायता प्रदान करना।संपत्ति और आय के असमान वितरण को कम करने के लिए प्रगतिशील कर प्रणाली लागू करना।

•सामाजिक नीतियाँ:वंचित समुदायों के लिए आरक्षण और अन्य सकारात्मक नीतियाँ।लैंगिक समानता को बढ़ावा देने के लिए विशेष योजनाएँ।

•न्याय और कानून का पालन:जाति, धर्म, या लिंग के आधार पर भेदभाव के खिलाफ सख्त कानून लागू करना।सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना।

•सामुदायिक भागीदारी:असमानता के खिलाफ सामुदायिक प्रयास।

•अंतर्राष्ट्रीय सहयोग:वैश्विक स्तर पर आर्थिक और सामाजिक असमानता को कम करने के प्रयास। विकासशील देशों को वित्तीय और तकनीकी सहायता प्रदान करना।

असमानता केवल एक सामाजिक या आर्थिक समस्या नहीं है, यह एक गहरी नैतिक चुनौती है।अनुप्रयुक्त नैतिकता इस समस्या को हल करने के लिए नैतिक सिद्धांतों और व्यावहारिक समाधानों का उपयोग करती है।समाज को ऐसे कदम उठाने चाहिए, जो समानता और स्वतंत्रता के बीच संतुलन बनाए रखें।नैतिकता और व्यावहारिकता के संतुलन से ही हम असमानता को कम कर सकते हैं और एक न्यायसंगत और समतामूलक समाज का निर्माण कर सकते हैं।

4.4.2.आत्महत्या (suicide)

आज आत्महत्या को एक प्रमुख सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या माना जाता है आत्महत्या न केवल एक मनोवैज्ञानिक और मनोरोग अध्ययन है, बल्कि समाजशास्त्रीय एवं मानवशास्त्रीय अध्ययन का विषय भी है। आत्महत्या के विषय को लागू नैतिकता के नजरिए से जांचा जाना चाहिए आत्महत्या नैतिक रूप से स्वीकार्य है या नहीं' ।इस मुद्दे का विश्लेषण महत्वपूर्ण है क्योंकि इस विषय में इसकी स्वीकृति अथवा अस्वीकृति के संबंध में विभिन्न कारणों से दार्शनिकों के कई विचार हैं। आत्महत्या के सम्बन्ध में देखा जाना चाहिए की लोक प्रशाशन की क्या भूमिका है। एक आत्म-जागरूक प्राणी स्वयं को अतीत और भविष्य के साथ एक अलग इकाई के रूप में जानता है। ऐसा प्राणी अपने भविष्य की इच्छा रखने में भी सक्षम होता है। आत्महत्या को एक अपराध के रूप में देखा गया है और भगवान का अपमान है। यह जीवन की पवित्रता के सिद्धांत नियम का भी उल्लंघन करता है। 'आत्महत्या' शब्द दो लैटिन मूल शब्दों 'सुई' (स्वयं का) और 'सीडियम' (हत्या / हत्या या वध) से आया है, अर्थात स्वयं की हत्या। आत्महत्या को चिकित्सकीय रूप से जानबूझकर और स्वेच्छा से खुद को मारने के कार्य के रूप में परिभाषित किया गया है। आत्महत्या में, मृत्यु का कारण बनने वाली स्थितियां स्व-व्यवस्थित होती हैं। दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि हत्या जानबूझकर की गई है जो मनोवैज्ञानिक और मानसिक कारकों से प्रेरित है।नैतिक रूप से यह एक बहस का मुद्दा है कि आत्महत्या की अनुमति दी जानी चाहिए या नहीं। आत्महत्या करने का कारण उस दर्द को दूर करने के साधन के रूप में देखा जाता है जिसे अनंत दर्द माना जाता है। इसके विपरीत, यह जीवन के सिद्धांत मूल्य का उल्लंघन करता है। आत्महत्या के विषय पर केंद्रीय प्रश्न इसकी नैतिक स्वीकार्यता और अस्वीकार्यता के संबंध में है। अर्थात्, क्या ऐसी कोई स्थिति है जिसके तहत आत्महत्या नैतिक रूप से स्वीकार्य है, और यदि हां, तो वे शर्तें क्या हैं?क्या आत्महत्या करने का निर्णय तर्कसंगत या तर्कहीन माना जाता है?आत्महत्या के बारे में विभिन्न दार्शनिकों के अलग-अलग विचार हैं। कुछ में आत्महत्या के पक्ष में एक सहमति है और कुछ ने आत्महत्या की निंदा की है।

4.4.2.1.आत्महत्या के पक्ष- विपक्ष में दार्शनिकों के नैतिक विचार (Moral views of philosophers for and against suicide)

आत्महत्या के पक्ष में दार्शनिको के नैतिक विचार

मानव जीवन पवित्र है । जीवन सम्मान का पात्र है और जीवन को पूरी तरह से जीना चाहिए। किसी को भी अपना जीवन समाप्त करने का अधिकार नहीं है। प्लेटो आत्महत्या का विरोध करता है और मानता है कि "आत्महत्या हमेशा गलत होती है क्योंकि यह 'भाग्य के आदेश को विफल करती है।" उनका मानना है कि 'भगवान संरक्षक हैं'

एक आदमी को इंतजार करना चाहिए और अपनी जान नहीं लेनी चाहिए जब तक कि भगवान उसे बुलाए नहीं। प्लेटो के कथन के अतिरिक्त अरस्तु ने भी आत्महत्या का विरोध करते हुए कहा कि यह 'जीवन की भूमिका के विपरीत है।इमैनुएल कांट (द मेटाफिजिक्स ऑफ मोरल्स, 1797) का तर्क है कि आत्महत्या गलत है क्योंकि मनुष्य ईश्वर की संपत्ति है और उन्हें अपना जीवन समाप्त करने का कोई अधिकार नहीं है। उनका मानना है कि आत्महत्या हमारी आंतरिक दुनिया को नीचा दिखाती है। आत्महत्या स्वयं के प्रति एवं उसके कर्तव्य के प्रति अनादर है। कांट के लिए आत्महत्या अनैतिक है क्योंकि यह मानवता का उल्लंघन है। इसलिए, आत्म-संरक्षण स्वयं के लिए हमारा सर्वोच्च कर्तव्य है और हर कोई अपने शरीर के साथ जैसा चाहे वैसा व्यवहार कर सकता है। इसके अलावा, कांट कहते हैं, "आत्महत्या न करना एक पूर्ण कर्तव्य है और कार्रवाई आत्म-संरक्षण से प्रेरित होनी चाहिए।जी एल किट्रेडगे का मानना है कि आत्महत्या कायरतापूर्ण और गलत है।आर ब्रांट (1980) और जे ग्लोवर (1990) आत्महत्या करने के अलग-अलग कारकों को स्वीकार करते हैं जो व्यक्ति के परिवार को भी प्रभावित करते हैं। ब्रांट का दावा है कि संकट या अवसाद के आधार पर आत्महत्या करना तर्कहीन माना जाता है और नैतिक रूप से अस्वीकार्य है। आत्महत्या को एक तर्कहीन कार्य मानने का कारण यह है कि भविष्य में तनाव और अवसाद की स्थिति में सुधार होने की संभावना अधिक है। इसलिए जीवन को समाप्त करने का निर्णय समय से पहले लगता है।जब कोई व्यक्ति गंभीर रूप से बीमार होता है तो आत्महत्या का एकमात्र कार्य तर्कसंगत माना जाता है। इस दृष्टिकोण के पीछे सोच यह है कि जो व्यक्ति दर्द सहता है वह हर समय नकारात्मक सोचता है। उसे इस बात का अहसास है कि वह भविष्य में ठीक नहीं होगा। अपने असहनीय दर्द के कारण, वह जीवन में अपना विश्वास खो देता है और उसे एक ही उपाय मिलता है कि वह आत्महत्या कर ले। बैटिन का कहना है कि व्यक्तियों का दूसरों के प्रति कर्तव्य है और यह आत्महत्या को अस्वीकार्य बनाता है।

आत्महत्या के विपक्ष में दार्शनिको के नैतिक विचार

कुछ ग्रीक और रोमन दार्शनिकों ने दुख को समाप्त करने के साधन के रूप में आत्महत्या को मंजूरी दी। एक स्टोइक दार्शनिक एपिक्टेटस आत्महत्या का समर्थन करता है। उनका कहना है कि "किसी के हाथ से मृत्यु का हमेशा एक विकल्प होता है और अक्सर दुख के जीवन से अधिक सम्मानजनक होता है।" एपिक्टेटस का मानना है कि आत्महत्या नैतिक रूप से स्वीकार्य है लेकिन केवल 'अत्यधिक परिस्थितियों में। डेविड ह्यूम ने अपने निबंध (ऑफ सुसाइड, 1783) में बताया है कि 'आत्महत्या इस बात पर केंद्रित है कि क्या आत्महत्या ईश्वर के कर्तव्यों का उल्लंघन करती है। वे कहते हैं, एक नियम के रूप में, भगवान ने हमें अपनी खुशी के लिए प्रकृति को बदलने की

स्वतंत्रता दी है और आत्महत्या हमारी खुशी के लिए प्रकृति के पाठ्यक्रम को बदलने का एक उदाहरण है। इसलिए आत्महत्या भगवान की योजना का उल्लघन नहीं करती है।ह्यूम ने यह कथन देते समय आत्महत्या के विचार का समर्थन करने के लिए 'स्वायत्तता' और मानव स्वतंत्रता का उपयोग एक कारण के रूप में किया है। जैसे यदि कोई व्यक्ति अपने जीवन से नाखुश है, और भगवान ने हमें स्वतंत्र इच्छा दी है तो व्यक्ति को अपना जीवन समाप्त करने का अधिकार है। यदि व्यक्ति को लगता है कि वह समाज के प्रति बाध्य नहीं है और उसकी खुशी अपने जीवन को समाप्त करने में है तो उसे आत्महत्या करनी चाहिए। आत्महत्या करने से समाज को कोई नुकसान नहीं होता है।ह्यूम की स्थिति स्वायत्तता के सिद्धांत पर आधारित है। उन्होंने कुछ शर्तों पर चर्चा की जहां आत्महत्या की अनुमति है और यह व्यक्ति के हित या परिवार पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, एक जासूस रहस्य प्रकट करने से बचने के लिए दूसरे देश द्वारा बंधी बनाये जाने के बाद खुद को मारना चाहता है। ह्यूम का दावा है कि अगर जासूस खुद को नहीं मारता है तो वह जीवन भर दर्द में रहेगा। अतः स्वायत्तता के सिद्धांत के अनुसार, आत्महत्या नैतिक रूप से स्वीकृत है।उपयोगितावादी मत-जे.एस. मिल, एक उपयोगितावादी दार्शनिक हैं। वे कहते है कि प्रारंभिक प्रयास के बाद आत्महत्या की रोकथाम कभी भी उचित नहीं है। यह एक व्यक्ति का अधिकार है कि वह जो करना चाहता है, वह करे जो। आत्महत्या का निर्णय जानबूझकर किया गया है और पर्याप्त ज्ञान के बाद किया गया है, यह जानने के लिए मिल अस्थायी रूप से हस्तक्षेप करने के पक्ष में है। एक बार इरादा, साथ ही व्यक्ति की तर्कसंगतता, स्थिति के बारे में स्पष्ट है तो हस्तक्षेप करने का कोई मतलब नहीं है। मिल का कहना है कि एक व्यक्ति जो करना चाहता है वह कर सकता है चाहे वह आत्महत्या का मामला हो। स्वतंत्रता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता दो महत्वपूर्ण अधिकार हैं जिन्हें समाज को संरक्षित करने का लक्ष्य रखना चाहिए। जो व्यक्ति आत्महत्या करना चाहता है, वह अपने जीवन को समाप्त करने की संतुष्टि के साथ दर्द और हानि को तौलता है। व्यक्ति को उस कृत्य से मिलने वाले सुखद परिणामों के अनुसार कार्य करना चाहिए। आत्महत्या पर मिल का दृष्टिकोण उपयोगितावादी सिद्धांत से प्रेरित है अर्थात आनंद या खुशी ही एकमात्र ऐसी चीज है जिसका वास्तव में आंतरिक मूल्य है।उपयोगितावादी उन सभी संभावनाओं को मापते हैं जो दिखाती हैं कि आत्महत्या के अच्छे परिणाम बुरे परिणामों से अधिक हैं। यह माप एक सराहनीय कार्य के रूप में आत्महत्या की ओर ले जाता है और हमें नैतिक रूप से अनिवार्य होने का आभास देता है। आत्महत्या को कभी-कभी एक सम्मानजनक कार्य के रूप में माना जा सकता है यदि यह अन्य संबंधित या अन्य कल्याण के लिए प्रतिबद्ध है। परोपकारी कारणों से, आत्महत्या को सम्मानजनक माना जाता है। उदाहरण के लिए, शहादत का एक कार्य, जहां एक सैनिक अपनी बटालियन को बचाने के लिए ग्रेनेड पर कूद रहा है।उपयोगितावादियों का मानना है कि खुशी को अधिकतम करना हमारा नैतिक

कर्तव्य है और यदि आत्महत्या का कार्य दुःखी जीवन जीने से ज्यादा खुशी पैदा करेगा तो आत्महत्या न केवल नैतिक रूप से स्वीकार्य है बल्कि नैतिक रूप से आवश्यक है। इसलिए, केवल कार्य दुःखी जीवन जीने से ज्यादा खुशी पैदा करेगा तो आत्महत्या न केवल नैतिक रूप से स्वीकार्य है बल्कि नैतिक रूप से आवश्यक है। इसलिए, केवल उपयोगितावादी मानते हैं कि आत्महत्या एक नैतिक कर्तव्य है यदि आत्महत्या करने का निर्णय समझदारी से लिया जाए।ब्रांट का मानना है कि आत्महत्या करने का एकमात्र कार्य तर्कसंगत और नैतिक रूप से स्वीकार्य है जब कोई व्यक्ति गंभीर रूप से बीमार होता है।बेल्ज बताते हैं कि आत्मरक्षा में खुद को मारना नैतिक रूप से स्वीकार्य है।

इस प्रकार आत्महत्या पर दार्शनिकों के अलग-अलग दृष्टिकोण हैं और उसकी स्वीकृति और अस्वीकृति के कारण एकसमान नहीं हैं। यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य है कि आत्महत्या के पक्ष में रहने वाले दार्शनिक भी जीवन को महत्व देते हैं।

4.4.2.2.आत्महत्या के बारे में विभिन्न धार्मिक दृष्टिकोण (Different religious views on suicide) विभिन्न धर्मों में भिन्न होते हैं, और प्रत्येक धर्म आत्महत्या को अपने सिद्धांतों और नैतिकता के आधार पर देखता है। हालांकि अधिकांश धर्म आत्महत्या को नकारात्मक दृष्टिकोण से देखते हैं, यह समाज, संस्कृति और धार्मिक विश्वासों पर आधारित होता है।

हिंदू धर्म में जीवन को ब्रह्म (ईश्वर) का उपहार माना जाता है, और आत्महत्या को सामान्यतः एक पाप के रूप में देखा जाता है।**:** हिंदू धर्म में जीवन को पवित्र और अमूल्य माना जाता है, और हर व्यक्ति को अपना धर्म निभाने के लिए जीवन जीने का अधिकार है।आत्महत्या से किसी व्यक्ति के कर्म का निपटान नहीं होता है; इससे व्यक्ति के जीवन के उद्देश्य को पूरा करने में विफलता होती है। आत्महत्या करने से व्यक्ति का पुनर्जन्म भी प्रभावित हो सकता है। हालांकि कुछ संतों और महात्माओं द्वारा समाधि या आत्मनिर्वाण को एक प्रकार के जीवन का अंत माना जाता है, फिर भी यह विशेष परिस्थितियों और विशिष्ट उद्देश्य से जुड़ा होता है, और सामान्य व्यक्ति के लिए आत्महत्या का कोई धार्मिक समर्थन नहीं है।इस्लाम में आत्महत्या को एक गंभीर पाप माना जाता है।**:** इस्लाम में जीवन को अल्लाह का उपहार माना जाता है, और इसे समाप्त करना अल्लाह के आदेश के खिलाफ होता है।क़ुरान और हदीस में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि आत्महत्या करने वाला व्यक्ति अंतिम दिन के लिए पाप का भागी बनेगा। **जीवन का:** जीवन का हर पल ईश्वर द्वारा निर्धारित होता है, और इंसान का काम उसे पूरी तरह से निभाना होता है, न कि उसे समाप्त करना।ईसाई धर्म में भी आत्महत्या को गलत और पाप माना जाता है।ईसाई

विश्वास के अनुसार, जीवन ईश्वर का उपहार है, और इसे समाप्त करना ईश्वर के अस्तित्व और योजना के खिलाफ है। बाइबिल में आत्महत्या को अपराध की श्रेणी में रखा गया है, क्योंकि यह जीवन का अनादर करने के समान है। तुम आत्महत्या नहीं कर सकते" इस प्रकार का सिद्धांत बाइबिल के शिक्षाओं में व्यक्त किया जाता है।"ईसाई धर्म में मृत्यु के बाद पुनरुत्थान की बात की जाती है, और आत्महत्या करने से व्यक्ति को उस जीवन के अंतिम निर्णय का मौका नहीं मिलता।धर्म में जीवन को अस्थिर और दुखों से भरा हुआ माना जाता है, लेकिन आत्महत्या का समाधान नहीं दिया गया है।बुद्ध के अनुसार, दुखों से मुक्ति के लिए ध्यान, योग और सही विचार की आवश्यकता होती है। आत्महत्या से केवल दुख बढ़ता है, क्योंकि यह जीवन के उद्देश्य से भागना है। आत्महत्या के बजाय, आत्मनिरीक्षण और मानसिक शांति की प्राप्ति का मार्ग सुझाया जाता है, ताकि व्यक्ति अपने दुखों को समझ सके और उनसे मुक्त हो सके।सिख धर्म में आत्महत्या को किसी भी हालत में उचित नहीं माना जाता।सिख धर्म में जीवन को ईश्वर द्वारा दिया गया उपहार माना जाता है, और आत्महत्या को ईश्वर के आदेश का उल्लंघन माना जाता है।गुरु ग्रंथ साहिब में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जीवन का मूल्य समझकर उसे ईश्वर की सेवा में व्यतीत करना चाहिए, न कि उसे समाप्त करना चाहिए।सिख धर्म में आत्महत्या से बचने के लिए संतोष, ध्यान, और सेवा का मार्ग दिखाया गया है।जैन धर्म में, विशेष परिस्थितियों में संन्यास" या "सामाधि" की अवधारणा है", जो एक प्रकार से जीवन का समापन है। हालांकि, यह सामान्य आत्महत्या से अलग है, क्योंकि यह स्वेच्छा से और आत्मा की शुद्धि के उद्देश्य से किया जाता है।जैन धर्म में जीवन को पवित्र माना जाता है, और इसमें हर प्रकार के हिंसा से बचने की शिक्षा दी जाती है। इसलिए, सामान्य जीवन में आत्महत्या को निंदनीय माना जाता है। धार्मिक दृष्टिकोण से आत्महत्या को नकारते हुए, जीवन को पवित्र और संघर्षों के बावजूद उसे जीने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है।

क्या आत्महत्या का कार्य पुण्य या पाप है? किस परिस्थिति में आत्महत्या का कार्य साहस, उदारता या न्याय जैसे गुणों को प्रदर्शित करता है? और किन परिस्थितियों में आत्महत्या का कार्य कायरता, स्वार्थ, या उतावलेपन जैसी बुराइयों को दर्शाता है? ये विचार करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न हैं और इन प्रश्नों का कोई विशेष उत्तर नहीं है। किसी व्यक्ति की व्यक्तिपरक और साथ ही तर्कसंगत सोच पर आधारित है ताकि यह तय किया जा सके कि आत्महत्या का कार्य नैतिक रूप से अच्छा है या बुरा। यदि स्वायत्तता के तर्क का जिक्र है तो यह हमारीस्वतंत्र इच्छा है कि कोई व्यक्ति जो चाहे वह कार्य करे। इसके विपरीत, यदि जीवन की पवित्रता के सिद्धांत की बात की जाए तो व्यक्ति को अपने जीवन को महत्व देना चाहिए और जीवन को पूरी तरह से जीना चाहिए। ये दो विपरीत विचार हैं

जो हमारे दैनिक जीवन में व्यवहार करते हैं और इस दुनिया में मौजूद हैं। ऐसे कई विचार हैं जो किसी व्यक्ति को यह तय करने में मदद करेंगे कि आत्महत्या की नैतिक स्वीकार्यता और अस्वीकार्यता पर उसका क्या विचार है।

4.4.2.3.लोक प्रशासन की भूमिका (Role of Public Administration)

आत्महत्या एक गंभीर सामाजिक और मानसिक स्वास्थ्य समस्या है, और इसे रोकने के लिए लोक प्रशासन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। आत्महत्या से जुड़े कारणों का समाधान केवल चिकित्सा सहायता से ही नहीं, बल्कि व्यापक सरकारी प्रयासों, नीतियों और कार्यक्रमों के माध्यम से भी किया जा सकता है। लोक प्रशासन, जो शासन और समाज के बीच समन्वय की भूमिका निभाता है, आत्महत्या की रोकथाम में कई तरह से शामिल हो सकता है।**लोक प्रशासन की भूमिका के मुख्य पहलू:**

- **मानसिक स्वास्थ्य नीतियां:** लोक प्रशासन मानसिक स्वास्थ्य से संबंधित स्पष्ट और प्रभावी नीतियों का निर्माण कर सकता है। उदाहरण के लिए, भारत में *राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम* (National Mental Health Program) और *राष्ट्रीय आत्महत्या रोकथाम नीति* (National Suicide Prevention Policy) जैसी योजनाएं आत्महत्या के मामलों को कम करने के लिए लागू की जा सकती हैं।
- **आत्महत्या रोकथाम के लिए सरकारी योजनाएं:** विशेष योजनाएं जो आत्महत्या के जोखिम वाले वर्गों जैसे किसान, छात्र, बेरोज़गार व्यक्तिके लिए वित्तीय और मानसिक सहायता प्रदान करती हैं।
- **समान्य स्वास्थ्य सेवाओं में मानसिक स्वास्थ्य को शामिल करना:**प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल केंद्रों में मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं का समावेश करना, ताकि मानसिक समस्याओं की पहचान जल्दी हो सके और इलाज किया जा सके।
- **मनोचिकित्सक और काउंसलर की उपलब्धता:** पूरे देश में मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच बढ़ाना, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में, ताकि लोग आसानी से मदद प्राप्त कर सकें।
- **स्कूल और कॉलेज स्तर पर कार्यक्रम:** छात्रों को तनाव प्रबंधन, आत्मविश्वास बढ़ाने और मानसिक स्वास्थ्य के बारे में जागरूक किया जाए।
- **सामाजिक अभियान:** आत्महत्या रोकने के लिए मीडिया और सोशल मीडिया के माध्यम से सकारात्मक संदेश प्रसारित किए जाएं।
- **पारिवारिक परामर्श:** परिवारों को भावनात्मक समर्थन और तनाव प्रबंधन के लिए प्रशिक्षित किया जाए।लोक प्रशासन जन जागरूकता अभियानों को चलाकर आत्महत्या के बारे में मिथकों और गलत धारणाओं को तोड़

सकता है।स्कूलों और कॉलेजों में मानसिक स्वास्थ्य शिक्षा को बढ़ावा देना, ताकि युवा आत्महत्या के जोखिम को पहचान सकें और मानसिक स्वास्थ्य के महत्व को समझ सकें।

- **मीडिया की जिम्मेदारी:** सरकार को मीडिया के माध्यम से आत्महत्या से संबंधित मामलों की रिपोर्टिंग को संवेदनशील बनाना चाहिए, ताकि इसे सनसनीखेज न बनाया जाए।
- **हेल्पलाइन सेवाएं और सहायता केंद्र:** 24 घंटे काम करने वाली हेल्पलाइन सेवाओं और संकट सहायता केंद्रों का निर्माण करना, जहां लोग अपनी समस्याओं को साझा कर सकें और मानसिक स्वास्थ्य विशेषज्ञों से तुरंत मदद प्राप्त कर सकें।
- **समुदाय आधारित सहायता नेटवर्क:** सामुदायिक स्तर पर मानसिक स्वास्थ्य सहायता नेटवर्क की स्थापना, जिसमें परिवार, दोस्तों, और समुदाय के सदस्य सक्रिय रूप से आत्महत्या की रोकथाम में योगदान करें।
- **आर्थिक और सामाजिक कारणों का समाधान:** भारत में किसानों द्वारा आत्महत्या की दर बहुत अधिक है। लोक प्रशासन को इस समस्या को हल करने के लिए किसान कर्ज माफी, कृषि बीमा योजनाएं और अन्य समर्थन प्रदान करने वाली नीतियाँ बनानी चाहिए।बेरोज़गारी और वित्तीय समस्याओं के कारण आत्महत्या के मामलों में वृद्धि हो सकती है। लोक प्रशासन रोजगार पैदा करने, गरीबी हटाने और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं को लागू करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।।बेरोजगारी और आर्थिक तंगी से जूझ रहे लोगों के लिए कौशल विकास और रोजगार प्रदान करने वाली योजनाएं चलाई जाएं।आर्थिक असुरक्षा को कम करने के लिए वृद्धावस्था पेंशन, विधवा पेंशन और बीमा योजनाएं लागू की जाएं।
- **स्मार्ट डेटा संग्रहण और अनुसंधान:**आत्महत्या के कारणों और पैटर्न का अध्ययन करने के लिए डेटा संग्रहण और अनुसंधान को बढ़ावा देना, ताकि नीति निर्माण में सुधार हो सके।और अन्य सरकारी संस्थाएं आत्महत्या से संबंधित आंकड़ों का विश्लेषण कर सकती हैं, जिससे नीतियां और योजनाएं अधिक प्रभावी बन सकें।
- **सामाजिक कलंक का समाप्ति:**आत्महत्या के मुद्दे को समाज में एक कलंक के रूप में नहीं देखना चाहिए। लोक प्रशासन को इस मानसिकता को बदलने के लिए सार्वजनिक अभियान चलाना चाहिए, ताकि लोग मानसिक स्वास्थ्य के बारे में खुलकर बात कर सकें और मदद प्राप्त कर सकें।

आत्महत्या रोकने के लिए लोक प्रशासन की भूमिका न केवल नीति निर्माण और योजनाओं तक सीमित है, बल्कि यह समाज में मानसिक स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता फैलाने, सहायता केंद्रों की स्थापना, और आर्थिक-सामाजिक समस्याओं का समाधान करने तक विस्तृत है। आत्महत्या की रोकथाम एक बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसमें सरकारी, सामाजिक और स्वास्थ्य संस्थाओं की संयुक्त कोशिशों की आवश्यकता होती है।

4.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(**अ**). किसके अंतर्गत पर्यावरण और मानव के बीच संबंधों को नैतिक दृष्टिकोण से समझने की कोशिश की जाती है।

(आ).गर्भ समापन अधिनियम का नाम क्या है **?**

(इ)सामान्यत गर्भ को समाप्त करने की अवधि कितनी है **?**

(ई)."आत्महत्या हमेशा गलत होती है क्योंकि यह 'भाग्य के आदेश को विफल करती है" यह कथन किस विद्वान का है **?**

(उ).मनुष्य ईश्वर की संपत्ति है यह कथन किस विद्वान का है **?**

4.6.सारांश (Summary)

अनुप्रयुक्त नैतिकता (**Applied Ethics)** के अंतर्गत उन नैतिक समस्याओं का अध्ययन किया जाता है जो व्यावहारिक जीवन से जुड़ी होती हैं। इसमें नैतिक सिद्धांतों को वास्तविक जीवन की स्थितियों और चुनौतियों पर लागू करके उनका समाधान ढूंढने का प्रयास किया जाता है।असमानता कई रूपों में हो सकती है, जैसे आर्थिक, सामाजिक, लैंगिक और शैक्षणिक। नैतिक दृष्टिकोण से असमानता एक बड़ी समस्या है क्योंकि यह समानता के सिद्धांत और न्याय को ठेस पहुँचाती है।क्या समाज में सभी को समान अवसर मिलना चाहिए**?**आर्थिक असमानता को कम करने के लिए सरकार की क्या जिम्मेदारी है**?**समान अवसरों की नीति अपना कर ,सकारात्मक भेदभाव व समतामूलक शिक्षा और संसाधनों का न्यायपूर्ण वितरण कर इस समस्या कोदूर किया जा सकता है। गर्भपात वह प्रक्रिया है जिसमें गर्भस्थ भ्रूण को जन्म से पहले समाप्त कर दिया जाता है। यह नैतिक और कानूनी दोनों दृष्टिकोण से विवादास्पद विषय है।भ्रूण को भी जीवन का अधिकार है और गर्भपात हत्या के समान है।क्या भ्रूण के जीवन का अधिकार महिला की स्वतंत्रता से अधिक महत्त्वपूर्ण है**?** क्या परिस्थितियों के आधार पर गर्भपात को स्वीकार किया जा सकता है**?**ऐसी दुविधा उत्पन्न होती है गर्भपात की अनुमति चुनिंदा परिस्थितियों में तथा महिला के स्वास्थ्य और अधिकारों को प्राथमिकता देना आवश्यक है। भ्रूण हत्या, विशेषकर कन्या भ्रूण हत्या, सामाजिक और नैतिक दृष्टिकोण से गंभीर अपराध है। यह लिंग-आधारित भेदभाव और पितृसत्तात्मक मानसिकता का परिणाम है।

पितृसत्तात्मक समाज में लड़के को प्राथमिकता,लिंग परीक्षण तकनीकों का दुरुपयोग इसके कारण में से हैं। लिंग परीक्षण पर सख्त प्रतिबंध और कानून का पालन,शिक्षा और जागरूकता अभियान,महिलाओं के प्रति भेदभावपूर्ण

परंपराओं का उन्मूलन आदि उपाय अपनाये जा सकते हैं। आत्महत्या नैतिक और सामाजिक दृष्टिकोण से जटिल मुद्दा है। यह व्यक्ति की मानसिक स्थिति और समाज के दबाव का परिणाम होता है।जीवन एक मूल्यवान उपहार है और आत्महत्या नैतिक रूप से गलत है।पर्यावरण क्षरण में प्राकृतिक संसाधनों का अति दोहन और प्रदूषण शामिल है, जिससे पर्यावरण को भारी नुकसान होता है। यह वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए खतरा उत्पन्न करता है।औद्योगिकीकरण और शहरीकरण,वनों की कटाई और प्रदूषण,प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन इसके कारन है क्या हमें विकास के नाम पर पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने का अधिकार है?वर्तमान पीढ़ी का कर्तव्य क्या है कि वह आने वाली पीढ़ियों के लिए संसाधनों को सुरक्षित रखे?यह नैतिक सवाल है टिकाऊ विकास (**Sustainable Development)** को अपना,पर्यावरण संरक्षण के लिए सख्त कानून,जागरूकता अभियान और हरित ऊर्जा (**Green Energy)** का उपयोग इस को दूर किया जा सकता है या हम अपने कर्तव्य का निर्वाहन कर सकते हैं अनुप्रयुक्त नैतिकता के अंतर्गत असमानता, गर्भपात, भ्रूण हत्या, आत्महत्या और पर्यावरण क्षरण जैसे विषयों पर गहराई से चर्चा की जाती है। इन समस्याओं का समाधान केवल कानूनी उपायों से संभव नहीं है, बल्कि समाज में नैतिकता, जागरूकता और जिम्मेदारी की भावना विकसित करना भी अत्यंत आवश्यक है।

4.7.सूचक शब्द (Key Words)

- **स्वायत्तता**: यह स्वशासन की एक अवस्था या स्थिति है या किसी के मूल्यों, इच्छाओं या कारणों के अनुसार अपना जीवन व्यतीत करता है।
- **कर्तव्य**: एक नैतिक या कानूनी दायित्व जहां किसी को अपनी नौकरी के अनुसार कार्य करने की आवश्यकता होती है।
- **नीतिशास्त्र**: यह दर्शनशास्त्र की एक शाखा है जो नैतिक सिद्धांतों से संबंधित है।
- **नैतिकता**: अच्छे और बुरे या सही और गलत व्यवहार के बीच भेद से संबंधित सिद्धांत ।

4.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- अनुप्रयुक्त नैतिकता के उद्देश्यों का वर्णन करें।
- गर्भपात के पक्ष और विपक्ष में नैतिक तर्क दें तथा इससे संबंधित कानूनों का वर्णन करें।
- पर्यावरण नैतिकता का विस्तार से वर्णन करें।
- भ्रूण हत्या के कारणों और उससे संबंधित विचारों का वर्णन करें।

4.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(अ**).**पर्यावरणीय नीतिशास्त्र (**Environmental Ethics)**

(आ**).**गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम**, 1971 (Medical Termination of Pregnancy Act, 1971)**

(इ**).20** सप्ताह

(ई**).**प्लेटो

(उ**).**इमैनुएल कांट

4.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

- अरोड़ा**,** आर. के. (**2008)** शासन में नैतिकता: नवीन मुद्दे और उपकरण। रावत: जयपुर
- अरोड़ा**,** रमेश के. (संपादक) (**2014)** लोक सेवा में नैतिकता**,** सत्यनिष्ठा और मूल्य। न्यू एज इंटरनेशनल: नई दिल्ली
- सी. भार्गव**,** आर. (**2006)** भारतीय संविधान की राजनीति और नैतिकता। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस: नई दिल्ली
- डी. चक्रवर्ती**,** विद्युत (**2016)** भारत में शासन में नैतिकता। रूटलेज: नई दिल्ली
- ई. चतुर्वेदी**,** टी. एन. (संपादक) (**1996)** सार्वजनिक जीवन में नैतिकता। आईआईपीए: नई दिल्ली
- एफ. गांधी**,** महाथिरिम (**2009)** हिंद स्वराज। राजपाल एंड संस: दिल्ली
- जी. गोडबोले**,** एम. (**2003)** सार्वजनिक जवाबदेही और पारदर्शिता: सुशासन के आवश्यक तत्व। ओरिएंट लॉन्गमैन: नई दिल्ली
- एच. हूजा**,** आर. (**2008)** भ्रष्टाचार**,** नैतिकता और जवाबदेही: एक प्रशासक द्वारा निबंध। आईआईपीए: नई दिल्ली

आई. माथुर**,** बी. पी. (**2014)** शासन के लिए नैतिकता: सार्वजनिक सेवाओं का पुनर्निर्माण। रूटलेज: नई दिल्ली

Subject : Public Administration -Administrative ethics in governance	
Course Code : PUBA 301	**Author : Dr. Parveen sharma**
Lesson No. : 5	**Vetter :**
मृत्युदंड और नैतिक दुविधाओं प्रकृति (Capital punishment and nature of moral dilemmas)	

अध्याय की सरंचना

5.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

5.2.परिचय (Introduction)

5.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

5.3.1.मृत्युदंड (Capital Punishment)

5.3.2.भारतीय दर्शन में मृत्युदंड (complete punishment in Indian philosophy)

5.3.3.भारतीय संविधान और मृत्युदंड का दृष्टिकोण (Indian Constitution and its View on Death Penalty)

5.3.4.भारतीय न्यायपालिका के मृत्युदंड पर महत्वपूर्ण निर्णय (Important decisions of Indian Judiciary on death penalty)

5.3.5.मृत्युदंड के पक्ष में नैतिक तर्क (Moral arguments in favour of death penalty)

5.3.6..मृत्युदंड के विरूध तर्क (Arguments against death penalty)

5.4. पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

5.4.1.नैतिक दुविधाएँ)Moral Dilemmas)

5.4.2नैतिक दुविधाओं के उदाहरण (examples of ethical dilemmas)

5.4.3.नैतिक दुविधाओं के प्रकार (Types of ethical dilemmas)

5.4.4.नैतिक दुविधाओं को सुलझाने के लिए दृष्टिकोण (Approaches to solving ethical dilemmas)

5.4.5.नैतिक दुविधा से निपटने के उपाय(Ways to deal with ethical dilemma)

5.4.6.सीमाएँ(Limitations)

5.4.7.प्रशासनिक नैतिक दुविधा (Administrative Ethical Dilemma)

5.4.7.1.प्रशासनिक नैतिक दुविधा के मुख्य कारण (Main causes of administrative ethical dilemma)

5.4.7.2.प्रशासनिक नैतिक दुविधा के उदाहरण (Examples of Administrative Ethical Dilemma)

5.4.7.3.प्रशासनिक नैतिक दुविधा से निपटने के उपाय (Measures to deal with administrative ethical dilemma)

5.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

5.6.सारांश (Summary)

5.7.सूचक शब्द (Key Words)

5.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

5.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

5.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

5.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी -

- मृत्युदंड की अवधारणा को जान पायेंगें ,
- मृत्युदंड से सम्बंधित नैतिक विचारों को जान पायेंगें,
- नैतिक दुविधा की अवधारणा को जान पायेंगें ,
- लोकप्रशासन में नैतिक दुविधा के कारणों को जान पायेगें

5.2.परिचय (Introduction)

मृत्युदंड, यानी किसी अपराध के लिए राज्य द्वारा दी गई मृत्यु की सजा, समाज में लंबे समय से नैतिक और व्यावहारिक बहस का विषय रहा है। यह नैतिक दुविधाओं और असमंजस की स्थिति उत्पन्न करता है, क्योंकि इसमें मानव जीवन के मूल्य, न्याय, और प्रतिशोध के प्रश्न उठते हैं। क्या राज्य को किसी व्यक्ति के जीवन को समाप्त करने का अधिकार है?,क्या मृत्युदंड अपराधियों को दंडित करने का उचित और नैतिक तरीका है?,क्या मृत्युदंड समाज में न्याय और अपराध रोकने में प्रभावी है? क्या मृत्युदंड निर्दोष लोगों को गलत तरीके से दंडित करने का खतरा नहीं पैदा करता? क्या मृत्युदंड मानवीयता के सिद्धांतों का उल्लंघन नहीं करता? मृत्युदंड से जुड़ी नैतिक दुविधाएँ है।

5.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

5.3.1.मृत्युदंड (Capital Punishment)

मृत्युदण्ड, किसी व्यक्ति को कानूनी तौर पर न्यायिक प्रक्रिया के फलस्वरूप किसी अपराध के परिणाम में प्राणान्त का दण्ड देने को कहते हैं। अंग्रेज़ी में इसके लिये प्रयुक्त कैपिटल शब्द लैटिन के कैपिटलिस शब्द से आया है, जिसका शाब्दिक अर्थ है "सिर के सम्बन्ध में या से सम्बन्धित" । इसके मूल में आरम्भिक रूप में दिये जाने वाले मृत्युदण्ड का स्वरूप सिर को धड़ से अलग कर देने की प्रक्रिया में है। मृत्युदंड का प्रावधान मानव समाज में आदिम काल से लेकर आज तक उपस्थित है, किंतु इसके पीछे के कारणों और इसके निष्पादन के तरीकों में समय के साथ निरंतर बदलाव आता गया।मृत्युदंड का पहला उल्लेख ईसा पूर्व अठारहवीं सदी के हम्मूराबी की विधान संहिता में मिलता है जहाँ 25 प्रकार के अपराधों के लिये मृत्युदंड का प्रावधान था। ईसा पूर्व चौदहवीं सदी की हिट्टाइट संहिता में भी इसका ज़िक्र है।सातवीं शताब्दी ई.पू. में एथेंस के ड्रेकोनियन कोड में सभी अपराधों के लिये मृत्युदंड की ही व्यवस्था थी। पाँचवीं सदी के रोमन कानून में भी मृत्युदंड का विधान था।प्राचीन भारत में भी मृत्युदंड का प्रावधान उपस्थित था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र का एक पूरा अध्याय उन सभी अपराधों की सूची को समर्पित है जिनके लिये प्राणदंड या मृत्युदंड दिया जाना नियत था। मौर्य सम्राट अशोक ने पशुवध को तो तिरस्कृत किया, परंतु मृत्युदंड पर रोक नहीं लगाई। विदेशी यात्रियों के संस्मरणों से भी प्राचीन भारत में मृत्युदंड की उपस्थिति का पता चलता है।आधुनिक विश्व की बात करें तो एमनेस्टी इंटरनेशनल की रिपोर्ट के अनुसार, अब तक 95 देशों ने मृत्युदंड की व्यवस्था पर प्रतिबंध लगा दिया है।साथ ही 35 देश ऐसे भी हैं जहाँ पिछले दस वर्षों से एक

भी मृत्युदंड नहीं दिया गया है। अन्य 58 देशों ने इसे पूरी तरह लागू किया हुआ ऐसे हैं जिनमें मृत्युदंड दिया जाता है। इनमें मुख्यतः चीन, पाकिस्तान, भारत, अमेरिका और इंडोनेशिया शामिल हैं।

5.3.2.भारतीय दर्शन में मृत्युदंड (complete punishment in Indian philosophy)

भारतीय दर्शन के अनुसार, जीवन और मृत्यु के विषय पर गहराई से चिंतन किया गया है। भारतीय दर्शन मुख्य रूप से अहिंसा, करुणा, और न्याय के सिद्धांतों पर आधारित है, जो मृत्युदंड जैसे कठोर दंडों पर गंभीर प्रश्न उठाते हैं। हालांकि, धर्म, नीति, और न्याय के विभिन्न दृष्टिकोणों के आधार पर मृत्युदंड को लेकर मतभेद भी पाए जाते हैं।

वैदिक और धर्मशास्त्रीय दृष्टिकोण (वैदिक धर्म):वैदिक और धर्मशास्त्रीय ग्रंथों में अपराध और दंड का उल्लेख है।**मनुस्मृति** जैसे ग्रंथों में राजा के कर्तव्यों में न्याय प्रदान करना और अपराधियों को दंड देना शामिल है।**मनुस्मृति (8.316):** "राजा को अपराधी को दंडित करना चाहिए, क्योंकि दंड के बिना समाज में अराजकता फैल सकती है।"हत्या, विश्वासघात, और बलात्कार जैसे गंभीर अपराधों के लिए कठोर दंड (मृत्युदंड सहित) का समर्थन किया गया है। हालांकि, यह भी कहा गया है कि दंड न्यायसंगत और अपराध के अनुरूप होना चाहिए।

बौद्ध दर्शन:बौद्ध धर्म का मूल सिद्धांत **अहिंसा** है।भगवान बुद्ध ने हिंसा और क्रूरता के किसी भी रूप का विरोध किया।बौद्ध दर्शन के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति में सुधार की संभावना होती है, और किसी को भी उसके कर्मों के आधार पर अंतिम दंड (मृत्युदंड) देना नैतिक रूप से अनुचित है।अपराधियों को सुधार और करुणा का अवसर दिया जाना चाहिए।

जैन दर्शन:जैन धर्म अहिंसा को अपने सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांतों में से एक मानता है।जैन दर्शन के अनुसार, किसी भी प्राणी को हानि पहुंचाना या मारना (चाहे वह अपराधी हो) पूर्णतः अनैतिक है।मृत्युदंड के स्थान पर आत्मा के शुद्धिकरण और प्रायश्चित पर जोर दिया जाता है।

वेदांत और उपनिषदों का दृष्टिकोण:वेदांत और उपनिषदों के अनुसार, जीवन एक दिव्य उपहार है और हर आत्मा सुधार और मुक्ति की यात्रा पर है।किसी की आत्मा को उसके अपराधों के लिए दंडित करने का अधिकार केवल ईश्वर को है।मृत्युदंड की जगह, समाज और अपराधी दोनों के लिए सुधार और आत्मा की उन्नति पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

महाभारत और गीता का दृष्टिकोण:महाभारत में धर्म और न्याय का गहन विश्लेषण मिलता है।युधिष्ठिर ने कहा कि राजा का कर्तव्य है समाज को सुरक्षित रखना, लेकिन उसे करुणा और न्याय के सिद्धांतों का पालन करना

चाहिए।**भगवद गीता** में कर्म, धर्म, और न्याय पर बल दिया गया है।कृष्ण कहते हैं कि व्यक्ति को धर्म के पालन में निष्पक्ष रहना चाहिए, लेकिन साथ ही हिंसा केवल तभी उचित है जब वह धर्म की स्थापना के लिए अनिवार्य हो।

महात्मा गांधी:गांधीजी ने मृत्युदंड का विरोध किया और कहा, "आंख के बदले आंख से पूरी दुनिया अंधी हो जाएगी।"उन्होंने सुधार और अहिंसा पर जोर दिया।

स्वामी विवेकानंद:विवेकानंद ने मानवता, करुणा, और आत्मा की पवित्रता पर बल दिया।उनके विचारों के अनुसार, मृत्युदंड की जगह अपराधियों के सुधार पर ध्यान देना चाहिए।

अहिंसा बनाम न्याय:भारतीय दर्शन का मूल आधार अहिंसा है। लेकिन समाज में न्याय और व्यवस्था बनाए रखने के लिए कभी-कभी कठोर दंड अनिवार्य हो सकता है।

कर्म सिद्धांत:भारतीय दर्शन के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्मों का फल भोगता है। सवाल यह है कि क्या मनुष्य को यह अधिकार है कि वह किसी दूसरे के कर्मों का निर्णय कर उसे मृत्युदंड दे।

पुनर्जन्म और सुधार की संभावना:यदि हर आत्मा को पुनर्जन्म और सुधार का अवसर दिया गया है, तो मृत्युदंड देना इस सिद्धांत के खिलाफ जाता है।

सामूहिक हित बनाम व्यक्तिगत अधिकार:समाज की रक्षा के लिए कुछ व्यक्तियों को कठोर दंड देना आवश्यक हो सकता है, लेकिन यह जीवन के मौलिक अधिकार के साथ संघर्ष करता है।

भारतीय दर्शन में मृत्युदंड पर एक समान विचार नहीं है, लेकिन अधिकांश धाराएं अहिंसा, करुणा, और सुधार को प्राथमिकता देती हैं।भारतीय दर्शन के अनुसार, मृत्युदंड को केवल तभी लागू किया जाना चाहिए, जब इसे टालने का कोई और विकल्प न हो। न्याय और करुणा के संतुलन को बनाए रखना सबसे महत्वपूर्ण है।

5.3.3.भारतीय संविधान और मृत्युदंड का दृष्टिकोण (Indian Constitution and its View on Death Penalty)

भारतीय संविधान मृत्युदंड (Capital Punishment) को पूर्ण रूप से समाप्त नहीं करता, लेकिन इसे "दुर्लभतम से दुर्लभतम मामलों" (Rarest of Rare Cases) में ही लागू करने की अनुमति देता है। यह न्याय, मानवाधिकारों, और सामाजिक सुरक्षा के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करता है।

भारतीय संविधान के महत्वपूर्ण अनुच्छेद और मृत्युदंड(Important articles of Indian constitution and death penalty)

अनुच्छेद 21: जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार:-अनुच्छेद 21 में कहा गया है, "किसी भी व्यक्ति को उसके जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता से केवल विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जा सकता है।"यह जीवन के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में स्वीकार करता है।हालांकि, "विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया" (Procedure Established by Law) के तहत, मृत्युदंड को कानूनी रूप से निष्पादित किया जा सकता है।

अनुच्छेद 72 और 161: क्षमा करने का अधिकार:-अनुच्छेद 72: भारत के राष्ट्रपति को मृत्युदंड सहित किसी भी दंड को क्षमा करने, कम करने, या परिवर्तित करने का अधिकार है।

अनुच्छेद 161: राज्यपाल को राज्य के अपराधों के मामलों में दंड माफ करने का अधिकार है।यह प्रावधान सुनिश्चित करता है कि न्यायिक त्रुटियों को सुधारने और दया के सिद्धांत को लागू करने का अवसर रहे।

अनुच्छेद 14: समानता का अधिकार:-यह अनुच्छेद सभी नागरिकों के लिए समानता की गारंटी देता है।न्याय प्रणाली में यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाता है कि मृत्युदंड का उपयोग किसी विशेष वर्ग या समुदाय के खिलाफ पक्षपातपूर्ण तरीके से न किया जाए।

5.3.4.भारतीय न्यायपालिका के मृत्युदंड पर महत्वपूर्ण निर्णय (Important decisions of Indian Judiciary on death penalty)

- **दुर्लभतम से दुर्लभतम सिद्धांत (Rarest of Rare Doctrine):**बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य (1980) के निर्णय में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि मृत्युदंड केवल दुर्लभतम मामलों में दिया जाना चाहिए, जब कोई अन्य दंड पर्याप्त न हो।न्यायालय ने यह भी कहा कि मृत्युदंड देते समय अपराध की प्रकृति, अपराधी का व्यवहार, और समाज पर उसके प्रभाव का ध्यान रखा जाना चाहिए।
- **इंसाफ और निष्पक्षता:**मछी सिंह बनाम पंजाब राज्य (1983)के निर्णय में न्यायालय ने "दुर्लभतम से दुर्लभतम" मामलों को और स्पष्ट किया। हत्या, बलात्कार, आतंकवाद, और सामूहिक हत्या जैसे अपराधों के मामलों में इसे लागू किया जा सकता है।
- **न्यायिक त्रुटियों का जोखिम:**संतोष कुमार सत्यम बनाम बिहार राज्य (2006) के निर्णय **में** कोर्ट ने कहा कि किसी निर्दोष व्यक्ति को मृत्युदंड देने की त्रुटि से बचना न्याय का सबसे बड़ा सिद्धांत है।न्यायिक प्रक्रिया को निष्पक्ष और पारदर्शी बनाना आवश्यक है।

- **मानवीय दृष्टिकोण:**शबनम बनाम भारत संघ (2015) के निर्णय में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि मृत्युदंड लागू करते समय मानवाधिकार और करुणा के सिद्धांतों का ध्यान रखा जाना चाहिए।
- भारतीय संविधान मृत्युदंड को समाप्त नहीं करता, लेकिन इसे दुर्लभतम से दुर्लभतम मामलों तक सीमित करता है। यह हत्या, बलात्कार के साथ हत्या, आतंकवाद, और देशद्रोह जैसे जघन्य अपराधों के लिए लागू होता है।यह सुनिश्चित करता है कि मृत्युदंड न्याय का एक साधन बने, न कि अन्याय का।जीवन के अधिकार और समाज की सुरक्षा के बीच संतुलन बनाने के लिए संविधान न्यायपालिका को विवेकपूर्ण निर्णय लेने का अधिकार देता है।हालांकि, भारत में मृत्युदंड को लेकर नैतिक, कानूनी, और सामाजिक बहस जारी है। कुछ लोग इसे समाज की सुरक्षा और न्याय के लिए आवश्यक मानते हैं, जबकि अन्य इसे अमानवीय और त्रुटिपूर्ण प्रक्रिया मानते हैं।

5.3.5.मृत्युदंड के पक्ष में नैतिक तर्क (Moral arguments in favour of death penalty):

- **न्याय की स्थापना :** किसी भी कार्य की नैतिकता उसके परिणामों पर निर्भर करती है।गंभीर अपराधों, जैसे हत्या या बलात्कार, के लिए दंड देना न्याय का कर्तव्य है।मृत्युदंड न्याय की स्थापना करता है और पीड़ितों के प्रति समाज की सहानुभूति को दर्शाता है। राज्य का दायित्व है कि वह समाज में न्याय और सुरक्षा सुनिश्चित करे।गंभीर अपराधियों के लिए मृत्युदंड न्याय का हिस्सा हो सकता है।
- **अधिकारों का उल्लंघन -**"आँख के बदले आँख की धारणा के अनुसार, अपराधियों को उनके अपराध का समान दंड मिलना चाहिए।गंभीर अपराधी, जैसे हत्या करने वाले, ने अपने प्राकृतिक अधिकारों का उल्लंघन किया है और इसलिए वे अपने जीवन के अधिकार को खो देते हैं।
- **निवारक प्रभाव** मृत्युदंड अपराधियों को अपराध करने से रोकता है। यह संभावित अपराधियों के लिए एक निवारक का काम करता है।
- **सामाजिक सुरक्षा:**खतरनाक अपराधियों को स्थायी रूप से समाप्त कर समाज सुरक्षित बनता है। यह अपराधियों को उनके अपराध के लिए दंडित करता है और समाज को सुरक्षित बनाता है।
- **पीड़ितों के लिए न्याय:**मृत्युदंड पीड़ितों और उनके परिवारों को न्याय का अहसास कराता है पीड़ितों और समाज को संतोष और सुरक्षा देने के लिए अपराधी को कठोर दंड देना आवश्यक है।

5.3.6..मृत्युदंड के विरूध तर्क (Arguments against death penalty):

- शोध से पता चला है कि मृत्युदंड अपराध रोकने में प्रभावी नहीं है।

- निर्दोष व्यक्ति को सजा देने की संभावना न्याय प्रणाली की विफलता है।निर्दोष व्यक्ति को सजा देने की संभावना है, जो नैतिक रूप से अस्वीकार्य है।न्याय प्रणाली में त्रुटियाँ कर्तव्यनिष्ठा को कमजोर करती हैं। न्याय प्रणाली में त्रुटियाँ हो सकती हैं, जिसके कारण निर्दोष व्यक्ति को मृत्युदंड दिया जा सकता है।
- नैतिकता का उद्देश्य ऐसा चरित्र विकसित करना है जो करुणा, सहानुभूति और न्याय जैसे गुणों पर आधारित हो।
- मृत्युदंड मानव जीवन के मूल अधिकार का उल्लंघन करता है।मानव जीवन को समाप्त करना किसी भी परिस्थिति में नैतिक नहीं हो सकता।हर व्यक्ति को जीवन का अधिकार है।जीवन का अधिकार असीमित और अपरिहार्य है।किसी भी परिस्थिति में इसे छीना नहीं जा सकता।
- करुणा और दया मानवता के आवश्यक गुण हैं, और इन्हें अपराधियों पर भी लागू किया जाना चाहिए।क्या न्याय और करुणा का संतुलन संभव है?
- राज्य के पास किसी व्यक्ति के जीवन को समाप्त करने का नैतिक अधिकार नहीं है।क्या राज्य को जीवन और मृत्यु का निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिए? अपराधियों को सुधारने का प्रयास किया जाना चाहिए, ताकि वे समाज में सकारात्मक योगदान दे सकें।
- मृत्युदंड को माना जात "अमानवीय" है और यह नैतिक सिद्धांतों के खिलाफ है। करुणा और दया जैसे गुणों के खिलाफ है।यह मानवता के प्रति क्रूरता को बढ़ावा देता है।

इस प्रकार, मृत्युदंड एक जटिल नैतिक मुद्दा है, जो समाज के मूलभूत सिद्धांतों और मानवीय मूल्यों पर गहरा प्रभाव डालता है।नैतिकता और व्यावहारिकता के बीच संतुलन बनाते हुए, यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि न्याय प्रणाली में पारदर्शिता और त्रुटिहीनता हो।मृत्युदंड को केवल अत्यंत दुर्लभ मामलों में और कठोर मानकों के साथ लागू किया जाना चाहिए।वैकल्पिक सजा, जैसे आजीवन कारावास, पर अधिक ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

5.4. पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

5.4.1.नैतिक दुविधाएँ (Moral Dilemmas)

नैतिक दुविधा ऐसी स्थिति को कहा जाता है जिसमें व्यक्ति को **दो या अधिक नैतिक कर्तव्यों**, सिद्धांतों, या मूल्यों के बीच चयन करना होता है, और इन विकल्पों में से कोई भी पूरी तरह से सही या गलत नहीं होता। इस स्थिति में जो भी निर्णय लिया जाए, उसमें किसी एक नैतिक मूल्य का उल्लंघन होना तय है। नैतिक दुविधाओं की विशेषताएँ-

- **टकराव:** दो या अधिक नैतिक सिद्धांतों के बीच टकराव होता है (जैसे न्याय और दया)

कोई स्पष्ट समाधान नहीं:ऐसा कोई विकल्प नहीं होता जो सभी नैतिक मूल्यों को पूर्णतः संतुष्ट कर सके।

- दोषबोध का खतरानिर्णय लेने के बाद व्यक्ति को किसी एक नैतिक मूल्य के साथ समझौता करना पड़ता है:, जिससे वह दोषबोध या असंतोष महसूस कर सकता है।
- **प्राकृतिक अनिश्चितता**सा विकल्प दीर्घकालिक रूप से अधिक-दुविधा में अक्सर यह स्पष्ट नहीं होता कि कौन: नैतिक होगा।
- **स्पष्ट समाधान की कमी:** दुविधा में ऐसा कोई स्पष्ट विकल्प नहीं होता जिसे कहा जा सके। "सही"
- **परिणामों का असर:** चुने गए विकल्प के आधार पर परिणाम किसी व्यक्ति, समूह, या समाज पर गहरा प्रभाव डाल सकते हैं।

5.4.2नैतिक दुविधाओं के उदाहरण (examples of ethical dilemmas)

- व्यक्तिगत बनाम सामाजिक दायित्व: एक डॉक्टर के पास एक समय में केवल एक मरीज का इलाज करने का समय है। एक मरीज एक अमीर व्यक्ति है जो डॉक्टर को भारी धनराशि देने की पेशकश करता है, जबकि दूसरा गरीब है लेकिन ज्यादा गंभीर स्थिति में है, डॉक्टर का कर्तव्य क्या होना चाहिए—सामाजिक सेवा के लिए गरीब का इलाज करना या अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए अमीर का? यदि किसी व्यक्ति का मित्र किसी गैर-कानूनी या अनैतिक गतिविधि में लिप्त है। तो वह रिपोर्ट करने और उसके साथ दोस्ती बनाए रखने के बीच फंस जाते हैं। यदि की व्यक्ति की गाड़ी के सामने अचानक पांच लोग आ जाते हैं। तो वह गाड़ी को मोड़ता है , तो एक अन्य व्यक्ति की जान जाएगी। यहाँ दोनों ही विकल्प नैतिक रूप से कठिनहैं। सत्यवादिता बनाम करुणा:यदि किसी मरीज को जानलेवा बीमारी है और वह पूछता है कि उसकी हालत कैसी है, तो डॉक्टर क्या करे—सच्चाई बताए या झूठ बोलकर उसे मानसिक शांति दे,क्या सच्चाई को प्राथमिकता देना सही है, भले ही यह पीड़ित को दुख दे, या झूठ बोलकर उसकी भावनाओं की रक्षा करना उचित होगा?
- **आत्मरक्षा बनाम नैतिकता:**यदि कोई व्यक्ति जान बचाने के लिए किसी दूसरे की जान लेता है, तो क्या यह नैतिक है?क्या आत्मरक्षा के लिए किसी का जीवन समाप्त करना उचित है, भले ही यह मानव जीवन के सम्मान के सिद्धांत के खिलाफ हो?
- **युद्ध और मानवता:**युद्ध के दौरान एक सेना को दुश्मन के नागरिकों पर हमला करना पड़ता है ताकि अपने देश को बचाया जा सके।क्या अपने देश की रक्षा के लिए निर्दोष नागरिकों को नुकसान पहुंचाना सही है?

- **पर्यावरण बनाम विकास:**सरकार को जंगल काटकर एक बड़े बांध का निर्माण करना है, जिससे हजारों लोगों को रोजगार मिलेगा लेकिन पर्यावरण को नुकसान होगा।क्या पर्यावरण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए, या आर्थिक विकास को?

5.4.3.नैतिक दुविधाओं के प्रकार (Types of ethical dilemmas)

- **व्यक्तिगत नैतिक दुविधाएँ (Personal Moral Dilemmas):**ये दुविधाएँ व्यक्तिगत जीवन से संबंधित होती हैं।एक कर्मचारी को यह तय करना है कि वह अपने परिवार के साथ समय बिताए या कार्यालय का जरूरी काम पूरा करे।
- **संगठनात्मक नैतिक दुविधाएँ (Organizational Moral Dilemmas):**ये दुविधाएँ कार्यस्थल या पेशेवर जीवन में सामने आती हैं। क्या एक कंपनी को पर्यावरण के मानकों का उल्लंघन कर सस्ता उत्पाद बनाना चाहिए, ताकि मुनाफा बढ़ सके?
- **सामाजिक नैतिक दुविधाएँ (Social Moral Dilemmas):**ये दुविधाएँ समाज या समुदाय के कल्याण से संबंधित होती हैं।क्या एक सरकार को अमीरों पर अधिक कर लगाना चाहिए ताकि गरीबों को लाभ मिले, भले ही इससे अमीर नाराज हों?
- **वैश्विक नैतिक दुविधाएँ (Global Moral Dilemmas):** ये दुविधाएँ अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों और मानवता के लिए महत्वपूर्ण प्रश्नों से संबंधित होती हैं।क्या विकसित देशों को अपने कार्बन उत्सर्जन को कम करना चाहिए, भले ही यह उनकी अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुँचाए?

5.4.4.नैतिक दुविधाओं को सुलझाने के लिए दृष्टिकोण (Approaches to solving ethical dilemmas)

- **परिणामवादी दृष्टिकोण (Consequentialism):**इस दृष्टिकोण के अनुसार, किसी भी विकल्प की नैतिकता उसके परिणामों पर निर्भर करती है।ऐसा विकल्प चुनें जो सबसे अच्छे परिणाम ज्यादा लाभ और कम) नुकसान) दे।पर्यावरण और विकास की दुविधा में, अगर बांध बनाने से अधिक लोगों को फायदा होता है, तो यह नैतिक माना जा सकता है।
- **कर्तव्य आधारित दृष्टिकोण (Deontology):**इसमें नैतिकता को कर्तव्यों और सिद्धांतों के आधार पर आंका जाता है।कार्य सही या गलत अपने स्वभाव में होते हैं, उनके परिणामों से नहीं।सत्य बोलना हमेशा कर्तव्य है, चाहे इसके परिणाम कुछ भी हों।

- **सद्गुण नैतिकता (Virtue Ethics):**इसमें नैतिकता व्यक्ति के गुणों जैसे दया ,न्याय, सहानुभूति पर आधारित होती है।ऐसा कार्य करें जो चरित्र में सद्गुणों को विकसित करता हो।सत्य और करुणा की दुविधा में, यह देखा जाएगा कि कौनसा विकल्प अधिक दयालुता और सहानुभूति को प्रकट करता है।-
- **न्याय और समानता का दृष्टिकोण (Justice and Fairness):**इसमें नैतिकता इस बात पर निर्भर करती है कि निर्णय न्यायपूर्ण और निष्पक्ष हो।ऐसा निर्णय लें जो सभी के अधिकारों का सम्मान करे। संसाधनों का वितरण करते समय समानता का पालन करना।
- **भावनात्मक और व्यावहारिक दृष्टिकोण:**यह दृष्टिकोण व्यक्ति की भावनाओं और व्यावहारिक स्थिति पर आधारित होता है। ऐसे निर्णय लें जो नैतिक और व्यावहारिक दोनों दृष्टिकोणों से संतोषजनक हों। किसी गंभीर अपराधी को दंडित करते समय मृत्युदंड देने या न देने का निर्णय।

5.4.5.नैतिक दुविधा से निपटने के उपाय(Ways to deal with ethical dilemma)

- **मूल्यों और प्राथमिकताओं की स्पष्टता:** अपने नैतिक मूल्यों और सिद्धांतों को समझना।
- **दीर्घकालिक दृष्टिकोण:** किसी निर्णय का लंबे समय में क्या प्रभाव होगा, इसे समझना।
- **संवाद और परामर्श:** अन्य लोगों से परामर्श करना, जिनके विचार नैतिक और व्यावहारिक हो सकते हैं।
- **व्यक्तिगत जिम्मेदारी:** जो भी निर्णय लिया जाए, उसकी जिम्मेदारी लेना और उसके परिणामों को स्वीकार करना।
- **नैतिक सिद्धांतों के बीच संतुलन-**जो भी परिस्थिति हो उस परिस्थिति में संतुलन बना कर कार्य करना या निर्णय लेना।
- **दीर्घकालिक परिणामों पर विचार**-जिस भी विकल्प का चयन करें उसके दीर्धकालिक क्या परिणाम निकलेंगे उसे भी ध्यान में रखना।
- **करुणा और न्याय को प्राथमिकता-** विकल्प का चयन करते समय करुणा और न्याय को प्राथमिकता देना भी आवश्यक है।

5.4.6.सीमाएँ(Limitations)

- ***सभी नैतिक दुविधाओं का कोई स्पष्ट और सर्वसम्मत समाधान नहीं हो सकता।***
- दुविधा के कारण व्यक्ति को कभी कभी समझौता करना-पड़ता है।
- निर्णय का प्रभाव दीर्घकालिक रूप से सही या गलत साबित हो सकता है।

नैतिक दुविधाएँ मानव जीवन का एक स्वाभाविक और अपरिहार्य हिस्सा हैं। ये हमारे नैतिक सिद्धांतों, व्यक्तिगत मूल्यों, और सामाजिक जिम्मेदारियों के बीच संतुलन बनाने की चुनौती प्रस्तुत करती हैं।इनका समाधान करना कठिन होता है, लेकिन नैतिकता के विभिन्न दृष्टिकोणों और सिद्धांतों का उपयोग करके एक ऐसा निर्णय लिया जा सकता है, जो अधिकतम न्यायपूर्ण और मानवीय हो। नैतिक दुविधाएँ हमें विचारशील, संवेदनशील, और जिम्मेदार नागरिक बनने में मदद करती हैं।

5.4.7.प्रशासनिक नैतिक दुविधा (Administrative Ethical Dilemma)

प्रशासनिक नैतिक दुविधा से आशय ऐसी स्थिति से है, जहां प्रशासनिक अधिकारियों को निर्णय लेने के दौरान नैतिकता, कानून, और संस्थागत अपेक्षाओं के बीच संघर्ष का सामना करना पड़ता है। इन दुविधाओं में सही और गलत के बीच स्पष्ट विभाजन नहीं होता, और जो भी निर्णय लिया जाए, उसमें किसी न किसी नैतिक या व्यावहारिक पक्ष का उल्लंघन हो सकता है। **प्रशासनिक नैतिक दुविधा** एक आम चुनौती है, जहां सरकारी अधिकारी, कर्मचारी, या लोकसेवक को ऐसे निर्णय लेने पड़ते हैं, जो उनके व्यक्तिगत मूल्यों, कानूनी बाध्यताओं और सार्वजनिक हितों के बीच संघर्ष उत्पन्न करते हैं। इन स्थितियों में, सही और गलत के बीच स्पष्ट रेखा खींचना कठिन हो सकता है।

5.4.7.1.प्रशासनिक नैतिक दुविधा के मुख्य कारण

- **कानून और नैतिकता के बीच टकराव:** कभी-कभी कानून और नियम नैतिकता के साथ मेल नहीं खाते।उदाहरण: यदि कानून किसी ज़रूरतमंद व्यक्ति को लाभ देने से रोकता है, लेकिन नैतिक दृष्टि से उसे मदद की आवश्यकता है।
- **सीमित संसाधनों का प्रबंधन:**संसाधन सीमित होने पर यह तय करना कि किसे प्राथमिकता दी जाए, नैतिक दुविधा उत्पन्न करता है।उदाहरण: प्राकृतिक आपदा के समय किस क्षेत्र को पहले राहत दी जाए।
- **राजनीतिक दबाव:** अधिकारियों पर नेताओं या प्रभावशाली व्यक्तियों का दबाव रहता है, जो निष्पक्ष निर्णय लेने में बाधा डालता है।
- **वरिष्ठों के अनैतिक आदेश:** जब वरिष्ठ अधिकारी किसी अनैतिक कार्य का निर्देश देते हैं, तो उनके आदेश का पालन करना या न करना अधिकारी के लिए नैतिक दुविधा उत्पन्न करता है।
- **व्यक्तिगत मूल्यों और संस्थागत अपेक्षाओं का टकराव:**व्यक्तिगत नैतिकता और प्रशासनिक प्रक्रियाओं के बीच टकराव।उदाहरण: किसी गरीब व्यक्ति द्वारा गलत दस्तावेजों के सहारे योजना का लाभ लेना।

- **भ्रष्टाचार और पारदर्शिता का टकराव:**भ्रष्ट अधिकारियों या तंत्र का विरोध करने पर अपनी नौकरी और करियर को खतरे में डालने की स्थिति।
- **सामाजिक अपेक्षाएं बनाम व्यक्तिगत मूल्यों का टकराव:**जनता और समाज की अपेक्षाएं कभी-कभी व्यक्तिगत नैतिकता से मेल नहीं खातीं।

5.4.7.2.प्रशासनिक नैतिक दुविधा के उदाहरण (Examples of Administrative Ethical Dilemma)

- **भ्रष्टाचार का विरोध:**एक ईमानदार अधिकारी को रिश्वत लेने का दबाव डाला जाता है। यदि वह रिश्वत नहीं लेता, तो उसे स्थानांतरण या अन्य दंड का सामना करना पड़ सकता है।
- **नियम बनाम मानवीय दृष्टिकोण:** कोई गरीब व्यक्ति अपनी गंभीर स्थिति के कारण किसी योजना का लाभ चाहता है, लेकिन उसके पास आवश्यक दस्तावेज़ नहीं हैं।
- **राजनीतिक हस्तक्षेप:**एक नेता अपने समर्थकों को अवैध तरीके से लाभ दिलाने का दबाव डालता है। अधिकारी को कानून का पालन करना है, लेकिन नेता का समर्थन न करने पर उसका करियर प्रभावित हो सकता है।
- **आपदा प्रबंधन:**बाढ़ या भूकंप जैसी आपदा के दौरान सीमित संसाधनों के बीच यह तय करना कि सबसे पहले किस क्षेत्र को मदद दी जाए।
- **वरिष्ठ अधिकारियों का दबाव:** यदि वरिष्ठ अधिकारी अवैध कार्य करवाने का आदेश देते हैं, तो अधिकारी के लिए उनके आदेश को मानने या नैतिकता का पालन करने में दुविधा होती है।

5.4.7.3.प्रशासनिक नैतिक दुविधा से निपटने के उपाय (Measures to deal with administrative ethical dilemma)

- **ईमानदारी और निष्पक्षता:**सभी निर्णयों और कार्यों में ईमानदारी और निष्पक्षता को सर्वोपरि रखें।
- **नैतिक आचरण:**व्यक्तिगत और संस्थागत नैतिकता को समझें और उनके अनुसार कार्य करें।
- **कानून का पालन:**कानून और नियमों का सही ज्ञान और उनका अनुपालन नैतिक दुविधा से बचने में मदद करता है।
- **नीतियों की व्याख्या:**हर परिस्थिति में नीतियों की विवेकपूर्ण व्याख्या करें, ताकि वे नैतिक और न्यायपूर्ण हों।
- **आत्मनिरीक्षण:**अपने मूल्यों और सिद्धांतों का नियमित आत्ममूल्यांकन करें।

- **नैतिक निर्णय क्षमता:**अपने विवेक और अनुभव के आधार पर निर्णय लेने की क्षमता का विकास करें।
- **नैतिकता और कानून का संतुलन:** ऐसे निर्णय लें जो कानूनी और नैतिक दोनों पहलुओं पर खरे उतरें।जहां संभव हो, नैतिक मूल्यों को प्राथमिकता दें।
- **जनहित को सर्वोपरि रखना:**सभी निर्णय इस आधार पर करें कि वे समाज के लिए दीर्घकालिक रूप से लाभकारी हों।
- **वरिष्ठ अधिकारियों और सहकर्मियों से परामर्श:**जटिल मामलों में सलाह लें और सामूहिक रूप से निर्णय करें।
- **पारदर्शिता और जवाबदेही:**निर्णयों में पारदर्शिता बनाए रखें और उनके लिए उत्तरदायी रहें।सार्वजनिक हित को प्राथमिकता दें और इसे दिखाने में संकोच न करें।
- **संवैधानिक मूल्यों का पालन:**भारतीय संविधान में निहित मूल्यों जैसे न्याय, समानता, और स्वतंत्रता का पालन करें।
- **नैतिक शिक्षा और प्रशिक्षण:** लोकसेवकों को नैतिकता, कानून, और पारदर्शिता के संबंध में नियमित प्रशिक्षण दिया जाए।नैतिक निर्णय लेने की क्षमता विकसित करें।
- **भ्रष्टाचार के खिलाफ दृढ़ रुख:**अनैतिक प्रथाओं और भ्रष्टाचार के खिलाफ कड़ा रुख अपनाएं।यदि संभव हो, तो शिकायत दर्ज करें या सही मंच का उपयोग करें।
- **दीर्घकालिक दृष्टिकोण अपनाएं:**निर्णय लेते समय इसके दीर्घकालिक प्रभावों का मूल्यांकन करें। यह सुनिश्चित करें कि आपका निर्णय समाज और प्रशासनिक प्रणाली पर सकारात्मक प्रभाव डाले।
- **लोक प्रशासन में नैतिक तंत्र का निर्माण:**नैतिक निर्णय लेने के लिए आंतरिक समितियों का गठन करें।मजबूत नैतिक आचार संहिता लागू करें।
- **मीडिया और नागरिक समाज की भूमिका:**अपने निर्णयों में पारदर्शिता बनाए रखने के लिए मीडिया और नागरिक संगठनों की मदद लें।
- **सशक्त आचार संहिता:**प्रत्येक सरकारी विभाग में नैतिकता और आचरण के लिए सख्त दिशानिर्देश बनाए जाएं।
- **नैतिक दुविधा के समाधान के लिए समितियां:**जटिल मामलों में निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र और निष्पक्ष समितियां बनाएं।

प्रशासनिक नैतिक दुविधा का समाधान नैतिकता, कानून, और सार्वजनिक हित के बीच सही संतुलन स्थापित करने में निहित है। एक प्रभावी लोकसेवक को अपने कार्यों में निष्पक्षता, ईमानदारी, और पारदर्शिता बनाए रखते हुए जटिल परिस्थितियों का सामना करना चाहिए। समाज के कल्याण को प्राथमिकता देते हुए कठिन निर्णय लेना ही प्रशासनिक नैतिकता का सर्वोच्च लक्ष्य है।

5-5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(अ). लैटिन शब्द कैपिटलिस का जिसका शाब्दिक क्या है ?

(आ).अब तक कितने देशों ने मृत्युदंड की व्यवस्था पर प्रतिबंध लगा दिया है।

(इ).कितने देशों ने मृत्युदंड पूरी तरह लागू किया हुआ है?

(ई). किस भारतीय दर्शन ने मृत्युदंड के स्थान पर आत्मा के शुद्धिकरण और प्रायश्चित पर जोर दिया जाता है।

(उ). किस अनुच्छेद में राज्यपाल को राज्य के अपराधों के मामलों में दंड माफ करने का अधिकार है?

5.6.सारांश (Summary)

मृत्युदंड को लेकर दुनिया भर में नैतिक और कानूनी बहसें होती रही हैं। यह बहस मुख्यतः न्याय, मानवाधिकार और समाज की सुरक्षा के बीच संतुलन को लेकर होती है। मृत्युदंड को कुछ लोग न्याय का एक रूप मानते हैं, खासकर जघन्य अपराधों के मामलों में, जैसे कि हत्या या बलात्कार।नैतिक दृष्टिकोण से जीवन के अधिकार (Right to Life) को सार्वभौमिक मानवाधिकार माना जाता है। मृत्युदंड इस अधिकार का उल्लंघन करता है।क्या कोई व्यक्ति, संस्था या राज्य किसी का जीवन लेने का हकदार है? यह एक गहरी नैतिक दुविधा उत्पन्न करता है।न्यायिक प्रक्रिया में त्रुटियों के कारण निर्दोष व्यक्ति को मृत्युदंड दिए जाने की संभावना हमेशा बनी रहती है।यह नैतिक प्रश्न उठाता है कि क्या न्याय प्रणाली को इतना कठोर होना चाहिए कि एक निर्दोष व्यक्ति के जीवन का अंत हो जाए?मृत्युदंड को अपराधों की रोकथाम के लिए एक निवारक (Deterrent) माना जाता है।कई शोध बताते हैं कि मृत्युदंड के बावजूद अपराध दर में कोई विशेष कमी नहीं आती। यह सवाल उठाता है कि क्या मृत्युदंड वास्तव में प्रभावी है?मृत्युदंड को लेकर नैतिक मान्यताएँ भिन्न-भिन्न देशों और संस्कृतियों में अलग-अलग होती हैं।कई धर्म और विचारधाराएँ किसी भी रूप में हिंसा को अनुचित मानती हैं, जबकि कुछ इसे न्याय का एक साधन मानते हैं।उदाहरण: बौद्ध धर्म और जैन धर्म में अहिंसा सर्वोपरि है, जबकि कुछ अन्य धाराएँ इसे न्यायपूर्ण समझती हैं।एक ओर, मृत्युदंड को समाज की सुरक्षा के लिए आवश्यक माना जाता है, ताकि खतरनाक अपराधी दोबारा अपराध न

कर सकें।दूसरी ओर, यह सवाल उठता है कि अपराधियों को पुनर्वास (Rehabilitation) का अवसर दिया जाना चाहिए या नहीं।मृत्युदंड और नैतिक दुविधाओं की प्रकृति का केंद्रबिंदु यह है कि हम किस प्रकार के समाज की कल्पना करते हैं — एक ऐसा समाज जो प्रतिशोध पर आधारित हो या ऐसा समाज जो करुणा और पुनर्वास को प्राथमिकता देता हो। मृत्युदंड को खत्म करने और वैकल्पिक सजा जैसे आजीवन कारावास पर जोर देना एक मध्य मार्ग हो सकता है, जो न्याय और मानवाधिकारों के बीच संतुलन स्थापित करता है।

5.6.सूचक शब्द (Key Words)

- **मृत्युदंड**-मृत्युदंड, किसी अपराधी को कानूनी तौर पर मौत की सज़ा देने को कहते हैं. यह किसी भी तरह के दंड कानून के तहत दी जाने वाली सबसे बड़ी सज़ा है
- **प्रशासनिक नैतिकता**-प्रशासनिक नैतिकता का मतलब है, सार्वजनिक प्रशासकों के कामों और फ़ैसलों को मार्गदर्शन करने वाले नैतिक सिद्धांत. यह सुनिश्चित करती है कि सरकारी कर्मचारी अपने कर्तव्यों का ईमानदारी, निष्पक्षता, और न्याय के साथ पालन करें
- **नैतिक दुविधा**-नैतिक दुविधा एक ऐसी स्थिति होती है जिसमें किसी व्यक्ति को दो या ज़्यादा नैतिक सिद्धांतों के बीच टकराव का सामना करना पड़ता है. इस स्थिति में, व्यक्ति को दो या ज़्यादा नैतिक मानदंडों में से एक को चुनना होता है।
- **सद्गुण**-सद्गुण का अर्थ है- श्रेष्ठता. सद्गुण वह मनोवृत्ति है जिसे अभ्यास और प्रयत्न से मज़बूत बनाया जा सकता है
- **अनुच्छेद** -अनुच्छेद का अर्थ है किसी नियम, अधिनियम का वह हिस्सा जिसमें किसी बात का विस्तृत विवरण हो

5-8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- मृत्युदंड की अवधारणा का विस्तार से वर्णन कीजिये।
- मृत्युदंड से सम्बंधित पक्ष व विपक्ष नैतिक तर्को का विस्तार से वर्णन कीजिये।
- भारतीय दर्शन में मृत्युदंड से सम्बंधित विचारों का वर्णनं कीजिये।
- नैतिक दुविधा की अवधारणा का विस्तार से वर्णन कीजिये।
- लोकप्रशासन में नैतिक दुविधा के कारणों का विस्तार से वर्णन कीजिये।

5.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(अ)."सिर के सम्बन्ध में या से सम्बन्धित"

(आ).95

(इ).58 देशों ने

(ई).जैन दर्शन ने

(उ).अनुच्छेद 161में

5.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

- अरोड़ा, आर. के. (**2008)** शासन में नैतिकता: नवीन मुद्दे और उपकरण। रावत: जयपुर
- अरोड़ा, रमेश के. (संपादक) (**2014)** लोक सेवा में नैतिकता, सत्यनिष्ठा और मूल्य। न्यू एज इंटरनेशनल: नई दिल्ली
- सी. भार्गव, आर. (**2006)** भारतीय संविधान की राजनीति और नैतिकता। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस: नई दिल्ली
- डी. चक्रवर्ती, विद्युत (**2016)** भारत में शासन में नैतिकता। रूटलेज: नई दिल्ली
- ई. चतुर्वेदी, टी. एन. (संपादक) (**1996)** सार्वजनिक जीवन में नैतिकता। आईआईपीए: नई दिल्ली
- एफ. गांधी, महाथिरिम (**2009)** हिंद स्वराज। राजपाल एंड संस: दिल्ली
- जी. गोडबोले, एम. (**2003)** सार्वजनिक जवाबदेही और पारदर्शिता: सुशासन के आवश्यक तत्व। ओरिएंट लॉन्गमैन: नई दिल्ली
- एच. हूजा, आर. (**2008)** भ्रष्टाचार, नैतिकता और जवाबदेही: एक प्रशासक द्वारा निबंध। आईआईपीए: नई दिल्ली
- आई. माथुर, बी. पी. (**2014)** शासन के लिए नैतिकता: सार्वजनिक सेवाओं का पुनर्निर्माण। रूटलेज: नई दिल्ली

Subject : Public Administration-Administrative ethics in governance	
Course Code : PUBA 302	**Author :** Dr. Parveen sharma
Lesson No. : 6	**Vetter :**

सिविल सेवा तटस्थता और अनामता , शासन में नैतिक और आचारिक मूल्यों का महत्व

(Civil service neutrality and anonymity, importance of ethical and moral values in governance)

अध्याय की सरंचना

6.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

6.2.परिचय (Introduction)

6.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

6.3.1.सिविल सेवा में तटस्थता (Neutrality in the civil service)

6.3.1.1.भारत में तटस्थता (Neutrality in India)

6.3.1.2.सिविल सेवा में तटस्थता का महत्व (Importance of Neutrality in Civil Services)

6.3.1.3.सिविल सेवा में तटस्थता के समक्ष चुनौतियाँ (Challenges to neutrality in civil service)

6.3.1.4.राजनीतिक तटस्थता के पक्ष में विचार (Views in favor of political neutrality)

6.3.1.5.सिविल सेवा तटस्थता को मजबूत करने के लिए सिफारिशें (Recommendations to strengthen civil service neutrality)

6.3.2.गुमनामी याअनामता (anonymity)

6.3.2.1.गुमनामी के लिए आचरण नियम (Conduct rules for anonymity)

6.3.2.2.गुमनामी के विरुद्ध तर्क (rguments against anonymity)

6.4.पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

6.4.1.शासन में नैतिक और आचारिक मूल्यों का महत्व (Importance of moral and ethical values in governance)

6.4.1.1.भारतीय शासन में नैतिक मुद्दे (Ethical Issues in Indian Governance)

6.4.1.2.नैतिकता संबंधी नियमों की आवश्यकता (The need for ethical rules)

6.4.1.3.नैतिक मूल्य(Ethical values)

6.4.1.4.लोक प्रशासन में नैतिकता का महत्व(Importance of Ethics in Public Administration)

6.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

6.6.सारांश (Summary)

6.7.सूचक शब्द (Key Words)

6.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

6.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

6.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

6.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात विद्यार्थी -

- सिविल सेवा में तटस्थता की अवधारणा को जान पायेंगें ;
- सिविल सेवा में अनामता की अवधारणा को जान पायेंगें ;
- सिविल सेवा में लोक सेवकों की अचार सहिंता को जान पायेंगें ;
- सिविल सेवा में लोक सेवकों के लिए नैतिक मूल्यों की आवश्यकता को जान पायेंगें ;

6.2.परिचय (Introduction)

लोक सेवकों के लिए आचार संहिता (Code of Conduct) एक ऐसा दिशानिर्देश है, जिसका पालन लोक सेवकों (सरकारी कर्मचारियों) को अपनी ड्यूटी निभाते समय करना होता है। यह कोड उनके आचरण और कार्यों को

सही, पारदर्शी और जिम्मेदार बनाता है। लोक सेवकों के लिए आचार संहिता की नींव "केंद्रीय सिविल सेवा (आचरण) नियम, 1964" (CCS Conduct Rules, 1964) पर आधारित होती है। यह नियम सरकारी कर्मचारियों के आचरण, व्यवहार और नैतिक दायित्वों को परिभाषित करते हैं।आचार संहिता लोक सेवकों के लिए एक मार्गदर्शक होती है, जो उनके कार्यों को जनहित में नियंत्रित और अनुशासित करती है। इसका पालन न केवल सरकारी कार्यों को सुचारू रूप से संचालित करता है, बल्कि आम जनता का सरकार पर विश्वास भी बढ़ाता है। लोक सेवकों को अपनी ड्यूटी पूरी ईमानदारी और निष्ठा के साथ करनी चाहिए।भ्रष्टाचार, बेईमानी या किसी भी प्रकार के अनैतिक कार्य से दूर रहना चाहिए।कामकाज में जाति, धर्म, लिंग, आर्थिक स्थिति, राजनीतिक विचार या अन्य किसी पूर्वाग्रह से प्रभावित नहीं होना चाहिए।सभी के साथ समान और न्यायसंगत व्यवहार करना चाहिए।अपने कार्यों और निर्णयों के प्रति जवाबदेह रहना चाहिए।जनता की सेवा करते समय पारदर्शिता बनाए रखनी चाहिए।सरकारी कामकाज से जुड़ी जानकारी को गोपनीय रखना चाहिए और इसका गलत तरीके से उपयोग नहीं करना चाहिए।किसी भी संवेदनशील जानकारी का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए ।राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने या किसी पार्टी का प्रचार करने से बचना चाहिए।लोक सेवकों का मुख्य उद्देश्य जनता की सेवा करना और जनकल्याण के कार्यों को बढ़ावा देना होना चाहिए।सरकारी कर्मचारी को कार्यस्थल पर अनुशासन बनाए रखना चाहिए। वरिष्ठ अधिकारियों के आदेशों का पालन करना चाहिए, बशर्ते वे कानूनी और नैतिक हों।सरकारी संसाधनों और संपत्तियों का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए।जीवनशैली और आचरण में सादगी और मर्यादा बनाए रखना चाहिए। इस प्रकार लोक सेवक में ईमानदारी और सत्यनिष्ठा, निष्पक्षता, जवाबदेही, गोपनीयता, जनसेवा का कर्तव्यअनुशासन और आचरण,सादगी और मर्यादा,तटस्थता ,अनामता के गुण होने चाहिए।

6.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

6.3.1.सिविल सेवा में तटस्थता (Neutrality in the civil service)

सिविल सेवा तटस्थता का तात्पर्य लोक प्रशासक के रूप में अपनी भूमिका में सिविल सेवकों की निष्पक्षता और गैर-पक्षपातपूर्णता से है। इसमें उनके व्यक्तिगत विश्वासों या राजनीतिक संबद्धताओं के बावजूद अपने कर्तव्यों का पालन करते समय वस्तुनिष्ठता, निष्पक्षता और स्वतंत्रता बनाए रखना शामिल है। मैक्स वेबर को नौकरशाही का जनक माना जाता है। उन्होंने व्यक्ति निरपेक्ष व्यवस्था अर्थात तटस्थता को नौकरशाही का सर्वाधिक आकर्षक गुण माना है और कहा है कि यही वह गुण है, जिसके माध्यम से नौकरशाही सर्वाधिक दक्ष संस्था के रूप में

जानी जाती है। अमेरिका, ब्रिटेन तथा भारत आदि देशों में नौकरशाही की तटस्थता पर बल दिया गया है। सिविल सेवक लोक प्रशासन की रीढ़ की हड्डी के रूप में कार्य करते हैं तथा सरकारी नीतियों को लागू करने तथा सार्वजनिक सेवाएं प्रदान करने के लिए जिम्मेदार होते हैं।उनकी तटस्थता यह सुनिश्चित करती है कि वे व्यक्तिगत पूर्वाग्रहों या बाहरी दबावों से मुक्त होकर समाज की भलाई के लिए काम करें।निष्पक्षता के लिए सिविल सेवकों को किसी विशेष समूह या व्यक्ति का पक्ष लिए बिना, वस्तुनिष्ठ मानदंडों के आधार पर निर्णय लेने की आवश्यकता होती है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि सार्वजनिक संसाधनों का आवंटन निष्पक्ष और पारदर्शी तरीके से किया जाता है।सिविल सेवकों को पक्षपातपूर्ण राजनीति से दूर रहना चाहिए तथा अपने पद का उपयोग व्यक्तिगत या राजनीतिक लाभ के लिए करने से बचना चाहिए।उनकी निष्ठा किसी विशिष्ट राजनीतिक विचारधारा या पार्टी के प्रति न होकर संविधान और कानून के शासन के प्रति होनी चाहिए। लोकसेवा में तटस्थता सम्बन्ध में मास्टर मैन समिति व दूबर आयोग ने अपने विचार व्यक्त किये जो इस प्रकार हैं-

मास्टर मैन समिति का अभिमत - लोक सेवा का परम्परागत गुण तटस्थता रहा है। 'मास्टर मैन समिति' के शब्दों में, निष्पक्षता या तटस्थता ब्रिटिश लोक सेवा का गुण रही है एवं उसकी एक अिद्वतीय विशेषता है। तटस्थता का अर्थ है कि एक लोक सेवक अपने सार्वजनिक जीवन में राजनीतिक विचारों या धारणाओं से पूर्ण मुक्त रहता है।लोक सेवा के तटस्थता सम्बन्धी ब्रिटिश अवधारण के प्रमुख तथ्य हैं (क) जनता को यह विश्वास होना चाहिए कि लोक सेवा सभी प्रकार के राजनीतिक पक्षपात से मुक्त हो, (ख) मन्त्रियों को यह विश्वास होना चाहिए कि चाहे कोई भी दल सत्तारूढ़ हो, लोक सेवक की निष्ठा उन्हें प्राप्त होती रहेगी, (ग) लोक सेवक में नैतिक साहस का आधार विश्वास है कि पदोन्नति तथा अन्य पुरस्कार राजनीतिक दृष्टिकोण या पक्षपातपूर्ण कार्यों पर निर्भर नहीं करते बल्कि गुण मात्र पर निर्भर करते हैं।

दूबर आयोग का अभिमत- लोक सेवा की तटस्थता के संबंध में दूबर आयोग द्वारा प्रतिपादित अमरीकी अवधारण निम्नलिखित है (क) लोक सेवकों को राजनीतिक क्रियाकलापों से दूर रहना चाहिए तथा नीति संबंधी मामलों में भी अपनी तटस्थता बनाए रखनी चाहिए, (ख) वरिष्ठ लोक सेवकों को अनिवार्यतः ऐसे सभी राजनीतिक क्रियाकलापों से दूर रहना चाहिए जिनका ठीक ढंग से काम करने की उनकी योग्यता पर विपरीत प्रभाव पडता हो, और जिससे ऐसा ज्ञात होने लगे कि वे किसी राजनीतिक दल या उसकी राजनीति से संबंध रखते हों, (ग) वरिष्ठ लोक सेवकों को केवल औपचारिक वक्तव्य ही प्रेस को देने चाहिए, सार्वजनिक या निजी वक्तव्य नहीं देने चाहिए।

उन्हें राजनीतिक या विवादास्पद ही प्रेस को देने चाहिए, सार्वजनिक या निजी वक्तव्य नहीं देने चाहिए। उन्हें राजनीतिक या विवादास्पद ढंग से सार्वजनिक भाषण नहीं देने चाहिए।

6.3.1.1.भारत में तटस्थता (Neutrality in India):- भारत की सिविल सेवाओं की ऐतिहासिक विरासत बहुत समृद्ध है, जो ब्रिटिश औपनिवेशिक काल से चली आ रही है। समय के साथ, सिविल सेवा तटस्थता की अवधारणा विकसित हुई है, जिसमें पारदर्शिता, जवाबदेही और व्यावसायिकता पर अधिक जोर दिया गया है।भारत ने सिविल सेवा की निष्पक्षता की रक्षा के लिए कानून और दिशा-निर्देश स्थापित किए हैं। भारत का संविधान एक स्वतंत्र और निष्पक्ष सिविल सेवा का प्रावधान करता है। भारत में तटस्थता की विशेषता को सिविल सेवा आचरण नियमावली में शामिल किया गया है। इस प्रकार तटस्थता सिविल सेवाओं के आचरण संहिता का एक भाग है। भारत में तटस्थता की अवधारणा को लागू करने के लिए सिविल सेवकों की राजनीतिक अधिकारों को प्रतिबंधित कर दिया गया है और यह प्रावधान किया गया है कि-

- कोई सिविल सेवक सार्वजनिक रूप से कोई राजनीतिक वक्तव्य नहीं दे सकता है या राजनीतिक विचार प्रकट नहीं कर सकते हैं। सामाजिक एवं सांस्कृतिक विचार प्रकट करने की छूट है।
- कोई सिविल सेवक किसी राजनीतिक दल की भागीदारी में कोई भागीदारी निभा नहीं सकता है। वह किसी दल का प्रचार नहीं कर सकता है, किसी दल विशेष को लाभ पहुंचाने के उद्देश्य से कोई कार्य नहीं कर सकता है। किसी राजनीतिक दल के पक्ष में धन एकत्रित नहीं कर सकता है।
- यदि किसी सिविल सेवक के परिवार का कोई सदस्य किसी राजनीतिक दल की गतिविधियों में वही भागीदारी निभाता है तो इसकी लिखित सूचना सरकार को देनी होगी।
- सिविल सेवकों को केवल एक राजनीतिक अधिकार दिया गया है। वह चुनाव में वोट दे सकता है किंतु किसे वोट दिया गया है, यह सार्वजनिक नहीं कर सकता है।

6.3.1.2.सिविल सेवा में तटस्थता का महत्व (Importance of Neutrality in Civil Services)

- कुशल और न्यायसंगत सार्वजनिक सेवाएं प्रदान करने के लिए सिविल सेवाओं में निष्पक्षता महत्वपूर्ण है। यह भेदभाव को रोकने में मदद करता है और यह सुनिश्चित करता है कि निर्णय केवल योग्यता के आधार पर लिए जाएं, बिना किसी अनुचित प्रभाव या पक्षपात के।

- सिविल सेवा तटस्थता कानून के शासन के सिद्धांतों को कायम रखती है और यह सुनिश्चित करती है कि कानून के समक्ष सभी व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार किया जाए। इससे समाज में न्याय और निष्पक्षता की भावना को बढ़ावा मिलता है।
- जब सिविल सेवक अपनी तटस्थता बनाए रखते हैं और जनता के सर्वोत्तम हित में काम करते हैं, तो इससे सरकार में जनता का भरोसा बढ़ता है। यह भरोसा प्रभावी शासन और लोकतांत्रिक प्रक्रिया में नागरिक भागीदारी के लिए महत्वपूर्ण है।
- सिविल सेवकों में कार्यकुशलता का विकास होता है और पहल शक्ति में बढ़ोत्तरी होती है।
- संसाधनों का समान वितरण होता है, जो किसी लोकतंत्र को मजबूत बनाने के लिए अति आवश्यक है।
- उदारवादी सहभागी राजनीति संस्कृति का विकास होता है क्योंकि राजनैतिक रूप से भेदभाव न होने पर कोई व्यक्ति, जाति, धर्म या दल कानून से बड़ा नहीं होता है।
- लोकतंत्र की जड़े मजबूत होती है, भेदभाव हीनता प्रतिनिधि नौकरशाही के विकास के लिए सकारात्मक वातावरण बनने लगता है।
- सिविल सेवा तटस्थता या राजनैतिक गैर तरफदारी व भेदभावहीनता का तात्पर्य सरकारी नीतियों, नागरिकों की आकांक्षाओं के प्रति प्रतिवद्धता से है और इससे सिविल सेवा सक्रियता का विकास होता है, जिससे विकास गति को तीव्रता के साथ संचालित किया जा सकता है।
- विकास की पूर्वशर्त कानून एवं व्यवस्था को सुनिश्चित करना है और यह एक तटस्थ सिविल सेवा से ही संभव है।
- जन कल्याण की नीतियों का क्रियान्वयन बिना भेदभाव के हो सकता है।
- भेदभावहीन सिविल सेवा ही विकास प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा देने में सक्षम है।
- धन का संग्रह एक ही व्यक्ति या संस्थाओं से नहीं होता है क्योंकि संसाधनों का वितरण समान तरीके से संभव हो जाता है।
- तटस्थ सिविल सेवा विधि के शासन को गंभीरता पूर्वक क्रियान्वित करती है। जिससे नागरिकों में कानून के प्रति आदारभाव विकसित होता है और नागरिकों में यह विश्वास जगता है कि आम आदमी भी शासन व्यवस्था में भागीदारी कर सकता है।
- राजनैतिक हस्तक्षेप कम होते है, प्रशासन में पहल विकसित होती है।

6.3.1.3.सिविल सेवा में तटस्थता के समक्ष चुनौतियाँ (Challenges to neutrality in civil service)

- **राजनीतिक हस्तक्षेप और सिविल सेवकों पर दबाव:-**सिविल सेवकों को अक्सर राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिससे उनकी तटस्थता से समझौता हो सकता है। जन कल्याण पर राजनीतिक हितों को प्राथमिकता देने का दबाव सिविल सेवाओं की प्रभावशीलता और अखंडता को कमजोर कर सकता है।
- **सरकार के प्रति वफादारी और स्वतंत्रता के बीच संतुलन**:-सिविल सेवकों को वर्तमान सरकार के प्रति वफ़ादारी और जनहित में काम करने के अपने कर्तव्य के बीच एक नाजुक संतुलन बनाना चाहिए। इस संतुलन को बनाए रखना चुनौतीपूर्ण हो सकता है, खासकर राजनीतिक बदलावों के दौरान या विवादास्पद नीति परिदृश्यों में।
- **सिविल सेवा तटस्थता और यूपीएससी :**-यूपीएससी अपनी कठोर भर्ती और चयन प्रक्रियाओं के माध्यम से सिविल सेवा निष्पक्षता सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह योग्यता, क्षमता और ईमानदारी के आधार पर उम्मीदवारों की पहचान करने के लिए परीक्षा और साक्षात्कार आयोजित करता है, जिससे तटस्थता के सिद्धांतों को कायम रखा जा सके।यूपीएससी सिविल सेवा पदों के लिए उम्मीदवारों का चयन करने में पारदर्शी और वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण अपनाता है। लिखित परीक्षा और साक्षात्कार सहित कठोर परीक्षा प्रक्रिया के माध्यम से, यूपीएससी उम्मीदवारों का उनके ज्ञान, कौशल और योग्यता के आधार पर मूल्यांकन करता है, जिससे सभी आवेदकों के लिए समान अवसर सुनिश्चित होते हैं। यह प्रक्रिया केवल उनकी योग्यता और क्षमता के आधार पर व्यक्तियों का चयन करके सिविल सेवाओं की तटस्थता और अखंडता को बनाए रखने में मदद करती है।

6.3.1.4. राजनीतिक तटस्थता के पक्ष में विचार (Views in favor of political neutrality)

राजकीय कर्मचारियों के आचार नियमों में अन्य किन्हीं को लेकर उतना विवाद नहीं है, जितना उन नियमों को लेकर, जिनका संबंध उनके राजनीतिक क्रियाकलापों से है। राजनीतिक तटस्थता के समर्थकों का कहना है कि (i) यदि एक भी लोक सेवक के विपक्ष में यह पता चल जाए कि उसमें किसी दल के प्रति लगाव है तो लोक सेवा के राजनीतिक दृष्टिकोण एवं निष्पक्षता से जनता का विश्वास पूर्णतः उठ जाएगा। (ii) लोक सेवा के ये नियम कर्मचारी की राजनीतिक प्रतिरोधों से रक्षा करते हैं। (iii) लोक सेवा में प्रवेश स्वैच्छिक होता है। यदि इस सेवा की शर्तों में कुछ नियन्त्रण शामिल हैं तो उनकी शिकायत का कोई तर्कपूर्ण कारण नहीं है। अन्य व्यवसायों तथा नियोजकों में भी कतिपय नियन्त्रण शामिल होते हैं। (iv) अन्य नागरिकों की भांति लोक सेवकों को राजनीतिक अधिकार देने से

उनकी प्रशासनिक क्षमता कम होगी। (v) यदि लोक सेवकों के अपने राजनीतिक विचार होंगे तो ऐसी स्थिति में अधीनस्थ कर्मचारी को विरोधी विचारधारा वाले अपने वरिष्ठ अधिकारी का कोप भाजन बनना पडेगा।यह आवश्यक है कि लोकतान्त्रिक विधान एवं शासन में राज कर्मचारी निर्दलीय और निरपेक्ष रहें, तभी शासन में दक्षता आ सकती है। दूसरा पहलू यह भी है कि ये कर्मचारी समाज के विवेकी अंग हैं और जैसे-जैसे शासन का कार्य- क्षेत्र बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे उनकी संख्या भी बढ़ती जाती है। अतः उनको राजनीतिक क्रियाकलापों से बरी कर देने से समाज का एक बड़ा अंश राजनीति के लिए पंगु एवं निष्क्रिय हो जाता है। यह एक बड़ी समस्या है कि लोक कर्मचारियों की व्यावहारिक निष्पक्षता का सामान्य नागरिकता के अधिकारों से किस प्रकार समन्वय किया जाये?तटस्थता की पारम्परिक धारणा की चुनौती कतिपय विचारक लोक सेवा की परम्परणत अवधारण को निम्न तर्को के आधार पर चुनौती देते हैं (i) आधुनिक समय में यह परम्परागत विचार मान्य नहीं रह गया है कि मन्त्रीगण या राजनीतिक कार्यपालिका नीति निर्धारित करें और लोक सेवकों द्वारा उनका पालन किया जाए। अब लोक सेवकों के कार्य बदल रहे हैं और नीति-निर्धारण की प्रक्रिया में वे राजनीतिक कार्यपालिका के सहयोगी बन गये हैं। (ii) लोक सेवक को दलीय राजनीति से दूर रहना चाहिए, किन्तु नीति संबंधी राजनीति से नहीं। पॉल एच. एपिलबी के शब्दों में,' आज सभी प्रशासक राजनीतिज्ञ हैं क्योंकि वे लोकहित के प्रति उत्तरदायी होते हैं। (iii) लोक सेवकों का कार्य उसी प्रकार राजनीतिज्ञ हैं क्योंकि वे लोकहित के प्रति उत्तरदायी होते हैं। (iii) लोक सेवकों का कार्य उसी प्रकार बदल गया है जैसे सरकार के स्वभाव तथा उद्देश्य नकारात्मक से सकारात्मक में परिवर्तित हो गए हैं।अतः आज ऐसे लोक सेवकों की आवश्यकता है जिनका विकास तथा लोकतान्त्रिक मूल्यों के प्रति भावनात्मक लगाव हो। हूवर आयोग के शब्दों में, 'यदि वरिष्ठ लोक सेवकों का समूह राजनीतिक तटस्थता का अनुगमन करता है, तो वह नपुंसकों का एक समूह बन जाता है ।कोई भी राजनीतिक कार्यपालिका अपने होश हवास में ऐसे किसी व्यक्ति को कोई पद नहीं सौंपेगी। भावनात्मक लगाव से वंचित कर्मचारियों की सरकार, ऐसे डॉक्टरों और नर्सों के समान है जिन्हें इस बात की चिन्ता नहीं कि उनके रोगी मरते हैं या जीते हैं और जो केवल यही ध्यान रखते है कि उनके धन्धे की उचित प्रक्रियाओं का अनुसरण किया जा रहा है। तटस्थता पर अत्यधिक बल देने पर सम्पूर्ण सरकार तटस्थ बन जाएगी।इसी अभिमत की पुष्टि करते हुए समीर लिखते हैं, ' भावनात्मक लगाव का अनुमोदन न करना सरल है किन्तु 'बौद्धिक लगाव' या 'व्यवसायिक लगाव' या 'नैतिक लगाव' के विषय में क्या होगा? क्या लोक सेवक के लिए ये भी बुरी बातें हैं? प्रबन्ध के उद्देश्यों के प्रति तथा राजनीति के सामाजिक परिणामों से तटस्थ होकर लोक सेवा में ' अच्छे प्रबन्ध' की आशा करने का अर्थ लोक प्रशासन को यदि शून्यवादी नहीं तो अनुर्वर बना देना अवश्य है।ग्रेट ब्रिटेन में लोक सेवकों की राजनीतिक तटस्थता का स्वरूप ब्रिटेन में कर्मचारियों को दो वर्गों में बांटा जाता है

औद्योगिक और जनऔद्योगिक सेवाओं के कर्मचारी। जहां तक औद्योगिक क्रमचारियों का सम्बन्ध है, उन पर किसी प्रकार का कोई बन्धन नहीं होता और वे आम नागरिक की तरह राजनीति में भाग लेने के लिए स्वतन्त्र होते हैं। ब्रिटेन में अनऔद्योगिक सेवाओं को तीन प्रवर्गों में बांटा गया है- (i) प्रथम, स्वतन्त्र क्षेत्र- इस क्षेत्र में 62% लोक सेवक होते हैं, जैसे, औद्योगिक लोक सेवक, कार्यालय में निम्न श्रेणी के कर्मचारी, संदेशवाहक, सफाई करने वाले, आदि। इन्हें सभी प्रकार की राजनीतिक गतिविधियों का अधिकार होता है। (ii) द्वितीय, एक अन्तर्वर्ती क्षेत्र - इस क्षेत्र में 22% लोक सेवक हैं, जैसे, मुद्रा लेखक, लिपिक, सहायक, डाकखाने के प्रहस्तनीय पर्यवेक्षक, आदि। इन्हें संसद के लिए चुनाव लड़ने के अतिरिक्त सभी प्रकार की राजनीतिक क्रियाओं में भाग लेने की अनुमति प्राप्त होती है। (iii) तृतीय, सीमित-प्रवर्ग में केवल 16% उच्च लोक सेवक आते हैं। इस प्रवर्ग के लोक सेवक मत देने के अलावा सभी प्रकार के राजनीतिक अधिकारों से वंचित होते हैं।संयुक्त राज्य अमरीका में लोक सेवकों की राजनीतिक तटस्थता का स्वरूप ग्रेट ब्रिटेन के विपरीत अमरीका में लोक सेवकों के राजनीतिक कार्यों पर कठोर बन्धन लगाए गए हैं। वे मौन रूप से मतदान कर सकते हैं, वे चुनाव अभियान की सभाओं में केवल दर्शक मात्र होते हैं, उनके राजनीतिक प्रबन्ध या राजनीतिक अभियानों में सक्रिय भाग लेने पर प्रतिबन्ध है। वे कोई भी राजनीतिक विचार स्वयं को संकट में डालकर ही प्रकट कर सकते हैं। इन नियमों का उल्लंघन करने पर कठोर दण्ड दिया जाता है। सेवा से पदच्युत करने का अधिकतम दण्ड दिया जा सकता है। ये बन्धन व्यावसायिक लोक सेवकों सहित सभी प्रवर्गों के कर्मचारियों पर लागू होते हैं।

6.3.1.5.सिविल सेवा तटस्थता को मजबूत करने के लिए सिफारिशें (Recommendations to strengthen civil service neutrality)

- **सिविल सेवकों के लिए प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण**:-सिविल सेवकों की अपनी भूमिकाओं, जिम्मेदारियों और नैतिक दायित्वों की समझ को बढ़ाने के लिए निरंतर प्रशिक्षण कार्यक्रम लागू किए जाने चाहिए। ये कार्यक्रम व्यावसायिकता को बढ़ावा देने, नैतिक निर्णय लेने, संघर्ष समाधान और राजनीतिक दबावों को प्रभावी ढंग से संभालने पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं, यह सुनिश्चित करते हुए कि सिविल सेवक अपने कार्यों में तटस्थ रहें।
- **राजनीतिक हस्तक्षेप के विरुद्ध सुरक्षा उपाय स्थापित करना**:-सिविल सेवा की तटस्थता की रक्षा के लिए, प्रशासनिक मामलों में राजनीतिक हस्तक्षेप को कम करने के उपाय किए जाने चाहिए। प्रशासनिक निकायों

की स्वायत्तता और स्वतंत्रता को मजबूत करके, राजनीतिक बातचीत पर स्पष्ट दिशा-निर्देश स्थापित करके और सिविल सेवाओं के भीतर गैर-पक्षपात की संस्कृति को बढ़ावा देकर इसे हासिल किया जा सकता है।

- **नैतिक आचरण और जवाबदेही को प्रोत्साहित करना**:-सिविल सेवा की तटस्थता को बनाए रखने के लिए नैतिक आचरण और जवाबदेही की संस्कृति को बढ़ावा देना महत्वपूर्ण है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि सिविल सेवक ईमानदारी के उच्च मानकों का पालन करते हैं और तटस्थता के किसी भी उल्लंघन के लिए जवाबदेह हैं, मजबूत आचार संहिता, व्हिसलब्लोअर सुरक्षा और अनुशासनात्मक प्रक्रियाओं जैसे तंत्र मौजूद होने चाहिए।

सिविल सेवा तटस्थता प्रभावी और नैतिक लोक प्रशासन की आधारशिला है। यह निष्पक्ष और पारदर्शी शासन सुनिश्चित करता है, कानून के शासन को कायम रखता है और सरकार में जनता का विश्वास बढ़ाता है। तटस्थता से जुड़ी चुनौतियों और विवादों के बावजूद, सिविल सेवाओं के इस आवश्यक पहलू को मजबूत करना और उसकी रक्षा करना अनिवार्य है। प्रशिक्षण प्रदान करके, सुरक्षा उपाय स्थापित करके और नैतिक आचरण को बढ़ावा देकर, हम सिविल सेवा तटस्थता को सुदृढ़ कर सकते हैं और यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि हमारे प्रशासनिक संस्थान निष्पक्ष और जनहित की सेवा के लिए समर्पित रहें। सिविल सेवा तटस्थता को बनाए रखना और उसकी रक्षा करना न केवल एक जीवंत लोकतंत्र के कामकाज के लिए बल्कि एक न्यायपूर्ण और समतापूर्ण समाज के निर्माण के लिए भी महत्वपूर्ण है।

6.3.2.गुमनामी याअनामता (anonymity)

लोक सेवकों में अनामता (Anonymity) का तात्पर्य उस सिद्धांत से है, जिसके अनुसार सरकारी कार्यों और निर्णयों के संदर्भ में लोक सेवकों की व्यक्तिगत पहचान सार्वजनिक रूप से उजागर नहीं की जाती है। यह व्यवस्था प्रशासनिक तंत्र के सुचारू संचालन, निष्पक्षता और जवाबदेही को सुनिश्चित करने में सहायक होती है।सरकारी नीतियों और निर्णयों की आलोचना या प्रशंसा सरकार और मंत्रियों के स्तर पर होती है, न कि व्यक्तिगत रूप से अधिकारियों की।यह लोकतांत्रिक जवाबदेही का सिद्धांत है, जहाँ कार्यपालिका की जिम्मेदारी जन-प्रतिनिधियों (मंत्रियों) की होती है।अनामता लोक सेवकों को स्वतंत्र रूप से, बिना किसी दबाव के, कार्य करने में मदद करती है।उन्हें निर्णय लेते समय व्यक्तिगत आक्षेप या सार्वजनिक दबाव का सामना नहीं करना पड़ता।यदि लोक सेवकों की व्यक्तिगत पहचान हर कार्य में उजागर हो, तो कार्यकुशलता पर असर पड़ सकता है।अनामता उन्हें नियमों और कानूनों के अनुसार नीतियों का क्रियान्वयन करने के लिए स्वतंत्र बनाती है।अनामता का सिद्धांत राजनीतिक

हस्तक्षेप, और सार्वजनिक आलोचना से लोक सेवकों की रक्षा करता है।इससे प्रशासनिक तंत्र की स्वायत्तता बनी रहती है।सरकारी कार्य व्यक्तिगत न होकर सामूहिक होते हैं। इस कारण निर्णय और नीतियाँ अधिकारियों के बजाय सरकारी विभागों या सरकार के नाम से सामने आती हैं।भारतीय संविधान के तहत संसदीय प्रणाली में मंत्री परिषद सामूहिक रूप से संसद के प्रति जवाबदेह होती है, न कि सरकारी कर्मचारियों के प्रति।केंद्रीय सिविल सेवा (आचरण) नियम, 1964 में भी लोक सेवकों के लिए यह निर्धारित किया गया है कि वे सार्वजनिक तौर पर न तो किसी नीति का समर्थन करेंगे और न ही आलोचना।अनामता से लोक सेवक की विवादास्पद या संवेदनशील निर्णयों के मामलों में उनकी पहचान सार्वजनिक न होने से सुरक्षा बनी रहती है।लोक सेवक बिना डर और दबाव के न्यायोचित निर्णय ले सकते हैं।कार्य प्रणाली में स्थिरता बनी रहती है।

6.3.2.1.गुमनामी के लिए आचरण नियम (Conduct rules for anonymity)

- नौकरशाह से अपेक्षा की जाती है कि वह पर्दे के पीछे रहकर काम करे और मीडिया तथा जनता की नजरों से दूर रहे।
- उन्हें सफलता का श्रेय नहीं मिलेगा और असफलता के लिए उन्हें दोषी नहीं ठहराया जाएगा। सभी प्रशंसा और आलोचना को संभालना राजनीतिक कार्यपालिका की जिम्मेदारी होगी।
- उन्हें अपनी शिकायतें या मतभेद व्यक्त करने के लिए मीडिया के पास जाने से बचना चाहिए।
- मंत्री को अतिरिक्त कार्य करने, पुरस्कृत करने और दण्डित करने की शक्ति दी जानी चाहिए।
- अधिकारी को अपने वरिष्ठ अधिकारी (स्थायी एवं राजनीतिक दोनों) के प्रति जवाबदेह होना होगा।
- मंत्री को जनता के प्रति जवाबदेह होना होगा।
- अधिकारी अपनी पदीय हैसियत के दौरान प्राप्त जानकारी को किसी तीसरे पक्ष को नहीं बताएगा, सिवाय सद्भावना के या जब ऐसा कानून/विभागीय नियमों के तहत अपेक्षित हो।
- सरकारी रहस्यों की रक्षा करेंगे। (सिवाय उन स्थानों के जहां आरटीआई लागू होता है।)
- कोई भी सार्वजनिक बयान नहीं देगा जिससे आपसी संबंधों में शर्मिंदगी हो
- साहित्यिक, कलात्मक या वैज्ञानिक चरित्र को छोड़कर, पुस्तक प्रकाशित करने / समाचार पत्र में लिखने / टीवी - रेडियो पर आने से पहले सरकार की अनुमति की आवश्यकता होती है। कार्य गुमनाम या छद्म नाम से भी नहीं करेगा।

- सरकारी अनुमति के बिना उसे अपने सम्मान में (या किसी अन्य कर्मचारी के सम्मान में) आयोजित किसी भी सम्मान, समारोह, बैठक, रैली को स्वीकार नहीं करना चाहिए।
- सेवानिवृत्ति/स्थानांतरण के दौरान विदाई पार्टी की अनुमति है।
- सार्वजनिक निकायों या संस्थाओं द्वारा आयोजित सरल और सस्ते मनोरंजन की अनुमति है।
- सरकारी कार्यों का औचित्य सिद्ध करना: जनता/प्रेस ने उसके सरकारी आचरण के लिए उसके विरुद्ध कुछ टिप्पणी की है। वह सरकार की अनुमति के बिना उनके विरुद्ध मानहानि का मुकदमा दायर नहीं कर सकता या प्रेस में बयान नहीं दे सकता।
- इससे सेवाओं में अनुशासन, शिष्टाचार और नैतिकता सुनिश्चित होती है।

6.3.2.2.गुमनामी के विरुद्ध तर्क (rguments against anonymity)

- अक्सर मंत्री अप्राप्य लक्ष्यों वाली लोकलुभावन योजनाएं/नीतियां लेकर आते हैं और फिर अधिकारियों पर इसे ईमानदारी से लागू न करने का आरोप लगाते हैं।
- मंत्री खुलेआम नौकरशाहों की आलोचना करते हैं, लेकिन नौकरशाह गुमनामी के नियमों के कारण बचाव नहीं कर पाते। फिर भी उन्हें राज्य के खिलाफ प्रदर्शन कर रहे लोगों का सामना करना पड़ता है। (प्रतिवाद: अधिकारी भी अपने दैनिक कार्यालय जीवन और निजी जीवन में राजनेताओं की आलोचना करते हैं। इसलिए आपसी सम्मान खत्म हो जाता है।)
- अक्सर राज्य की पूरी नौकरशाही भ्रष्ट और अक्षम होती है। इसलिए, आधिकारिक चैनलों (जैसे उच्च अधिकारियों को आवेदन भेजना या अदालत में याचिका दायर करना) का उपयोग करने के बावजूद, ईमानदार अधिकारी को कोई न्याय नहीं मिल सकता है। और फिर भी गुमनामी का मानदंड उसे मीडिया से संपर्क करने से रोकेगा। और फिर भी अगर वह मीडिया से संपर्क करता है, तो उसे सेवा मानदंडों का उल्लंघन करने के लिए और अधिक सताया जाएगा।

6.4. पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

6.4.1. शासन में नैतिक और आचारिक मूल्यों का महत्व (Importance of moral and ethical values in governance)

भारत आज मूल्यों के संकट का सामना कर रहा है जो साथी मानवों के प्रति चिंता की कमी, लालच की संस्कृति और व्यापक भ्रष्टाचार में परिलक्षित होता है जो जीवन के हर पहलू को प्रभावित करता है।राज्य की गतिविधियों की

सफलता या असफलता राष्ट्रीय योजनाओं और कार्यक्रमों के उचित क्रियान्वयन पर निर्भर करती है । कोई भी योजना, चाहे वह कितनी भी अच्छी क्यों न हो, स्वच्छ, कुशल और निष्पक्ष प्रशासन के बिना सफल नहीं हो सकती।समकालीन समय में, हम सिद्धांत और व्यवहार, विश्वास और कार्रवाई के बीच बहुत अंतर पाते हैं जो सरकारी कर्मचारियों के आचरण में पाखंड की ओर ले जाता है। वर्तमान प्रशासन और राजनीति व्यापक रूप से स्वीकार करती है कि भ्रष्टाचार और सत्ता का दुरुपयोग राष्ट्र को कमजोर करता है।ऐसा प्रशासन तभी विश्वसनीय हो सकता है जब वह मानवीय मूल्यों पर आधारित हो। क्योंकि जब तक मनुष्य के भीतर मूल्यों का विकास नहीं होगा, तब तक सतही प्रयासों से उसके व्यवहार और दृष्टिकोण में बदलाव नहीं लाया जा सकता। मानवीय मूल्यों पर सी. राजगोपालचारी ने इस प्रकार कहा है,"राष्ट्रीय चरित्र ही वह आधारशिला है जिस पर हमारे सार्वजनिक मामलों का भाग्य और भविष्य टिका हुआ है, न कि यह या वह, वाद। अगर भारतीय नीतियों और प्रशासन के सूखे खेतों को ताजा हरा जीवन देना है और विकसित करना है, तो हमें राष्ट्रीय चरित्र में शुद्धता के मानसून की आवश्यकता है। और मानसून में छोटी-छोटी बूंदें गिरती हैं और मिलकर बारिश होती है। अकेले चरित्र की शुद्धता ही सूखे खेतों को पुनर्जीवित कर सकती है।"संसदीय स्थायी समितियों और कई अन्य समितियों में भी मूल्यों को विकसित करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है । यदि मानव विकास की प्रक्रिया में ठोस, सकारात्मक और महान मानवीय मूल्यों का पोषण किया जाता है, तो नैतिक व्यवहार स्वाभाविक, सहज और लगभग सहज हो जाता है। स्वामी रंगनाथनंद कहते हैं कि सत्ता और अधिकार रखने वाले बहुत से लोग आध्यात्मिक रूप से कमज़ोर होते हैं और इसलिए हिंसा, स्वार्थ और भ्रष्टाचार में लिप्त रहते हैं। एक अच्छे प्रशासक को भगवद गीता में बताए गए राजर्षि के मूल्यों को आत्मसात करना चाहिए । जब कोई व्यक्ति सत्ता को आध्यात्मिक अंतर्मुखता , अधिकार को नैतिक और मानवीय मूल्यों के प्रति संवेदनशीलता के साथ जोड़ता है तो वह व्यक्ति राजर्षि बन जाता है ।समाज में आचरण और नैतिक मूल्यों के उच्च मानकों को बढ़ावा देने वाले माहौल को बढ़ावा देना राज्य की प्राथमिक जिम्मेदारी है । इसके लिए एक व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसमें स्कूलों और कॉलेजों में बच्चों और युवाओं को सही तरह की शिक्षा प्रदान करना, राजनेताओं सहित सार्वजनिक सेवाओं में काम करने वाले लोगों के नैतिक आचरण को सुनिश्चित करना और व्यापार और उद्योग के फलने-फूलने के लिए ईमानदारी और विश्वास का माहौल बनाना शामिल है।समाज सामान्य नैतिक विवेक को प्रतिबिंबित करने वाले मानक निर्धारित करता है तथा उन्हें राज्य द्वारा लागू करने तथा न्याय प्रदान करने के लिए कानूनों में शामिल करता है, तथा इस प्रकार राजनीतिक निकाय की वैधता और निष्ठा प्राप्त करता है।अगर देश को प्रगति और विकास करना है तो सार्वजनिक सेवाओं को आचरण

और नैतिक व्यवहार के उच्च मानक का उदाहरण स्थापित करना होगा। इसके लिए यह आवश्यक है कि राज्य सार्वजनिक सेवाओं के फलने-फूलने के लिए उपयुक्त नैतिक बुनियादी ढाँचा बनाए।

6.4.1.1. भारतीय शासन में नैतिक मुद्दे (Ethical Issues in Indian Governance)

- **प्राधिकरण या पद की स्थिति का उल्लंघन:** अधिकारी ऐसे कार्य करते हैं जो उनकी स्थिति, ज़िम्मेदारियों और अधिकारों से बाहर होते हैं, जो अंततः राज्य या कुछ नागरिकों के हितों को नुकसान पहुँचाते हैं।
- **उपेक्षा:** सार्वजनिक अधिकारी या तो अपनी पेशेवर ज़िम्मेदारियों का पालन नहीं करते हैं या उनके साथ एक अपराधी के तरह व्यवहार करते हैं, जिससे राज्य या समुदाय को नुकसान होता है।
- रिश्वतखोरी: भ्रष्टाचार और रिश्वत समाज के स्वीकार्य अंग बन गए हैं, भ्रष्टाचार और लेन-देन के कार्य को बढ़ावा दे रहे हैं।
- **शालीनता:** अधिकारियों का असाधारण मेहनती, समर्पित और कर्तव्यनिष्ठ होना आवश्यक है, लेकिन वे आत्मसंतुष्ट होते हैं, जो स्थिति, पद और परिलब्धियों से ग्रस्त एवं विलासिता के आदी होते हैं।
- **संरक्षण:** वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा नियामक निकायों और अन्य महत्त्वपूर्ण पदों से सेवानिवृत्ति के बाद बड़े पैमाने पर बिना किसी दिशा-निर्देश और संरक्षण के कार्य किया जाता है।
- **प्रशासनिक गोपनीयता:** प्रशासनिक गोपनीयता का उद्देश्य निजी हितों को बनाए रखते हुए जनहित की सेवा करना है। इसलिये पारदर्शिता नैतिक शासन के सबसे महत्त्वपूर्ण गुणों में से एक है।

6.4.1.2. नैतिकता संबंधी नियमों की आवश्यकता (The need for ethical rules)

यथा राजा तथा प्रजा'अर्थात् जनता राजा के आचरण का अनुसरण करती है। इसलिए राजा का अपना तथा राज्य / प्रशासन का आचरण नैतिक होना अत्यन्त जरुरी है।प्रशासनिक नैतिकता से अभिप्राय नीतिगत आचरण से है अर्थात् प्रशासनिक अधिकारी नैतिक मानदण्डों के अनुसार कार्य करें ताकि वे अपनी पदीय शक्तियों का दुरुपयोग न कर सकें।ऑडवे टीड का यह कथन कि "प्रशासन एक नैतिक कार्य है, और प्रशासक एक नैतिक अभिकर्त्ता " प्रशासन और नीति शास्त्र के बीच घनिष्ठ संबंध को व्यक्त करता है। वस्तुत प्रशासन द्वारा किया गया नीति सम्मत कार्य ही लोक प्रशासन है।नैतिकता संबंधी नियम निम्न कारणों से आवश्यक है:

- सत्ता के दुरुपयोग को रोकने के लिए
- प्रशासनिक कुशलता बनाए रखने के लिए
- राजनीतिक तटस्थता बनाये रखने हेतु ।

- नैतिक आचरण के लिए
- लोक सेवकों की मनमानी गतिविधियों पर अंकुश
- जनहित का संरक्षण

6.4.1.3.नैतिक मूल्य(Ethical values)-अखंडता ,ईमानदारी ,कर्तव्य के प्रति समर्पण ,सार्वजनिक भलाई की भावना ,क्षमता,गैर-पक्षपातपूर्ण रवैया ,विनम्रता,राष्ट्र के प्रति निष्ठा ,भ्रष्टाचार-मुक्ति ,फेयरनेस ,सच्चाई,गुप्तता ,तटस्थता ,गुमनामी ,निष्पक्षता

- **सत्यनिष्ठा:**-एक प्रशासक ईमानदारी के आधार पर प्रशासनिक कार्रवाई करेगातथा अपनी शक्ति, पद और विवेक का उपयोग अपने व्यक्तिगत हित तथा अन्य व्यक्तियों या समूहों के नाजायज हितों की पूर्ति के लिए नहीं करेगा।
- **वैधता और तर्कसंगतता:**-एक प्रशासक कानून और नियमों का पालन करेगा जो विभिन्न श्रेणियों की नीतियों और निर्णयों को नियंत्रित करने और मार्गदर्शन करने के लिए तैयार किए गए हैं।
- **उत्कृष्टता:**-एक प्रशासक प्रशासनिक निर्णयों और कार्रवाई में गुणवत्ता के उच्चतम मानकों को सुनिश्चित करेगा और सुविधा या आत्मसंतुष्टि के कारण मानकों के साथ समझौता नहीं करेगा।
- **निष्पक्षता:**-इसका अर्थ है मामले के गुण-दोष के अनुसार कार्य करना। निष्पक्षता के लिए अक्सर सरकारी कर्मचारियों को ऐसी राय, स्थिति या कार्यवाहियों से बचना पड़ता है जो किसी विशेष राजनीतिक कार्यक्रम के प्रति या उसके विरुद्ध पक्षपात प्रदर्शित करती हों।
- **तटस्थता:**-प्रशासन की ईमानदारी और दक्षता के लिए लोकतांत्रिक व्यवस्था में राजनीतिक तटस्थता बहुत ज़रूरी है। इसका मतलब है कि सिविल सेवा को सरकार को निष्पक्ष रूप से स्वतंत्र और स्पष्ट सलाह देनी चाहिए । इसका मतलब यह भी है कि सिविल सेवकों द्वारा सरकार के निर्णयों को ईमानदारी से लागू किया जाना चाहिए, चाहे वे निर्णय उनकी सलाह के अनुरूप हों या नहीं।
- **सार्वजनिक सेवा के प्रति समर्पण:**-सेवा और त्याग की भावना सार्वजनिक सेवाओं का एक अनिवार्य घटक है और सार्वजनिक अधिकारियों को यह महसूस होना चाहिए कि वे राष्ट्रीय उद्देश्य के लिए काम कर रहे हैं। संगठनों के निर्धारित लक्ष्यों के प्रति समर्पण का रवैया सार्वजनिक अधिकारियों का एक अनिवार्य गुण होना चाहिए।

- **कर्तव्य के प्रति समर्पण:-**एक प्रशासक अपने कर्तव्यों के प्रति प्रतिबद्ध होगा और अपने काम को भागीदारी, बुद्धिमत्ता और समर्पण के साथ पूरा करेगा । इसमें समय का सम्मान, समय की पाबंदी और किए गए वादों को पूरा करना शामिल है। जैसा कि स्वामी विवेकानंद ने कहा: "हर कर्तव्य पवित्र है और कर्तव्य के प्रति समर्पण पूजा का सर्वोच्च रूप है।" काम को बोझ के रूप में नहीं बल्कि समाज की सेवा करने और रचनात्मक रूप से योगदान देने के अवसर के रूप में माना जाता है ।
- **पारदर्शिता:-**एक प्रशासक पारदर्शी तरीके से निर्णय लेगा और उन्हें लागू करेगा ताकि निर्णयों से प्रभावित होने वाले और उनके औचित्य का मूल्यांकन करने के इच्छुक लोग ऐसे निर्णयों के पीछे के कारणों को समझ सकें।
- **जिम्मेदारी और जवाबदेही:-**एक प्रशासक अपने निर्णयों और कार्यों के लिए जिम्मेदारी स्वीकार करने में संकोच नहीं करेगा। वहनिर्णय लेते समय अपने विवेक के उपयोग के लिए खुद को नैतिक रूप से जिम्मेदार मानेगा। इसके अलावा, वह शासन के उच्च अधिकारियों और यहां तक कि उन लोगों के प्रति भी जवाबदेह होने के लिए तैयार होगा जो उसके निर्णयों और कार्यों के अंतिम लाभार्थी हैं।
- **जवाबदेही और लचीलापन:-**एक प्रशासक बाहरी और आंतरिक पर्यावरण से आने वाली मांगों और चुनौतियों का प्रभावी ढंग से जवाब देगा। वह पर्यावरण परिवर्तन के अनुकूल होगा और फिर भी आचरण के नैतिक मानदंडों को बनाए रखेगा।
- **करुणा:-**एक प्रशासक,निर्णय लेने में अपने विवेक का उपयोग करते हुए समाज के कमजोर वर्गों के प्रति करुणा प्रदर्शित करेगा ।
- **न्याय:-**शासन की नीतियों और निर्णयों के निर्माण और क्रियान्वयन के लिए जिम्मेदार लोग यह सुनिश्चित करेंगे कि समानता, समता, निष्पक्षता, निष्पक्षता और वस्तुनिष्ठता के सिद्धांतों के प्रति सम्मान दिखाया जाए तथा स्थिति, शक्ति, लिंग, वर्ग, जाति और धन के मानदंडों के आधार पर कोई विशेष पक्षपात न किया जाए।
- **उपयोगितावाद का सिद्धांत:-**नीतियां और निर्णय बनाते और लागू करते समय, एक प्रशासक यह सुनिश्चित करेगा कि निर्णय अधिकतम लोगों के लिए अधिकतम भलाई (खुशी, लाभ) लेकर आए ।
- **राष्ट्रीय हित:-**सिविल सेवक अपने कर्तव्यों का पालन करते समय अपने राष्ट्र की ताकत और प्रतिष्ठा पर अपने कार्य के प्रभाव को ध्यान में रखेंगे।किसी भी देश के सरकारी अधिकारी अपनी आधिकारिक भूमिका निभाते समय अपने राष्ट्र के प्रति चिंता और सम्मान रखते हैं।
- **निस्वार्थता** -सार्वजनिक पद पर बैठे लोगों को केवल जनहित के लिए काम करना चाहिए। उन्हें अपने, अपने परिवार या अपने दोस्तों के लिए वित्तीय या अन्य लाभ प्राप्त करने के लिए ऐसा नहीं करना चाहिए।

- **वस्तुनिष्ठता** - सार्वजनिक नियुक्तियां करने, अनुबंध प्रदान करने, या पुरस्कार और लाभ के लिए व्यक्तियों की सिफारिश करने सहित सार्वजनिक कार्य करने में, सार्वजनिक पद धारकों को वस्तुनिष्ठ मानदंडों के आधार पर चुनाव करना चाहिए।
- **जवाबदेही** - सार्वजनिक पद के धारक अपने निर्णयों और कार्यों के लिए जनता के प्रति जवाबदेह होते हैं और उन्हें अपने पद के लिए जो भी उचित जांच हो, उसके लिए स्वयं को प्रस्तुत करना चाहिए।
- **खुलापन** - सार्वजनिक पद के धारकों को अपने द्वारा लिए गए सभी निर्णयों और कार्यों के बारे में यथासंभव खुला होना चाहिए। उन्हें अपने निर्णयों के लिए कारण बताने चाहिए और केवल तभी जानकारी सीमित करनी चाहिए जब व्यापक सार्वजनिक हित स्पष्ट रूप से मांग करते हों।
- **ईमानदारी** - सार्वजनिक पद के धारकों का यह कर्तव्य है कि वे अपने सार्वजनिक कर्तव्यों से संबंधित किसी भी निजी हित की घोषणा करें और सार्वजनिक हित की रक्षा करने वाले तरीके से उत्पन्न होने वाले किसी भी संघर्ष को हल करने के लिए कदम उठाएं।
- **नेतृत्व** - सार्वजनिक पद के धारकों को नेतृत्व और उदाहरण द्वारा इन सिद्धांतों को बढ़ावा देना चाहिए और उनका समर्थन करना चाहिए।

6.4.1.4.लोक प्रशासन में नैतिकता का महत्व(Importance of Ethics in Public Administration)

- **सार्वजनिक संसाधनों का उपयोग:** संसाधनों का जिम्मेदारी से उपयोग यह सुनिश्चित करता है कि समाज भ्रष्टाचार के बिना कुशलतापूर्वक और प्रभावी ढंग से विकसित हो। यह सार्वजनिक विश्वास के पदों पर बैठे लोगों को उनके कार्यों के लिए जिम्मेदार बनाता है
- **निष्पक्षता और वस्तुनिष्ठता:**निष्पक्षता और वस्तुनिष्ठता नैतिक मानदंड हैं जो किसी संस्था को योग्यता प्रदान करते हैं। परिणामस्वरूप, पूर्वानुमान में सुधार होता है, जिससे आर्थिक दक्षता बढ़ती है
- **समाज में सुधार:**जब सार्वजनिक अधिकारी व्यक्तिगत या निजी हितों से प्रभावित होने के बजाय न्यायसंगत और योग्यता के आधार पर निर्णय लेते हैं, तो समाज में सुधार होता है, और प्रशासन को काम के प्रति प्रतिबद्धता और समर्पण से लाभ मिलता है
- **जनता का विश्वास और आश्वासन:** जनता के सभी सदस्यों के साथ, चाहे उनकी जाति, धर्म या नस्ल कुछ भी हो, निष्पक्ष व्यवहार किया जाना चाहिए तथा नैतिकता न्यायपूर्ण और समतापूर्ण प्रशासन सुनिश्चित करती है।

- **सामाजिक संपत्ति:** एक न्यायपूर्ण और नैतिक प्रशासन विश्वसनीय होगा और प्रशासन में नागरिकों की भागीदारी सुनिश्चित करेगा। परिणामस्वरूप विश्वास प्रशासन को सुगम और समन्वित बनाता है
- **भ्रष्टाचार को रोकना:** कार्यकुशलता बढ़ाना और सरकार तथा असामाजिक तत्वों के बीच अपवित्र गठजोड़ को तोड़ना
- **कमजोर वर्ग की सहायता :** दैनिक कार्यों में करुणा को शामिल करने से कमजोर लोगों के जीवन पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है सामाजिक कल्याण, सार्वजनिक हित और सामान्य भलाई को संरक्षित और बढ़ावा देना
- **आर्थिक उन्नति:** नैतिक प्रबंधन अंतर्राष्ट्रीय संबंधों और अर्थव्यवस्था के विकास में भी सहायता करता है
- **जनता की आवश्यकताओं के प्रति जागरूकता :**प्रशासन जनता की जरूरतों और इच्छाओं के प्रति अधिक चौकस हो जाता है। उदाहरण के लिए, पश्चिम बंगाल में सड़क किनारे के विक्रेताओं के लिए एक अलग सार्वजनिक बाजार की स्थापना की गई थी, इससे पहले कि उन्हें बाहर निकाला जाता
- **एकता स्थापित करने वाले मानकों की स्थापना:**ऐसे दिशा-निर्देश और मानक स्थापित करना जो शहर के कर्मचारियों और सरकार की कार्यकारी शाखा के बीच बातचीत को एकीकृत करने में मदद करेंगे। परिणामस्वरूप, सिविल कर्मचारियों को गैर-पक्षपाती और निष्पक्ष होने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है
- सरकारी कर्मचारियों में नैतिकता का संचार करना तथा यह सुनिश्चित करना कि वे उस पर कायम रहें प्रशासनिक जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा देना तथा नागरिक और सिविल सेवा के बीच अच्छे संबंध स्थापित करना और उन्हें बढ़ावा देना सिविल सेवकों की मनमानी कार्रवाइयों पर रोक लगाना
- प्रशासनिक शक्ति और विवेक के उस भाग को नियंत्रित करना जिसे औपचारिक कानूनों, विधियों और प्रक्रियाओं द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता
- प्रशासनिक प्रक्रिया की दक्षता और प्रभावशीलता में सुधार करना,लोक प्रशासन की वैधता और विश्वसनीयता को मजबूत करना,सभी श्रेणियों के सिविल सेवकों के बीच उच्च नैतिकता को बढ़ावा देना और बनाए रखना

6.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(अ).भारतीय संविधान के किस अनुच्छेद के तहत् राष्ट्रपति को लोक सेवको के लिए आवश्यक नियम बनाने का अधिकार प्राप्त है।

(आ).सरकारी कर्मचारियों द्वारा **14** वर्ष से कम आयु के बच्चों को नौकरी में रखे जाने की मनाही के बारे में एक नया प्रावधान कब लागु किया गया ।

(इ). नौकरशाही का जनक किसे माना माना जाता है**?**

(ई)."राष्ट्रीय चरित्र ही वह आधारशिला है जिस पर हमारे सार्वजनिक मामलों का भाग्य और भविष्य टिका हुआ है" यह कथन किस विद्वान का है**?**

(उ)." हर कर्तव्य पवित्र है और कर्तव्य के प्रति समर्पण पूजा का सर्वोच्च रूप है।" यह कथन किस विद्वान का है**?**

6.6.सारांश (Summary)

सिविल सेवा की तटस्थता और अनामता तथा शासन में नैतिक और आचारिक मूल्यों का महत्व अत्यंत महत्वपूर्ण है। ये प्रशासन की पारदर्शिता, जवाबदेही और निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिए बुनियादी स्तंभ माने जाते हैं। तटस्थता (Neutrality) का तात्पर्य यह है कि सिविल सेवक राजनीतिक या अन्य प्रभावों से मुक्त रहते हुए निष्पक्षता के साथ अपना कर्तव्य निभाते रहना।तटस्थ सिविल सेवा राजनीतिक प्रभाव से बचती है और देश के प्रत्येक नागरिक को समान अवसर देती है।सरकारें बदल सकती हैं, लेकिन तटस्थ सिविल सेवा प्रशासन को सतत और स्थिर बनाए रखती है।तटस्थता सुनिश्चित करती है कि सभी नीतियाँ और निर्णय जनता के कल्याण के लिए हों, न कि किसी विशेष वर्ग के हित के लिए। इससे नागरिकों में प्रशासन की विश्वसनीयता बढ़ती है।अनामता का अर्थ है कि सिविल सेवक अपनी भूमिका में पीछे रहते हैं, और कार्यों का श्रेय राजनीतिक नेतृत्व को दिया जाता है।अनामता से सिविल सेवक निर्भीक होकर कार्य कर सकते हैं, क्योंकि उन्हें किसी दबाव या सार्वजनिक आलोचना का डर नहीं रहता। अनामता के कारण प्रशासनिक कार्यों का श्रेय निर्वाचित प्रतिनिधियों को मिलता है, जो लोकतंत्र की मूल भावना के अनुकूल है।अनामता सिविल सेवकों को निजी स्वार्थ से दूर रखती है और निर्णयों को वस्तुनिष्ठ बनाए रखती है।शासन में नैतिक और आचारिक मूल्यों का बहुत महत्व है प्रशासन में पारदर्शिता और जनता का विश्वास ईमानदारी से जुड़ा होता है।सभी नागरिकों के साथ समान व्यवहार और भेदभाव से दूर रहना।शासन में उत्तरदायित्व सुनिश्चित होती है जिससे भ्रष्टाचार और मनमानेपन पर रोक लगती है। सत्यनिष्ठा के कारण लोकसेवक किसी भी प्रकार के दबाव में बिना झुके अपने कर्तव्य के प्रति निष्ठा रखता है। कानून के दायरे में रहकर कार्य करना और नीतियों को लागू करनामूल्यों के कारन ही होता है। मूल्यों के कारण जनता की सेवा करना और उनके कल्याण को सर्वोच्च प्राथमिकता देना,जनता की समस्याओं को समझकर सहानुभूतिपूर्वक समाधान करना और अपने कार्यक्षेत्र में कुशलता और ज्ञान के साथ प्रदर्शन करना आदि गुण लोकसेवकों में आते

हैं। सिविल सेवा तटस्थता और नैतिकता के प्रभाव के कारण प्रशासन से भ्रष्टाचार को नियंत्रित किया जा सकता है।समाज में समानता और न्याय सुनिश्चित होता है , सिविल सेवक तटस्थता और अनुभव के आधार पर बेहतर नीतियों का निर्माण कर सकते हैं। नैतिकता और तटस्थता शासन को जनता के हित में केंद्रित करती है।सिविल सेवा की तटस्थता और अनामता प्रशासन की स्थिरता और लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। इसके साथ-साथ नैतिक और आचारिक मूल्यों का पालन शासन को अधिक पारदर्शी, जिम्मेदार और जनहितकारी बनाता है। ये मूल्य न केवल जनता का प्रशासन पर विश्वास बढ़ाते हैं बल्कि शासन की दक्षता और प्रभावशीलता को भी सुनिश्चित करते हैं।तटस्थ, ईमानदार और नैतिक सिविल सेवा ही सुशासन की नींव है।

6.7.सूचक शब्द (Key Words)

- **सिविल सेवा-**सिविल सेवा का मतलब है, सरकारी विभागों का वह समूह जिसमें सशस्त्र सेनाओं से जुड़े विभाग शामिल नहीं होते.
- **तटस्थता -**तटस्थता काअर्थ है, किसी के प्रति कोई राग-द्वेष न रखकर अपनी भूमिका निभाना।
- **नैतिक मूल्य-**नैतिक मूल्य वे सिद्धांत और मानक हैं जो हमारे व्यवहार का मार्गदर्शन करते हैं, जिससे हमें सही और गलत के बीच अंतर करने में मदद मिलती है।
- **आचरण संहिता-**किसी व्यक्ति, दल या संगठन के लिये निर्धारित सामाजिक व्यवहार, नियम एवं उत्तरदायित्वों के समूह को आचरण संहिता कहते हैं।
- **नैतिक आचरण-**नैतिक आचरण का अर्थ है, ईमानदारी, निष्पक्षता, सम्मान, जिम्मेदारी, करुणा, पारदर्शिता, और नागरिक-दिमाग जैसे सिद्धांतों के आधार पर सही काम करना।

6.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- सिविल सेवा में तटस्थता की अवधारणा का विस्तार से वर्णन कीजिए।
- सिविल सेवा में अनामता की अवधारणा विस्तार से वर्णन कीजिए।
- भारत सिविल सेवा में लोक सेवकों की अचार सहिंता की व्याख्या कीजिए।
- सिविल सेवा में लोक सेवकों के लिए नैतिक मूल्यों की आवश्यकता का विस्तार से वर्णन कीजिए।

6.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(अ).अनुच्छेद **309** के तहत्

(आ).केन्द्रीय सिविल सेवा (आचरण) नियमावली**, 1964** में

(इ).मैक्स वेबर को

(ई).सी. राजगोपालचारी ने

(उ)."स्वामी विवेकानंद ने

6.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

- अरोड़ा, आर. के. (**2008)** शासन में नैतिकता: नवीन मुद्दे और उपकरण। रावत: जयपुर
- अरोड़ा, रमेश के. (संपादक) (**2014)** लोक सेवा में नैतिकता, सत्यनिष्ठा और मूल्य। न्यू एज इंटरनेशनल: नई दिल्ली
- सी. भार्गव, आर. (**2006)** भारतीय संविधान की राजनीति और नैतिकता। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस: नई दिल्ली
- डी. चक्रवर्ती, विद्युत (**2016)** भारत में शासन में नैतिकता। रूटलेज: नई दिल्ली
- ई. चतुर्वेदी, टी. एन. (संपादक) (**1996)** सार्वजनिक जीवन में नैतिकता। आईआईपीए: नई दिल्ली
- एफ. गांधी, महाथिरिम (**2009)** हिंद स्वराज। राजपाल एंड संस: दिल्ली
- जी. गोडबोले, एम. (**2003)** सार्वजनिक जवाबदेही और पारदर्शिता: सुशासन के आवश्यक तत्व। ओरिएंट लॉन्गमैन: नई दिल्ली

Subject : Public Administration -Administrative ethics in governance	
Course Code : PUBA 302	**Author :** Dr. Parveen sharma
Lesson No. : 7	**Vetter :**
भारत में सिविल सेवाओं के लिए आचार संहिता और आचरण संहिता (code of ethics and code of conduct for civil services in india)	

अध्याय की सरंचना

7.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

7.2-परिचय (Introduction)

7.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

7.3.1.आचार संहिता का अर्थ एवं विशेषताएँ (Meaning and Characteristics of Code of Conduct)

7.3.2.भारत में आचार-संहिता (Code of Conduct in India)

7.4 .पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

7.4.2.आचार संहिता का विकास (Development of code of conduct)

7.4.1.लोक सेवक के कर्तव्य, दायित्व एवं अपेक्षाएं (Duties, responsibilities and expectations of a public servant)

7.4.3.भारत की बदलती प्रशासनिक अवसंरचना में आचरण संहिता की भूमिका (The role of code of conduct in the changing administrative structure of India)

7.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

7.6.सारांश (Summary)

7.7.सूचक शब्द (Key Words)

7.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

7.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

7.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

7.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात विद्यार्थी -

- भारत में सिविल सेवाओं के सवरूप को जान पाएंगे ;
- भारत में सिविल सेवाओं के लिए आचार संहिता और आचरण संहिता को जान पाएंगे ;
- भारत में सिविल सेवाओं के लिए आचार संहिता और आचरण संहिता के महत्व को जान पायेंगें ;

7.2-परिचय (Introduction)

आचार संहिता और आचरण संहिता दोनों शब्द प्रशासनिक और नैतिक संदर्भ में उपयोग किए जाते हैं, लेकिन इन दोनों के बीच सूक्ष्म अंतर है। इनका मुख्य उद्देश्य लोक सेवकों, संगठनों, या व्यक्तियों के व्यवहार को दिशा और मर्यादा प्रदान करना है।आचार संहिता (Code of Ethics) एक व्यापक सिद्धांत और दिशानिर्देशों का समूह है, जो यह बताता है कि किसी संगठन, संस्था, या व्यक्ति को क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। यह मुख्य रूप से नैतिक मूल्यों और आदर्शों पर आधारित होती है। यह सामान्य और व्यापक दिशानिर्देश है।यह सही और गलत में भेद बताता है और नैतिक मूल्यों को बढ़ावा देता है।इसका आधार नैतिकता (Ethics) और आदर्शवाद होता है।आचार संहिता में कठोर नियम नहीं होते, बल्कि यह प्रेरक (Advisory) होती है।जैसे सरकारी कर्मचारियों के लिए निष्पक्षता और ईमानदारी का पालन करना।किसी कंपनी के लिए पर्यावरण संरक्षण की प्रतिबद्धता।सार्वजनिक जीवन में सत्यनिष्ठा और पारदर्शिता बनाए रखना।आचरण संहिता (Code of Conduct)आचरण संहिता वह नियमों और विनियमों (Rules and Regulations) का समूह है, जो किसी संगठन, संस्था या व्यक्ति के व्यवहार को नियंत्रित करता है। यह व्यवहारगत अनुशासन को सुनिश्चित करता है।यह विशिष्ट और व्यावहारिक नियमों का समूह होता है।इसका उदेश्य किसी संगठन या संस्था में अनुशासन और मर्यादा बनाए रखनाहै ।यह कानूनी प्रावधानों और औपचारिक नियमों पर आधारित होता है। यह अनिवार्य (Mandatory) होती है और उल्लंघन करने पर दंडात्मक कार्रवाई हो सकती है।आचार संहिता आदर्शवादी और नैतिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है और बताती है कि हमें क्या करना चाहिए।आचरण संहिता व्यावहारिक नियमों का समूह है, जो

स्पष्ट रूप से यह निर्धारित करता है कि हमें क्या करना है और क्या नहीं करना है।लोक प्रशासन और संगठनों में इन दोनों का पालन अनिवार्य है ताकि नैतिकता, अनुशासन, और कार्यकुशलता को सुनिश्चित किया जा सके।

7.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

7.3.1.आचार संहिता का अर्थ एवं विशेषताएँ (Meaning and Characteristics of Code of Conduct)

प्रशासनिक सेवा में कार्यरत कर्मचारियों व अधिकारियों को ऐसी नियमावली का पालन करना होता है जो कि प्रशासनिक सेवा हेतु अनिवार्य होती है। नियमों के इस संकलन को ही 'आचार संहिता' कहा जाता है। यह आचार संहिता ही कर्मचारियों व अधिकारियों को यह ज्ञान कराती है कि उनको किन परिस्थतियों में किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए? अपने कार्यस्थल पर किस प्रकार का दृष्टिकोण अपनाना चाहिए-? आचारसंहिता के - माध्यम से कर्मचारी संज्ञा व अनुशासित रहते हैं। शासकीय कर्मचारियों को अपना व्यवहार इसलिए भी अनुशासित । के जनता उनकेरखना चाहिए क्यो व्यवहार का अनुकरण करती है। आचार संहिता के द्वारा अधिकारियों को मनमानी करने से रोका जा सकता है।आचार संहिता की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

- आचार संहिता देश में प्रचलित विधि से ऊपर होती है। कई बार नागरिक अधिकारों को भी सीमित कर देती है।
- आचार संहिता के नियमों का पालन करना नैसर्गिक अधिकारों से वंचित करना नहीं है।
- आचार संहिता के अनुसार प्रत्येक कर्मचारी को संविधान के प्रति तथा अपने उच्च अधिकारी के प्रति निष्ठा की शपथ लेनी होती है।
- व्यक्तिगत स्वार्थ व साम्प्रदायिकता से दूर रहते हुए पूर्ण ईमानदारी से कार्य करना होता है।
- ऐसे कार्यों से बचना होता है जिनसे प्रशासनिक सेवा की प्रतिष्ठा को धक्का लगे।
- व्यक्तिगत व्यापार व राजनीति से दूर रहना होता है।
- आचरण संहिता अर्थ का सार्वजनिक अधिकारियों के लिये अपने कर्तव्यों को पूरा करने के लिये सामान्य नियम हैं जो कि उनके व्यवहारों या निर्णयों का मार्गदर्शन करते हैं।
- यह लोक सेवकों के लिये निर्धारित सामाजिक व्यवहारों, नियमों एवं उत्तरदायित्वों के समूह को संदर्भित करता है।
- यह सही निर्णय लेने, विशेष रूप से ऐसे मामलों में जहाँ वे लोक हित को बनाए रखने हेतु सशंकित होते हैं, में एक प्रमुख उपकरण है।

- यह लोक सेवकों के कुछ विशेष व्यवहारों, जैसे संघर्ष के हितों, रिश्वत तथा अनुचित कृत्यों आदि को रोकने हेतु परिकल्पित एक व्यापक रूपरेखा है।
- यह कर्मचारियों के लिये क्या करें व क्या न करें हेतु निर्देशित करती है।
- इसे नैतिक संहिता के पूरक के रूप में देखा जाता है।

7.3.2.भारत में आचार-संहिता (Code of Conduct in India)

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत् राष्ट्रपति को लोक सेवको के लिए आवश्यक नियम बनाने का अधिकार प्राप्त है। यद्यपि भारत में लोक सेवकों के कृत्यों को परखने के लिए पृथक से कोई नीतिशास्त्र विकसित नही है तथापि अखिल भारतीय सेवाओं तथा केन्द्रीय एवं प्रांतीय लोक सेवाओं के लिए आचरण नियम बने हुए हैं। इनमें से महत्वपूर्ण ये है –

- अखिल भारतीय सेवा आचरण नियम, 1954
- केन्द्रीय सेवा आचरण नियम, 1955
- रेलवे सेवा आचरण नियम, 1956

इनके अतिरिक्त नियम और निर्देश भी हैं जिनका सरोकार लोकसेवकों से संबंधित विशेष परिस्थितियों से हैं। इन सब नियमों में लोक सेवको से संबंधित सामान्य आचार नियम निम्नलिखित है:

- **कर्तव्य पालन:** आवरण नियमो का अनुसार लोकसेवको को अपने कर्तव्य का पालन पूर्णनिष्ठा एव ईमानदारी से करना चाहिए।
- **राजनीतिक प्रतिबद्धता के स्थान पर राजनीतिक तटस्थता:** आचरण नियमों में लोक सेवकों से यह अपेक्षा की जाती है वे अपनी कार्यशैली में पूरी तरह से राजनीतिक और सामाजिक रुप से तटस्थ बने रहें। उन्हें राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने, चंदा देने, किसी भी दल की सदस्यता ग्रहण करने तथा किसी भी दल का प्रसार-प्रचार करने संबंधी कार्यों पर प्रतिबंध है।
- **संपति संबंधी नियम:** प्रावधान है कि प्रत्येक लोक सेवक को सरकारी सेवा में आने से पूर्व अपनी चल-अचल संपत्ति का विवरण सरकार को देना चाहिए। तत्पश्चात् प्रत्येक वर्ष अर्जित संपति की सूचना सरकार समय-समय पर मांगती रहती है। इसके अतिरिक्त निर्धारित सीमा से अधिक संपत्ति का लेन-देन के लिए सरकार की पूर्व अनुमति लेना आवश्यक है।

- **सार्वजनिक आलोचना पर प्रतिबंध :** आचार संहिता के अनुसार लोक सेवक सरकार की सार्वजनिक रुप से आलोचना नहीं कर सकते है। उन्हे अपने कार्यक्षेत्र के बारे में केवल मीडिया और प्रेस में अधिकृत होने पर औपचारिक वक्तव्य देने का अधिकार है।
- **निजी व्यापार का निषेध :** कोई भी लोक सेवक, सरकार की पूर्व अनुमति लिए बिना प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से किसी व्यापार या व्यवसाय में कोई भाग नहीं ले सकता है। वह केवल किसी सामाजिक अथवा जनकल्याणकारी स्वरूप रखने वाली संस्था में अवैतनिक रूप से साहित्यिक, कलात्मक या वैज्ञानिक ढंग का कार्य इसी शर्त परकर सकता है कि इससे उसके सरकारी कार्यों को करने पर किसी प्रकार की कोई कमी नहीं आएगी।
- **सट्टेबाजी का निषेध :** कोई भी लोक सेवक और उसके परिवार के सदस्य सट्टेबाजी नहीं कर सकते और न ही सरकार की स्वीकृति के बिना रूपया उधार दे सकते हैं।
- **राजनीतिक चंदा देने एवं उपहार लेने का निषेध :** लोक सेवक, राजनीति उद्देश्य से संग्रह किये जाने वाले कोष में चंदा नही दे सकते वहीं आचार संहिता के अनुसार लोक सेवक एक निर्धारित सीमा से अधिक भेंट या उपहार ग्रहण नही कर सकता।
- **दहेज लेने एवं दूसरे विवाह का निषेध :** कोई भी लोक सेवक को अपने विवाह में दहेज माँगने या स्वीकार करने का आचार संहिता में निषेध हैं। और न ही कोई लोक सेवक अपनी पहली पत्नी के जीवित रहते हुए दूसरा विवाह कर सकता है।
- **धर्म निरपेक्ष आचरण :** सरकार कर्मचारियों को अपने व्यक्तिगत जीवन में किसी भी धर्म को अपनाए जाने तथा उसका अनुसरण करने की स्वतंत्रता है परन्तु उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वे किसी ऐसे संगठन अथवा आंदोलन जिसके कार्य कलापों को साम्प्रदायिक प्रकृति का समझा जा सकता हो, में भाग लेते समय बहुत ही सावधानी से काम लेंगे।
- **चौदह वर्ष से कम आयु के बच्चों को नौकरी में रखे जाने की मनाही :** सरकारी कर्मचारियों द्वारा 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को नौकरी में रखे जाने की मनाही के बारे में केन्द्रीय सिविल सेवा (आचरण) नियमावली, 1964 में एक नया प्रावधान कर दिया गया है।

7.4 .पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

7.4.1.लोक सेवक के कर्तव्य, दायित्व एवं अपेक्षाएं (Duties, responsibilities and expectations of a public servant)

- कानूनी और प्रशासनिक नियमों का पालनःलोकसेवकों के लिए यह आवश्यक है कि वे अपने संबंधित विभागों के सभी कानूनी और प्रशासनिक नियमों का पालन करें। उन्हें संविधान, सेवा नियमावली और विभागीय दिशानिर्देशों का गहन अध्ययन करना चाहिए और अपने कार्यों को उनके अनुसार संपादित करना चाहिए।
- लोकसेवकों के लिए एक स्पष्ट आचार संहिता होती है, जिसमें उनके कार्यों और आचरण के मानदंड निर्धारित होते हैं। इस आचार संहिता का पालन करते हुए उन्हें अपने व्यक्तिगत और प्रोफशनल जीवन में उच्चतम नैतिक मानकों का पालन करना चाहिए।
- समय की पाबंदी किसी भी पेशेवर व्यक्ति की सफलता का मूलमंत्र है। लोकसेवकों को निर्धारित समय पर अपने कार्यस्थल पर उपस्थित होना चाहिए और अपने कार्य को समय पर पूरा करना चाहिए।
- नियमित उपस्थिति न केवल उनके कार्य की गुणवत्ता को बढ़ाती है, बल्कि उनकी प्रतिष्ठा और विश्वसनीयता को भी बनाए रखती है। बिना उचित कारण और पूर्व अनुमति के अनुपस्थिति अनुशासनात्मक कार्रवाई का कारण बन सकती है।
- लोकसेवकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने कार्य में पूर्ण ईमानदारी और निष्पक्षता का पालन करें। उन्हें किसी भी प्रकार की अनैतिक गतिविधियों और भ्रष्टाचार से दूर रहना चाहिए।
- पारदर्शिता लोक सेवा का महत्वपूर्ण अंग है। लोकसेवकों को अपने कार्यों और निर्णयों में पारदर्शिता बनाए रखनी चाहिए, जिससे जनता का विश्वास उन पर बना रहे।
- लोकसेवकों को अपने कार्य से संबंधित महत्वपूर्ण गोपनीय दस्तावेजों और जानकारियों की गोपनीयता बनाए रखनी चाहिए। इन दस्तावेजों का दुरुपयोग या अनुचित प्रकटीकरण गंभीर दुराचरण माना जाता है और इसके परिणामस्वरूप कड़ी कार्रवाई हो सकती है।
- लोकसेवकों को किसी भी गोपनीय जानकारी को साझा करने में अत्यधिक सतर्कता बरतनी चाहिए और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि यह जानकारी केवल अधिकृत व्यक्तियों तक ही पहुंचे।
- लोकसेवकों का मुख्य उद्देश्य जनता की सेवा करना है। उन्हें जनता की समस्याओं को सुनना और उनका समाधान करना चाहिए। उनकी सेवा का उद्देश्य नागरिकों के जीवन को सुगम और सुरक्षित बनाना होना चाहिए।

- लोकसेवकों को जनता के प्रति संवेदनशील रहना चाहिए और उनके साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। उन्हें जनता की जरूरतों और समस्याओं को लोकसेवकों को जनता के प्रति संवेदनशील रहना चाहिए और उनके साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। उन्हें जाता की जरूरतों और समस्याओं को समझना चाहिए और उनका समाधान करने का प्रयास करना चाहिए।
- लोकसेवकों को हर कार्य पूर्ण उत्तरदायित्व की भावना से करना चाहिए। आपकी एक लापरवाही नागरिकों के जीवन पर विपरित प्रभाव डाल सकती है।
- लोकसेवकों को अपने कार्य के प्रति पूर्ण प्रतिबद्धता रखनी चाहिए। उन्हें अपने कार्य को उच्चतम गुणवत्ता के साथ संपादित करना चाहिए और अपने दायित्वों का ईमानदारी से निर्वाह करना चाहिए।
- लोकसेवकों के लिए यह आवश्यक है कि वे अपने कार्य को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए निरंतर प्रशिक्षण और विकास कार्यक्रमों में भाग लें। इससे वे नई तकनीकों और कार्यप्रणालियों से परिचित हो सकेंगे और अपने कार्य में सुधार कर सकेंगे।
- लोकसेवकों को अपने व्यक्तिगत और प्रोफेशनल विकास के लिए प्रयास करना चाहिए। उन्हें अपने कौशल और ज्ञान को निरंतर अद्यतन कर चाहिए, जिससे वे अपने कार्य को अधिक प्रभावी ढंग से निभा सकें।
- लोक सेवा एक सहयोगात्मक प्रयास है। लोकसेवकों को अपने सहकर्मियों और अन्य विभागों के साथ मिलकर कार्य करना चाहिए। उन्हें टीम वर्क का पालन करना चाहिए और अपने सहयोगियों के साथ सहयोगपूर्ण संबंध बनाए रखना चाहिए।
- लोकसेवकों को अपने सहकर्मियों के प्रति सम्मानजनक व्यवहार करना चाहिए। उन्हें अपने सहयोगियों के साथ मधुर संबंध बनाए रखना चाहिए और उनके साथ मिलकर कार्य करना चाहिए।
- अनुशासन किसी भी संगठन की सफलता का मूलमंत्र है। लोकसेवकों को कार्यस्थल पर अनुशासन का पालन करना चाहिए। उन्हें अपने वरिष्ठ अधिकारियों के आदेशों का पालन करना चाहिए और अपने कार्यों को निर्धारित समय सीमा में पूरा करना चाहिए।लोकसेवकों को अपने कार्यस्थल पर और जनता के साथ विनम्र व्यवहार करना चाहिए। विनम्रता न केवल उनके व्यक्तिगत और प्रोफेशनल संबंधों को सुधारती है, बल्कि उनकी प्रतिष्ठा को भी बढ़ाती है।
- लोकसेवकों को सार्वजनिक संपत्ति और संसाधनों की रक्षा करनी चाहिए। उन्हें इनका सही और प्रभावी उपयोग सुनिश्चित करना चाहिए और किसी भी प्रकार की बर्बादी से बचना चाहिए।

- लोकसेवकों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वे सार्वजनिक संपत्ति और संसाधनों का उचित उपयोग करें और उन्हें किसी भी प्रकार के दुरुपयोग से बचाएं।
- तकनीकी क्षेत्र में तेजी से बदलाव हो रहे हैं, और इन बदलावों के साथ अद्यतन रहना आज के समय की आवश्यकता है।निरंतर अपने ज्ञान और कौशल को नवीनतम तकनीकी प्रगति के अनुसार अद्यतन करते रहें। नई तकनीकों, उपकरणों और प्रथाओं के बारे में सीखना न केवल आपके व्यक्तिगत और पेशेवर विकास के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि यह हमारे संगठन की सफलता में भी अहम भूमिका निभाएगा।
- कानूनों, नियमों, प्रक्रियाओं, टेक्नोलोजी एवं हितबद्ध लोगों की अपेक्षाओं में हो रहे नवीनतम परिवर्तनों और प्रगति पर नज़र रखें और उनसे संबंधित जानकारियों को प्राप्त करें।
- प्रत्येक लोक सेवक का यह परम कर्तव्य है कि वह महिलाओं से सम्मानपूर्वक व्यवहार करेगा तथा इसे बढ़ावा देने के लिए अग्रदूत की भूमिका निभायेगा।
- प्रत्येक लोक सेवक का यह दायित्व है कि वह उच्चतर सिविक सेन्स विकसित करे, वृद्धजन एवं वंचित तबके के प्रति विशेष संवेदनशीलता रखें। वृक्षारोपण व जल संचयन को बढ़ावा देवें, पानी-बिजली अपव्यय एवं प्लास्टिक उपयोग को रोके। सड़क सुरक्षा नियमों का पालन करें एवं सर्वत्र स्वच्छता को बढ़ावा देवें। दिव्यांगजन के प्रति विशेष सहयोग का भाव रखें। नशे की प्रवृत्ति से दूर रहे। पशु-पक्षियों के प्रति करूणा का भाव रखे।

7.4.2.आचार संहिता का विकास (Development of code of conduct)

कैबिनेट सचिव की अध्यक्षता में, 1996 में एक मुख्य सचिव सम्मेलन आयोजित किया गया था और धर्म-निपेक्षता, समानता, निष्पक्षता, समावेशी विकास और सामाजिक न्याय जैसे मूल्यों के आधार पर नैतिकता के एक चार्टर और एक सिविल सेवा कोड को अंतिम रूप प्रदान किया गया था। इस सम्मेलन ने दोहराया कि लोक सेवकों की निष्ठा केवल जनता की सेवा और कानून के शासन के लिए होनी चाहिए। 1997 में, पहले न्यायपालिका और फिर सिविल सेवकों के एक समूह ने सेवा वितरण में अखंडता, व्यावसायिकता, कानून के शासन, ईमानदारी, निष्पक्ष नेतृत्व, पारदर्शिता, कुशलता और प्रभावशीलता जैसे मूल्यों को बहाल करने के लिए संकल्पों को अपनाया। ब्रिटेन में, सार्वजनिक या लोक जीवन में मानकों की समिति को कभी-कभी इसके पहले अध्यक्ष लॉर्ड नोलन (Lord Nolan) के पश्चात नोलन समिति के रूप में संदर्भित किया जाता था। लोक कार्यालयों को साफ करने के लिए नीतिगत उपायों और संगठनात्मक सुधारों पर सिफारिश करने के लिए व्यापक संदर्भ के साथ एक स्थायी निकाय के रूप में

समिति का गठन किया गया था। सरकारी कार्यालयों, संसद, सिविल सेवा और उच्च- स्तरीय वित्तीय संस्थानों को अधिक पारदर्शी और जवाबदेह बनाने के लिए एक व्यापक आचार संहिता के सिद्धांतों का सुझाव दिया गया था। 1997 और 2013 में, समिति के संदर्भ की शर्तों का विस्तार किया गया। नोलन समिति द्वारा 1995 में प्रकाशित पहली रिपोर्ट ने सार्वजनिक जीवन के सात सिद्धांतों को लोक जीवन को रेखांकित करने वाले आचरण के सामान्य सिद्धांतों के पुनक्रथन के रूप में तैयार किया, और कहा किः सभी सार्वजनिक निकायों को सात सिद्धांतों को शामिल करते हुए आचार संहिता तैयार करनी चाहिए। मानकों को बनाए रखने के लिए आंतरिक प्रणालियों को स्वतंत्र जांच द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए: लोक निकायों में आचरण के मानकों को बढ़ावा देने और सुद्ध करने के लिए और अधिक करने की आवश्यकता है, विशेष रूप से मार्गदर्शन और प्रशिक्षण के माध्यम से, जिसमें प्रेरण प्रशिक्षण शामिल हैं। लोक जीवन के ये सात सिद्धांत जो मंत्री स्तरीय संहिता में शामिल हैं. जिन्हें नोलन सिद्धांत के नाम से जाना जाता है, इस प्रकार हैं।

- निःस्वार्थ भाव (Selflessness): सार्वजनिक या लोक पद धारकों को केवल जनहित में ही कार्य करना चाहिए। उन्हें स्वयं अपने, अपने परिवार या अपने दोस्तों के लिए वित्तीय या अन्य लाभ प्राप्त करने के लिए कार्य नहीं करना चाहिए।
- सत्यनिष्ठा (Integrity): सार्वजनिक पद के धारकों को बाहरी व्यक्तियों या संगठनों के लिए किसी भी वित्तीय या अन्य दायित्व के तहत स्वयं को बाधित हरखना चाहिए। यह उन्हें अपने आधिकारिक कर्तव्यों के प्रदर्शन में प्रभावित करने की कोशिश कर सकते हैं।
- निष्पक्षता (Objectivity): सार्वजनिक व्यवसाय करने में, जिसमें सार्वजनिककनियुक्तियां करना,अनुबंध देना या पुरस्कार और लाभों के लिए व्यक्तियों की सिफारिश करना शामिल है, सार्वजनिक पद के धारकों को वस्तुनिष्ठ मानदंडों का चुनाव करना चाहिए।
- जवाबदेही (Accountability): सार्वजनिक पद के धारक अपने निणर्यों औरकार्यों के लिए जनता के प्रति जवाबदेह होते हैं। उन्हें अपने कार्यालय में उपयुक्त जांच के लिए स्वयं को प्रस्तुत करना चाहिए।
- खुलापन (Openness): सार्वजनिक पद के लिए धारकों को अपने सभी निर्णयों और कार्यों के बारे में यथासंभव विवृत होना चाहिए। उन्हें अपने निर्णयों के कारण बताने चाहिए, और सूचना को तभी प्रतिबंधित करना चाहिए जब व्यापक जनहित स्पष्ट रूप से मांग करे।

- ईमानदारी (Honesty): सार्वजनिक पद के धारकों का कर्तव्य है कि वे अपनेसार्वजनिक या लोक कर्तव्यों से संबंधित किसी भी निजी हितों की घोषणा करें, और सार्वजनिक हितों की रक्षा करने वाले तरीके से उत्पन्न होने वाले किसी भी संघर्ष को हल करने के लिए उचित कदम उठाएं।
- नेतृत्त्व (Leadership): सार्वजनिक पद के धारकों को नेतृत्व और उदाहरण द्वारा इन सिद्धांतों को बढ़ावा देना चाहिए और इनका समर्थन करना चाहिए।

भारत सरकार ने एस. वीरप्पा मोइली (Veerappa Moily) की अध्यक्षता में 31 अगस्त 2005 को दूसरा एआरसी (प्रशासनिक सुधार आयोग) आयोग नियुक्त किया। आयोग ने अपनी चौथी रिपोर्ट, एथिक्स इन गवर्नेस (Ethics in Governance) में राजनीति, न्यायपालिका और प्रशासन में अधिक पारदर्शिता, जवाबदेही और नैतिक व्यवहार की सिफारिश की। भ्रष्टाचार नैतिकता की विफलता की एक महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति है। परिणामस्वरूप, आयोग ने भ्रष्टाचार को कम करने या समाप्त करने के उपाय का भी सुझाव दिया। ए आर सी (ARC) की व्यापक सिफारिशों में चुनावों का आंशिक राज्य वित्त पोषण, दलबदल विरोधी कानून को कड़ा करना और मंत्रियों, विधायिकाओं, न्यायपालिका और सिविल सेवकों के लिए आचार संहिता को अपनाना शामिल है। भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के लिए, यह प्रस्ताव किया गया है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के प्रावधानों को भ्रष्ट लोक सेरकों को हर्जाने का भुगतान करने और अवैध रूप से अर्जित संपत्ति की जब्ती के लिए उत्तरदायी बनाकर मजबूर किया जाना चाहिए। आयोग ने भ्रष्टाचार के मामलों में तेजी से सुनवाई करने का प्रस्ताव दिया और मुख्यमंत्रियों, मंत्रियों, सांसदों और विधायकों सहित उच्च सार्वजनिक पदाधिकारियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों को देखने के लिए शक्तियों के साथ राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय स्तर पर लोकपाल / प्रशासनिक शिकायत जांच अधिकारीयों के मजबूत संस्थानों की स्थापना का भी प्रस्ताव दिया। सिविल सेवकों के लिए आचार संहिता की सिफारिश करते हुए, दूसरा ए आर सी अवलोकन करता है: 'लोक सेवा मूल्य जिनके प्रति सभी लोक सेवकों को आकांक्षा करनी चाहिए, उन्हें परिभाषित किया जाना चाहिए और सरकार और पैरास्टेटल संगठनों और सभी स्तरों पर लागू किया जाना चाहिए। कदाचार के रूप में, सजा को आमंत्रित करने वाले मूल्यों के किसी भी उल्लंघन का समाधान किया जाना चाहिए।द्वितीय ए आर सी ने सिफारिश की कि संविधान के प्रति प्रतिवद्धता के अलावा, निम्नलिखित मूल्य शामिल होने बाहिए।

- सत्यनिष्ठाः अखंडता और आचरण के उच्चतम मानकों का पालन,
- निष्पक्षता और गैर-पक्षपातपूर्णता (Impartiality);

- नागरिकों की चिंताओं और जनता की भलाई के लिए प्रतिबद्धताः तथा
- समाज के असुरक्षित और कमजोर वर्गों के लिए सहानुभूति।

आयोग ने भारत में सिविल सेवकों के लिए आचार संहिता में निम्नलिखित सिद्धांतों को शामिल करने का भी सुझाव दियाः

- सत्यनिष्ठा (Integrity): सिविल सेवकों को अपने आधिकारिक निर्णय लेने में पूरी तरह से सार्वजनिक हित द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए, न कि अपने, अपने परिवार या अपने दोस्तों के संबंध में वित्तीय या अन्य विचारों से।
- निष्पक्षता): सिविल सेवकों को अपने आधिकारिक कार्यों को करने में, जिसमें खरीद, भर्ती, सेवाओं की डिलीवरी आदि जैसे कार्य शामिल हैं, को केवल योग्यता के आधार पर निर्णय लेना चाहिए।
- लोक सेवा के प्रति प्रतिबद्धता:सिविल सेवकों को निष्पक्ष, प्रभावी, निष्पक्ष और विनम्र तरीके से सेवाएं देनी चाहिए।
- अनावृत जवाबदेही (Open Accountability Service): सिविल सेवक अपने निर्णयों और कार्यों के लिए जवाबदेह होते हैं, और उन्हें इस उद्देश्य के लिए उपयुक्त जांच के अधीन प्रस्तुत होने के लिए तैयार रहना चाहिए।
- कर्तव्य के प्रति समर्पण (Devotion to Duty): सिविल सेवकों को हर समय अपने कर्तव्यों और ज़िम्मदारियों के प्रति पूर्ण और अटल भक्ति बनाए रखनी चाहिए।
- अनुकरणीय व्यवहार: सिविल सेवकों को जनता केसभी सदस्यों के साथ सम्मान और शिष्टाचार के साथ व्यवहार करना चाहिए। उन्हें हर समय इस तरह से व्यवहार करना चाहिए जो सिविल सेवाओं की समृद्ध परंपराओं को बनाए रखता है ।

मूल्यों और लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए, सिविल सेवकों को आचरण और व्यवहार के नैतिक मापदंडों का आभ्यास करने की आवश्यकता होती है। एक नैतिक प्रस्ताव के उपयोगी होने के लिए क) संगठनात्मक उद्देश्यों के रूप में लिए गए मूल्य निश्चित होने चाहिए, ताकि किसी स्थिति में उनकी प्राप्ति की डिग्री तक पहुंचा जा सके और ख) इस संभावना के बारे में निर्णय लेना संभव होना चाहिए कि विशेष कार्य लागू करेंगे । सुशासन के लिए ओ ई सी डी द्वारा विकसित आठ सूत्र य निम्न हैं:

- नैतिक शासन के लिए राजनीतिक प्रतिबद्धता

- एक कुशल जवाबदेही तंत्र विकसित करना;
- प्रभावी कानूनी ढांचे का निर्माणः
- व्यावहारिक आचार संहिता विकसित करने की आवश्यकता;
- व्यावसायिक समाजीकरण तंत्र (प्रशिक्षण सहित);
- सहायक लोक सेवाओं का निर्माण;
- एक केंद्रीय नैतिकता समन्वयक निकाय की आवश्कताः तथा
- प्रहरी के रूप में कार्य करने में सक्षम, एक ऊर्जावान नागरिक समाज की आवश्यकता ।

सुशासन का तात्पर्य है कि राज्य के मामलों को इस तरह से प्रबंधित करना कि सामग्री और सभी नागरिकों की सामाजिक कल्याण संस्थानों के उचित रूप से संगठित तंत्र प्रणाली के भीतर प्रभावी ढंग से देखभाल की जा सके। इस तरह के समाज निमार्ण के लिए मूल्य महत्वपूर्ण हैं, और यहां नैतिकता की भूमिका आती है, जिससे सामंजस्यपूर्ण सामाजिक विकास को बढ़ावा देना होगा। यह शासन में नैतिकता की मांग करता है। तीसरी दुनिया के देशों में शासन प्रक्रिया कुछ सार्वभौमिक रूप से ग्रस्त हैः लोक सेवा प्रबंधन की वर्तमान विशेषतांए अर्थात उदासीनता, अपवंचन अक्षमता, अवरोधक और गैर-ज़िम्मेदारी। इस संबंध में, ई-श्रीधरन का अवलोकन, जिन्होंने फांउडेशन ऑफ रिस्टारेशन ऑफ नेशनल वैल्यूज़ (एफ आर एन वी) नामक एक संगठन का गठन किया है, जिसके घोषित उद्देश्यों में से एक 'लोक प्रशासन में नैतिक निगरानी' प्रारंभ करना है। यह काफी प्रासंगिक है। भारत सरकारी क्षेत्र उच्च-नैतिक मानकों का दावा नहीं कर सकता। उच्च न्यायालयों ने नौकरशाहों के आचरण पर अत्यधिक आलोचनात्मक टिप्पणियां की हैं, और मीडिया नौकरशाहों की मनमानी, भ्रष्टाचार और अन्य प्रकार के अनुचित आचरण की खबरों से भरा पड़ है। ईमानदार और सही लोक सेवक स्वयं नौकरशाही की निम्न नैतिकता के बारे में चिंतित हैं, और विभिन्न मंचों पर चिंता व्यक्त करते रहे हैं। भारत ने भ्रष्टाचार-रोधी निगरानी संस्था ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल के भ्रष्टाचार धारणा सूचकांक (सी पी आई) में 2012 में 94 से 2020 में 18 तक अपनी रैंकिंग स्थिति में मामूली सुधार प्राप्त किया है। भारत के राष्ट्रपति स्वर्गीय के.आर. नारायणन ने 14 अगस्त 2000 को स्वतंत्रता दिवस की पूर्व संध्या पर अपना भाषण देते हुए, राजनेताओं और अपराधियों के बीच गठजोड़ की आलोचना की, जो देश के वतावरण को प्रदूषित करने की प्रक्रिया में हैं। 'राजनीति के अपराधीकरण और अपराधियों के बीच गठजोड़ की समस्या का अध्ययन करते हुए, वोहरा (एन.एन.) समिति ने अपनी रिपोर्ट (अक्टूबर, 1993) में पाया कि बड़े तस्करी वाले सिंडिकेट, जिनके अंतरराष्ट्रीय संबंध हैं, विभिन्न आर्थिक और वित्तीय क्षेत्रों में फैल गए हैं और हवाला लेनदेन सहित कई गतिविधियों में फंस गए हैं। काले धन का प्रचलन और

दोषपूर्ण समानांतर अर्थव्यवस्था के संचालन से देश के आर्थिक तंतु को गंभीर नुकसान हुआ है। सिंडिकेट ने पर्याप्त वित्तीय और बाहुबल भी हासिल कर लिया है। उन्होंने सभी स्तरों पर सरकारी तंत्र को भ्रष्ट कर दिया है और जांच और अभियोजन एजेंसियों के कार्य को अत्यंत कठिन बनाने के लिए पर्याप्त प्रभावित भी करता है। यहां तक कि न्यायिक व्यवस्था के सदस्य भी माफिया के चंगुल से नहीं छूटे हैं। आधुनिक दुनिया ज्ञान के व्यापक विस्फोट और विज्ञान और प्रौद्योगिकी में अद्भुत उपलब्धियों के साथ मानव मूल्यों में सामान्य गिरावट और उलट के साथ-साथ व्यक्ति और समाज दोनों के नैतिक और मानसिक स्वास्थ्य की खतरनाक गिरावट से चिन्हित है। अपराधों, हिंसा, आतंकवाद और नशीली दवाओं के दुरूपयोग की हालिया घटनाओं ने हमें मानवीय मूल्यों के महत्व के बारे में जागरूक किया है, जिसके बिना मानव जीवन अर्थ खो देता है।यह सर्वविदित है कि केंद्र और राज्यों के कुछ मंत्रियों की अपराधिक पृष्ठभूमि है। संसद और राज्य विधानसभाओं में बड़ी संख्या में आपराधिक तत्वों के प्रवेश के कारण राजनीतिक भ्रष्टाचार तेजी से बढ़ रहा है। यह बताया गया है कि 2014 में नामांकन दाखिल करने के समय उनके खिलाफ 1,581 सांसदों के खिलाफ आपराधिक मामले लंबित थे। सुप्रीम कोर्ट ने 14 दिसंबर 2017 को राजनीति को अपराध से मुक्त करने के उद्देश्य से केंद्र से 1 मार्च 2018 तक 12 विशेष अदालतें स्थापित करने को कहा। आपराधिक आरोपों का सामना कर रहे सांसदों के खिलाफ विशेष रूप से मामलों की सुनवाई करने के लिए। विश्व विकास रिपोर्ट (1999/2000) में वैश्वीकरण की प्रशंसा और आकांक्षाओं को स्वीकार करते हुए विश्व बैंक के अध्यक्ष जेम्स डी. वोल्फ्रेंसोन (James D. Wolfensohn) कहते हैं: विस्तारित बाजारों के लिए नए अवसर लाने और प्रौद्योगिकी और प्रबंधन विशेषज्ञता के प्रसार के लिए वैश्वीकरण की प्रशंसा की जाती है, जो बदले में अधिक उत्पादकता और उच्च जीवन स्तर का वादा करता है। इसके विपरीत, अस्थिरता और अवांछित परिवर्तनों के कारण वैश्वीकरण की आशंका और निंदा की जाती है, उन श्रमिकों के लिए जो आयात से प्रतिस्पर्धा में अपनी नौकरी खोने से डरते हैं, बैंकों और वित्तीय प्रणाली और यहां तक कि पूरे अर्थशास्त्र को जो विदेशी पूजी के प्रवाह से अभिभूत और मदी में ले जाया जा सकता है. और कम से कम नहीं, ग्लोबल कॉमन्स या सामूहिक ग्लोबल धरोहर (Global Commons) के लिए, जिन्हें अपरिवर्तनीय परिवर्तन के साथ कई तरह से खतरा है। 'इस पृष्ठभूमि में, एक व्यावहारिक आचार संहिता विकसित करना समय की मांग है। जब तक आचार संहिता अधिक यथार्थवादी और लागू करने योग्य नहीं होगी, तब तक समस्या बनी रहेगी। नई आचार संहिता में शामिल होना चाहिए:

- हितों के टकराव की पहचान करने वाले मापदंड,
- संघर्ष और और अनिर्णय के मामलों में चर्चा का मार्गदर्शन करने वाली प्राथमिकताएं,
- प्रतिबद्धता, निष्पक्षता, ईमानदारी, न्याय और सेवा और जिम्मेदारियों के निर्धारण के प्रति निष्पक्षता के क्षेत्र;

- प्रशासक के अधिदेश को बिरिभाषित करने के लिए आवश्यकताएं:
- प्रशासनिक प्रक्रियाओं में विभिन्न समूहों की भागीदारी और परामर्श को नियंत्रित करने वाले मानदंड;
- प्रशासकों के भाग लेने वाले समूह द्वारा योगदान की गई जानकारी कि मूल्यांकन और प्रसार के तरीके,
- अनुमेय गोपनीयता की सीमा की परिभाषा,
- बाहरी दबावों के मामलों में प्रशासकों के दायित्वों की सीमा, विशेष रूप से राजनीतिक पैतरेबाजी के मामलों मेंप्रदर्शन किए गए कर्तव्यों के संबंध में विभिन्न स्तरों पर जवाबदेही की सीमा
- परिवार और सहकर्मी समूहों के दबाव में मामलों में कर्तव्यों और दायित्वों की सीमा
- निर्णयों और नीतियों के प्रवर्तन और मूल्यांकन को नियंत्रित करने वाले मानदंड
- प्रशासनिक कार्यों के लिए निगरानी तंत्र का स्वरूप जिसमें संसाधन आवंटन और लेखा परीक्षा शामिल होगी;

नागरिक प्रशासन बातचीत के क्षेत्र, इस तरह की बातचीत को नियंत्रित करने वाले मानदंड और उनके लिए निर्धारित सीमाएं; और प्रशासनिक प्रक्रियाओं को नियंत्रित करने वाले नियम, विशेष रूप से भर्ती, प्रशिक्षण और कैरियर के विकास के क्षेत्रों में लचीलेपन और अनुकूलन क्षमता पर विशेष ध्यान देने के साथ यहां तक की सबसे अच्छी आचार संहिता भी प्रभावी नहीं हो सकती हैं, यदि उन्हें विवेकपूर्ण तरीके से लागू नहीं किया जाता है। इस तरह के संहिता अभी भी दिन के उजाले को नहीं देख पाए हैं. क्योंकि राजनेता और नौकरशाह, दोनों हितों के स्पष्ट टकराव के कारण उनसे बचते हैं। नैतिक और मूल्य निर्णय केवल वरीयताएं नहीं हैं और निश्चित रूप से कारणों या औचित्य की आवश्यकता होती है, उन्हें कुछ हद तक तर्कसंगत विश्लेषण के अधीन किया जाना चाहिए। यद्यपि संहिता नैतिक मुद्दों पर राय की आम सहमति को प्रतिबंधित नहीं कर सकती है, यह नैतिक आचरण के संबंध में दिशा और सलाह प्रदान कर सकती है और नीति निर्माण में उनके विकल्पों और विकल्पों का विश्लेषण करने में प्रशासकों की सहायता कर सकती है।

7.4.3.भारत की बदलती प्रशासनिक अवसंरचना में आचरण संहिता की भूमिका (The role of code of conduct in the changing administrative structure of India)

आधुनिक लोकतांत्रिक संरचना में समय के साथ सरकार की भूमिका का उद्विकास हो रहा है। वर्तमान समय में सरकार 'अधिकतम शासन, न्यूनतम सरकार' के दृष्टिकोण की तरफ बढ़ रही है। इस आदर्श की प्राप्ति अधिक सक्षम लोक अधिकारियों की आवश्यकता होती है जो कि आचरण संहिता से निर्देशित होकर आम जनता तक

सेवाओं का कुशल एवं प्रभावी वितरण सुनिश्चित करते हैं। इस प्रकार सार्वजनिक अधिकारियों के लिये दिशानिर्देशों के रूप में आचरण संहिता की उपयोगिता को निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है-

- आचरण संहिता इस संभावना को बढ़ा देती है कि सरकारी कर्मचारी लोक हित में काम करेंगे एवं अनुचित व्यवहारों से बचेंगे।
- यह सिविल सेवकों को अपने व्यक्तिगत लाभों से प्रेरित होकर कार्य करने तथा पद का दुरुपयोग करने से रोकती है।
- यह प्रमुख सरकारी मामलों पर गोपनीयता बनाए रखने तथा निजी हितों पर सार्वजनिक हितों को तरजीह देने में सहायता करती है।
- यह अधिकारियों को व्यावसायिकता के उच्च स्तर को बनाए रखने, कर्त्तव्यों का पालन करने तथा संवैधानिक सर्वोच्चता बनाए रखने में सहायता करती है।
- यह लोक सेवाओं में सत्यनिष्ठा बनाए रखने तथा निष्पक्ष एवं भेदभाव रहित होकर कार्य करने के लिये लोक सेवकों का मार्गदर्शन करती है।

इस प्रकार देखा जाए तो आचरण संहिता लोक सेवकों की व्यावसायिक सीमाओं को निर्धारित कर आम जनता के लिये समर्पण से कार्य करने हेतु प्रेरित करती है जो कि लोक सेवकों में सत्यनिष्ठा, ईमानदारी, निष्पक्षता तथा वस्तुनिष्ठता आदि गुणों का विकास करती है और सरकारी संगठनों व लोक सेवकों की विश्वसनीयता में वृद्धि करती है।

7.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(अ).भारतीय संविधान के किस अनुच्छेद के तहत् राष्ट्रपति को लोक सेवको के लिए आवश्यक नियम बनाने का अधिकार प्राप्त है।

(आ).किस वर्ष में कैबिनेट सचिव की अध्यक्षता में, एक मुख्य सचिव सम्मेलन आयोजित किया गया था ?

(इ).भारत सरकार ने एस. वीरप्पा मोइली (Veerappa Moily) की अध्यक्षता में दूसरा एआरसी (प्रशासनिक सुधार आयोग) आयोग कब नियुक्त किया।

(ई).'राजनीति के अपराधीकरण और अपराधियों के बीच गठजोड़ की समस्या का अध्ययनकिस समिति ने किया था ?

7.6.सारांश (Summary)

भारत में सिविल सेवाओं के लिए आचार संहिता और आचरण संहिता सिविल सेवकों के लिए दिशानिर्देश और नियम निर्धारित करती हैं ताकि वे अपनी सेवाएँ पारदर्शिता, ईमानदारी, और निष्पक्षता के साथ प्रदान करें। ये दोनों अवधारणाएँ अलग-अलग लेकिन परस्पर पूरक हैं।आचार संहिता नैतिक सिद्धांतों का एक व्यापक समूह है, जो सिविल सेवकों के लिए सही और गलत के बीच के अंतर को समझने में मदद करता है। इसका उद्देश्य एक सार्वजनिक सेवक को नैतिक रूप से जिम्मेदार और नागरिकों के प्रति जवाबदेह बनाना है। सिविल सेवक को व्यक्तिगत और व्यावसायिक दोनों रूप से ईमानदारी का पालन करना चाहिए। जाति, धर्म, लिंग, क्षेत्र आदि के आधार पर भेदभाव न करना।हर कार्य का उद्देश्य जनहित को प्राथमिकता देना।कार्यों और निर्णयों के लिए जनता और सरकार के प्रति जवाबदेह रहना। प्रशासनिक प्रक्रियाओं और निर्णयों में पारदर्शिता बनाए रखना। सही कार्य करने के लिए साहस दिखाना, भले ही इसके लिए दबाव का सामना करना पड़े।स्वयं के बजाय जनकल्याण के लिए कार्य करना।आचरण संहिता वे लिखित नियम और विनियम हैं, जो यह निर्धारित करते हैं कि एक सिविल सेवक को व्यवहारिक तौर पर किस प्रकार से कार्य करना चाहिए।

7.7.सूचक शब्द (Key Words)

- **आचार संहिता**-आचार संहिता नैतिक सिद्धांतों का एक व्यापक समूह है, जो सिविल सेवकों के लिए सही और गलत के बीच के अंतर को समझने में मदद करता है। इसका उद्देश्य एक सार्वजनिक सेवक को नैतिक रूप से जिम्मेदार और नागरिकों के प्रति जवाबदेह बनाना है।
- **आचरण संहिता**-आचरण संहिता वे लिखित नियम और विनियम हैं, जो यह निर्धारित करते हैं कि एक सिविल सेवक को व्यवहारिक तौर पर किस प्रकार से कार्य करना चाहिए।
- **लोकसेवक**-लोकसेवक का अर्थ है वह व्यक्ति जो जनता की सेवा के लिए सरकार द्वारा नियुक्त किया गया हो। भारत में लोकसेवक मुख्य रूप से सरकारी कर्मचारी होते हैं, जो प्रशासनिक, विधायी, न्यायिक और अन्य सार्वजनिक सेवाओं के माध्यम से जनता के हित में काम करते हैं।
- **सिविल सेवा**-सिविल सेवा एक व्यवस्था है जिसके तहत सरकारी कार्यों को निष्पादित करने के लिए योग्य और कुशल अधिकारियों की नियुक्ति की जाती है। ये अधिकारी केंद्र और राज्य सरकारों के विभिन्न विभागों, मंत्रालयों और एजेंसियों में कार्य करते हैं और प्रशासनिक कार्यों को संचालित करते हैं।

7.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- भारत में सिविल सेवकों के लिए निर्धारित आचार संहिता का विस्तार से वर्णन करें।
- भारत में सिविल सेवाओं के लिए आचार संहिता के महत्व का वर्णन करें;
- एक सिविल सेवक के कर्तव्यों, जिम्मेदारियों और अपेक्षाओं का वर्णन करें।
- एक सिविल सेवक के लिए नैतिक आचरण के महत्व का वर्णन करें।

7.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(अ).अनुच्छेद 309

(आ).1996 में

(इ).31 अगस्त 2005

(ई).वोहरा (एन.एन.) समिति ने

7.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

- अरोड़ा, आर. के. (**2008)** शासन में नैतिकता: नवीन मुद्दे और उपकरण। रावत: जयपुर
- अरोड़ा, रमेश के. (संपादक) (**2014)** लोक सेवा में नैतिकता, सत्यनिष्ठा और मूल्य। न्यू एज इंटरनेशनल: नई दिल्ली
- सी. भार्गव, आर. (**2006)** भारतीय संविधान की राजनीति और नैतिकता। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस: नई दिल्ली
- डी. चक्रवर्ती, विद्युत (**2016)** भारत में शासन में नैतिकता। रूटलेज: नई दिल्ली
- ई. चतुर्वेदी, टी. एन. (संपादक) (**1996)** सार्वजनिक जीवन में नैतिकता। आईआईपीए: नई दिल्ली
- एफ. गांधी, महाथिरिम (**2009)** हिंद स्वराज। राजपाल एंड संस: दिल्ली
- जी. गोडबोले, एम. (**2003)** सार्वजनिक जवाबदेही और पारदर्शिता: सुशासन के आवश्यक तत्व। ओरिएंट लॉन्गमैन: नई दिल्ली
- एच. हूजा, आर. (**2008)** भ्रष्टाचार, नैतिकता और जवाबदेही: एक प्रशासक द्वारा निबंध। आईआईपीए: नई दिल्ली

आई. माथुर, बी. पी. (**2014)** शासन के लिए नैतिकता: सार्वजनिक सेवाओं का पुनर्निर्माण। रूटलेज: नई दिल्ली

Subject : Public Administration -Administrative ethics in governance	
Course Code : PUBA 302	**Author :** Dr. Parveen sharma
Lesson No. : 8	**Vetter :**

भ्रष्टाचार-कारण और उपाय,भारत में भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए संस्थागत व्यवस्था: सीवीसी, सीबीआई, लोकपाल और लोकायुक्त

Corruption- Causes and Remedies, Institutional Arrangements to Fight Corruption in India: CVC, CBI, Lokpal and Lokayuktas

अध्याय की सरंचना

8.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

8-2-परिचय (Introduction)

8.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

8.3.1. भ्रष्टाचार के प्रमुख कारण (Main causes of corruption)

8.3.2.भ्रष्टाचार का प्रभाव (Effects of corruption)

8.3.3.भ्रष्टाचार को रोकने हेतु प्रयास (Efforts to curb corruption)

8.4 .पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

8.4.1.केन्द्रीय सतर्कता आयोग (Central Vigilance Commission)

8.4.2.केंद्रीय जांच ब्यूरो (Central Bureau of Investigation)

8.4.3.लोकपाल और लोकायुक्त (Lokpal and Lokayukta)

8.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

8.6.सारांश (Summary)

8-7.सूचक शब्द (Key Words)

8.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

8.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

8.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

8.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय का अध्ययन करने के बाद विद्यार्थी :

- भ्रष्टाचार के कारणों व उपायों के बारे में जान पाएंगे ;
- भ्रष्टाचार के प्रभावों के बारे में जान पाएंगे ;
- भ्रष्टाचार रोकने के लिए बनी संस्थाओं के बारे में जान पायेंगें ;

8.2.परिचय (Introduction)

भ्रष्टाचार को एक गंभीर एवं जटिल समस्या के रूप में स्वीकार किया जाता है। देश के विकास में भ्रष्टाचार बहुत बड़ी बाधा है। लोक कल्याणकारी राज्य एवं संविधान में उल्लिखित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये भ्रष्टाचार का उन्मूलन अत्यंत आवश्यक है। भ्रष्टाचार का दायरा निरंतर बढ़ता जा रहा है। नित नए सामने आते भ्रष्टाचार के मामले लोकतंत्र को भी गंभीर हानि पहुंचा रहे हैं।भ्रष्टाचार की उपस्थिति किसी भी लोकतंत्र के लिये स्वस्थता का लक्षण नहीं है। वर्तमान समय की अनेक समस्याओं की जड़ भ्रष्टाचार को माना जा सकता है। लोकतंत्र के सशक्तीकरण, आर्थिक उन्नति, चहुंमुखी विकास एवं लोक-कल्याणकारी शासन की स्थापना के लिये भ्रष्टाचार उन्मूलन की अत्यंत आवश्यकता है।भ्रष्टाचार अपने स्वरूप में इतना अधिक व्यापक है कि उसकी कोई एक स्पष्ट, सटीक एवं सुनिश्चित परिभाषा देना संभव नहीं है। भ्रष्टाचार को अनेक प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है भ्रष्टाचार का अर्थ है किसी व्यक्ति, संगठन, या अधिकारी द्वारा अपने अधिकारों, शक्तियों, या जिम्मेदारियों का दुरुपयोग करके निजी लाभ प्राप्त करना। इसमें नैतिक मूल्यों, कानूनों, और ईमानदारी का उल्लंघन किया जाता है।सरल शब्दों में,जब कोई व्यक्ति अपने स्वार्थ के लिए नियमों को तोड़ता है, रिश्वत लेता है, या गलत तरीकों से धन अर्जित करता है, तो वह भ्रष्टाचार कहलाता है।औपचारिक रूप से "भ्रष्टाचार वह कृत्य है जिसमें किसी व्यक्ति को सार्वजनिक या निजी पद पर रहते हुए अपने स्वार्थ के लिए अनुचित लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से नियमों, कानूनों, और नैतिकता का उल्लंघन करना शामिल होता है।" भ्रष्टाचार नैतिकता, ईमानदारी और कानूनों के खिलाफ जाकर व्यक्तिगत लाभ के लिए किसी भी प्रकार का अनुचित आचरण करना है । यह समाज, सरकार, और संगठन में

पारदर्शिता और न्याय की प्रक्रिया को कमजोर करता है।इस प्रकार, भ्रष्टाचार के कई कारण हो सकते हैं जो देश और परिस्थिति पर निर्भर करते हैं।

8.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

8.3.1. भ्रष्टाचार के प्रमुख कारण (Main causes of corruption)

भ्रष्टाचार के कई कारण हो सकते हैं**,** जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं -

- **आर्थिक असमानता और बढ़ती हुई मंहगाई :**आर्थिक असमानता, बढ़ती हुई मंहगाई कम वेतन आदि से लोक सेवक परेशान रहते है। सीमित आय से वे अपनी जरूरतों को पूरा करने में असमर्थता के कारण वे अनैतिक कार्यों के की तरफ प्रेरित होते है
- **पारदर्शिता की कमी** : सरकारी प्रक्रियाओं, निर्णय लेने और सार्वजनिक प्रशासन में **पारदर्शिता** की कमी भ्रष्ट आचरण के लिए उपजाऊ जमीन प्रदान करती है। जब कार्यों और निर्णयों को सार्वजनिक जांच से बचा लिया जाता है, तो अधिकारी कम जोखिम के साथ भ्रष्ट गतिविधियों में संलग्न हो सकते हैं।
- **कमज़ोर संस्थाएँ और अप्रभावी कानूनी ढाँचे:** कानून और विनियमन लागू करने के लिए ज़िम्मेदार भारत की कई संस्थाएँ या तो कमज़ोर हैं या उनमें समझौता हो चुका है। इसमें कानून लागू करने वाली एजेंसियाँ, न्यायपालिका और निगरानी निकाय शामिल हैं। कमज़ोर संस्थाएँ भ्रष्ट व्यक्तियों को जवाबदेह ठहराने में विफल हो सकती हैं और भ्रष्टाचार को बढ़ावा भी दे सकती हैं।भ्रष्ट व्यक्तियों को अपर्याप्त सज़ा मिलने के कारण दंड से मुक्ति की धारणा और अधिक भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे सकती है। जब व्यक्तियों को लगता है कि वे भ्रष्ट आचरण करके बच सकते हैं, तो उनके भ्रष्ट आचरण में शामिल होने की संभावना अधिक होती है।
- **कम वेतन और प्रोत्साहन:** सरकारी अधिकारियों, खास तौर पर निचले दर्जे के पदों पर बैठे लोगों को कभी-कभी कम वेतन दिया जाता है। इससे वे रिश्वतखोरी और अन्य भ्रष्ट गतिविधियों के प्रति अधिक संवेदनशील हो सकते हैं, क्योंकि वे भ्रष्टाचार को अपनी आय बढ़ाने के साधन के रूप में देखते हैं।
- **नौकरशाही लालफीताशाही** : लंबी और जटिल नौकरशाही प्रक्रियाएं और अत्यधिक विनियमन व्यक्तियों और व्यवसायों को प्रक्रियाओं में तेजी लाने या बाधाओं को दूर करने के लिए भ्रष्ट आचरण अपनाने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। काम करने की प्रक्रिया बडी जटिल एवं विलम्बकारी है जिससे लालफीताशाही की प्रवृत्ति का जन्म हुआ है। इस प्रवृत्ति से भारतीय प्रशासन से कार्य करने के लिए 'घूस' जिसे संस्थानम् समिति ने 'शीघ्र काम करने वाला धन' कहा है, को बढ़ावा मिला है। अब यह सामान्य सोच बन चुकी है की कार्य समय पर तभी

संभव है जब उसके लिए रिश्वत दी जाए। भारत का जटिल आर्थिक माहौल, जिसमें विभिन्न लाइसेंस, परमिट और अनुमोदन शामिल हैं, भ्रष्टाचार के अवसर पैदा कर सकता है। इस माहौल से निपटने के लिए व्यवसाय रिश्वत का सहारा ले सकते हैं।

- **राजनीतिक हस्तक्षेप:** प्रशासनिक मामलों में राजनीतिक हस्तक्षेप सरकारी संस्थाओं की स्वायत्तता से समझौता कर सकता है। राजनीतिक नेता निजी या पार्टी के लाभ के लिए अधिकारियों पर भ्रष्ट गतिविधियों में शामिल होने का दबाव डाल सकते हैं।
- **सांस्कृतिक कारक:** कुछ संदर्भों में भ्रष्ट व्यवहार की सांस्कृतिक स्वीकृति हो सकती है, जो भ्रष्टाचार को बढ़ावा देती है। **यह धारणा कि "हर कोई ऐसा करता है"** व्यक्तियों को नैतिक रूप से समझौता किए बिना भ्रष्टाचार में लिप्त होने के लिए प्रेरित कर सकती है।
- व्हिसलब्लोअर सुरक्षा का अभाव: व्हिसलब्लोअर के लिए अपर्याप्त सुरक्षा व्यक्तियों को भ्रष्टाचार की रिपोर्ट करने से रोक सकती है। प्रतिशोध के डर से संभावित व्हिसलब्लोअर चुप हो सकते हैं और भ्रष्टाचार को पनपने का मौका मिल सकता है।
- सामाजिक असमानता: सामाजिक और आर्थिक असमानताएं भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे सकती हैं, क्योंकि धन और शक्ति वाले व्यक्ति अपने प्रभाव का उपयोग विशेषाधिकार प्राप्त करने के लिए कर सकते हैं और बिना किसी परिणाम के भ्रष्ट आचरण में संलग्न हो सकते हैं।
- सिविल सेवाओं का राजनीतिकरण: जब सिविल सेवा के पदों का उपयोग राजनीतिक समर्थन के लिए पुरस्कार के रूप में किया जाता है या रिश्वत के लिए किया जाता है , तो उच्च स्तर के भ्रष्टाचार के अवसर काफी बढ़ जाते हैं।
- **प्रशासनिक विलम्ब:** फाइलों के निपटान में होने वाली देरी भ्रष्टाचार का मूल कारण है, क्योंकि आम नागरिकों को फाइलों के शीघ्र निपटान के लिए दोषी अधिकारियों और प्राधिकारियों को रिश्वत देने के लिए मजबूर किया जाता है।
- **चुनौती रहित सत्ता की औपनिवेशिक विरासत:** ऐसे समाज में जो शक्ति की पूजा करता है, **सार्वजनिक अधिकारियों के लिए नैतिक आचरण से विचलित होना आसान है।**
- **कानून का कमजोर प्रवर्तन:** भ्रष्टाचार की बुराई को रोकने के लिए विभिन्न कानून बनाए गए हैं, लेकिन उनका **कमजोर प्रवर्तन भ्रष्टाचार को रोकने में बाधा के रूप में कार्य कर रहा है ।**

- **नैतिक मूल्यों का हास :** शहरीकरण, पाश्चात्यीकरण एवं भौतिकतावाद के प्रसार से सामाजिक और वैयक्तिक नैतिक्त मूल्यों का ह्रास तेजी से हुआ हैं न केवल भारत अपितु पूरा विश्व जिस प्रकार मूल्य निरपेक्ष दृष्टि से आगे बढ़ रहा है। वहाँ भौतिक उपलब्धि ही सब कुछ है, साधनों की पवित्रता अप्रासंगिक हो गई है। लोक सेवक सीमित आय होने के कारण नैतिक तरीको से यह अर्जित नहीं कर पाते इसलिए अनैतिक तरीकों का सहारा लेते है।
- **सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रश्न :**आज धन सामाजिक प्रतिष्ठा का का कारण है न कि मूल्य । पहले भ्रष्टाचारियों को सामाजिक बहिष्कार का भय रहता था, परन्तु अब भ्रष्टाचारी धन के कारण सामाजिक रूप से प्रतिष्ठा पा लेते है। जिससे ईमानदार बने रहने के लिए लोक सेवा को समाज से प्रेरणा नहीं मिल पाती ।
- **दण्ड का भय नहीं**:भारतीय कानून व्यवस्था की प्रक्रियागत कमियों एवं देरी के कारण भ्रष्टाचारी प्रायः बच जाते है। जिससे दण्ड का भय उन्हें भ्रष्ट होने से नहीं रोक पाता है। अखिल भारतीय सेवाओं का अनु. 311 के तहत मिली संवैधानिक सुरक्षा के कारण भी उनके विरूद्ध कार्यवाही नहीं पाती ।

- **8.3.2.भ्रष्टाचार का प्रभाव (Effects of corruption)**
- **सेवाओं में गुणवत्ता का अभाव** : भ्रष्टाचार वाली व्यवस्था में **सेवा की गुणवत्ता नहीं रहती।**गुणवत्ता की मांग करने के लिए, आपको इसके लिए भुगतान करना पड़ सकता है। यह नगरपालिका, बिजली, राहत निधि के वितरण आदि जैसे कई क्षेत्रों में देखा जाता है।
- **उचित न्याय का अभाव:** न्यायपालिका में भ्रष्टाचार के **कारण अनुचित न्याय होता है** और अंततः पीड़ितों को इसका खामियाजा भुगतना पड़ता है।साक्ष्य के अभाव या यहां तक कि साक्ष्य को मिटा दिए जाने के कारण भी किसी अपराध को **संदेह के लाभ के रूप में साबित किया जा सकता है ।**
- **खराब स्वास्थ्य और स्वच्छता:** जिन देशों में भ्रष्टाचार अधिक है, वहां लोगों में **स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं अधिक देखी जा सकती हैं** । वहां ताजा पीने का पानी, उचित सड़कें, गुणवत्तापूर्ण खाद्यान्न आपूर्ति, दूध में मिलावट आदि नहीं होगी।ये निम्नगुणवत्ता वाली सेवाएं ठेकेदारों और संबंधित अधिकारियों द्वारा पैसा - ए की जाती हैं।बचाने के लि
- **वास्तविक अनुसंधान की विफलता:** व्यक्तियों द्वारा किए जाने वाले अनुसंधान को सरकारी वित्तपोषण की आवश्यकता होती है और वित्तपोषण करने वाली कुछ एजेंसियों के अधिकारी भ्रष्ट होते हैं।ये लोग उन जांचकर्ताओं को अनुसंधान के लिए धनराशि मंजूर करते हैं जो उन्हें रिश्वत देने के लिए तैयार होते हैं।

- **अधिकारियों के प्रति उपेक्षा:** लोग भ्रष्टाचार में लिप्त अधिकारियों और प्रशासनिक व्यवस्था के प्रति उपेक्षा करने लगते हैं, जिससे व्यवस्था के प्रति अविश्वास पैदा होता है।
- **सरकार के प्रति सम्मान की कमी:** राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री जैसे देश के शीर्ष नेता जनता के बीच सम्मान खो देते हैं। सामाजिक जीवन में सम्मान मुख्य मानदंड है।
- **सरकारों में विश्वास और भरोसे की कमी:** लोग अपने विश्वास के आधार पर किसी नेता को वोट देते हैं, लेकिन यदि नेता भ्रष्टाचार में लिप्त पाए जाते हैं, तो लोगों का उन पर विश्वास खत्म हो जाता है और वे अगली बार वोट नहीं देते हैं।
- **भ्रष्टाचार से जुड़े पदों पर जाने से घृणा** : सच्चे, ईमानदार और मेहनती लोगों में भ्रष्ट माने जाने वाले विशेष पदों के प्रति घृणा विकसित हो जाती है।
- **विदेशी निवेश में कमी** : सरकारी निकायों में भ्रष्टाचार के कारण विकासशील देशों से बहुत सारा विदेशी निवेश वापस चला गया है।
- **विकास में विलंब:** किसी अधिकारी को परियोजनाओं या उद्योगों के लिए मंजूरी देने की आवश्यकता होती है, लेकिन वह पैसा कमाने और अन्य गैरकानूनी लाभ प्राप्त करने के लिए प्रक्रिया में देरी करता है।इससे निवेश, उद्योग शुरू होने और विकास में देरी होती है।
- **विकास का अभाव:** बुनियादी ढांचा परियोजनाओं के लिए आवंटित धनराशि अक्सर नौकरशाही की सुस्ती और प्रशासनिक अकुशलता के कारण गँवा दी जाती है, जो निवेशकों के लिए दुविधा का कारण बनती है, जिससे निवेश के मुकाबले लाभ का अनुपात काफी कम हो जाता है।उचित सड़क, पानी और बिजली की कमी के कारण कंपनियां वहां काम शुरू नहीं करना चाहतीं, जिससे उस क्षेत्र की आर्थिक प्रगति में बाधा आती है।

8.3.3.भ्रष्टाचार को रोकने हेतु प्रयास (Efforts to curb corruption)

भारत में प्रशासनिक आचार नियमों की न्यूनता के कारण तथा भ्रष्टाचार की व्याप्ति को ध्यान में रखते हुए निम्न **प्रयास** किया गया।

- भारतीय दंड संहिता, 1860 में ऐसे प्रावधान निर्धारित किए गए हैं जिनकी व्याख्या रिश्वतखोरी और धोखाधड़ी के मामलों के लिए की जा सकती है, जिसमें आपराधिक विश्वासघात और धोखाधड़ी से संबंधित अपराध भी शामिल हैं।

- रौलेण्ड की अध्यक्षता में बंगाल प्रशासन जॉच समिति (1944-45)
- लोक प्रशासन पर ए.डी. गोरवाला की रिपोर्ट (1951)
- आचार्य जे.बी. कृपलानी की अध्यक्षता में रेलवे भ्रष्टाचार जॉच समिति (1953-55)
- भ्रष्टाचार की रोकथाम पर संथानम समिति (1964) समिति ने 1964 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसमें भ्रष्टाचार को समाप्त करने हेतु अनेक सुझाव प्रस्तुत किए जिनमें से महत्वपूर्ण सुझाव दिए कि ,केन्द्र सरकार में एक केन्द्रीय सतर्कता आयोग स्थापित किया जाना चाहिए।सरकारी विधियों, नियमों एवं कार्यप्रणालियों की निरन्तर समीक्षा करते हुए उन्हे सरल एवं स्पष्ट बनाया जाए जिससे अस्पष्टता का फायदा उठाकर लोक सेवकों को अनैतिक कार्य करने का अवसर प्राप्त न हो सके । मंत्रियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार की जाँच करने के लिए एक राष्ट्रीय आयोग होना चाहिए ।सरकारी अधिकारियों के लिए समुचित आवास और पर्याप्त वेतन की व्यवस्था होनी चाहिए, ताकि वे रिश्वत के लोभ से बच सके।फाइलों का निबटारा निश्चिति अवधि के भीतर शीघ्र किया जाना चाहिए ।संविधान की धारा 311 का संशोधन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि भ्रष्टाचार के मामलों में कानूनी कार्यवाही शीघ्रता पूर्वक एवं आसानी से की जा सके ।पदाधिकारियों, विधायकों और मंत्रियों को अपनी निजी सम्पत्ति की घोषणा करनी चाहिए।विभिन्न राजनितिक दलों को व्यापारियों और उद्योगपतियों द्वारा दिए गए दान की जानकारी और हिसाब का लेखा जोखा जनता को देना चाहिए।
- द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (चतुर्थ प्रतिवेदन) **ने** प्रशासन में नैतिकता बनाए रखने हेतु आयोग द्वारा की अनुशंसा की गई की,चुनावों के लिए अवैधानिक तथा अनावश्यक तरीकों से धन की व्यवस्था के स्थान पर आंशिक राज्य वित्त पोषण की योजना को प्रारंभ करन चाहिए ।राजनीतिज्ञों के लिए, सांविधानिक प्रावधानों के तहत नैतिक आचार संहिता की रूप रेखा होना चाहिए।संसद् द्वारा 'नैतिकता आयुक्त कार्यालय' की स्थापना हो जो सभी राज्यों में नैतिक संहिता व आचार संहिता की रूप रेखा बनवाए जिसकी वार्षिक रिपोर्ट सदन में प्रस्तुत की जाए।गंभीर जालसाजी कार्यालय (Serious Fraud Office) की स्थापना हो जो अपराध तथा अभियोजन की जाँच कर सके । संविधान की धारा 310, 311 विलोपित हो।लोकपाल तथा लोकायुक्त कार्यालय सशक्त हो तथा स्थानीय स्तर पर ओम्बुड्समैन कार्यालयों की स्थापना हों।लोकसेवकों, राजनीतिज्ञो में नैतिक संहिता की पालना करने हेतु नागरिको में जागरूकता हो तथा पहल करने वालों को पुरस्कृत किया जाए।अमेरिका की तरह 'फॉल्स क्लेम एक्ट' लागू हो । जिसके तहत नागरिक एवं सामाजिक समूह सरकार के विरूद्ध जालसाजी या नैतिक संहिता का खंडन का दोष पाए

जाने पर कार्यवाही कर सके ।पारदर्शिता को सुनिश्चित करने हेतु सूचना तकनीकी का समुचित उपयोग हो ।ईमानदार लोक सेवकों को संरक्षण मिले।

- **भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988** :में लोक सेवकों द्वारा भ्रष्टाचार के संबंध में तथा भ्रष्टाचार के कृत्य को बढ़ावा देने में शामिल लोगों के लिए दंड का प्रावधान है।
- बेनामी लेनदेन (निषेध) अधिनियम, 1988 :उस व्यक्ति को, जिसने किसी अन्य व्यक्ति के नाम पर संपत्ति अर्जित की है, उस पर अपना दावा करने से रोकता है।
- **धन शोधन निवारण अधिनियम, 2002**:का उद्देश्य धन शोधन की घटनाओं को रोकना तथा भारत में 'अपराध की आय' के उपयोग पर प्रतिबंध लगाना है।
- **सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 :** प्रशासन को पारदर्शी एव जवाबदेह बनाने हेतु भारत सरकार द्वारा सूचना का अधिकार अधिनियम लाया गया। जो 12 अक्टूबर 2005 से सम्पूर्ण भारत में लागू हो गया।
- वस्तुतः शासन में गोपनीयता अनैतिक कार्यों में वृद्धि लाती है। इस अधिनियम से सूचना तक नागरिकों की पहुँच सुनिश्चित हुई। कहना अतिशयोक्ति नही होगी कि प्रशासनिक नैतिकता की स्थापना हेतु यह एक महत्वपूर्ण कदम है।
- **लोक सेवा गारंटी अधिनियम, 2011 :** यह राजस्थान सहित 19 राज्यों में लागू हो चुका है। इसका उद्देश्य आम जनता को राज्य सरकार द्वारा संचालित विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं का लाभ निर्धारित् समय सीमा में सुगमता से उपलब्ध कराना है। राजस्थान में यह 2011 में लागू हुआ।
- **सूचना प्रदाता (व्हिसल ब्लोअर) संरक्षण अधिनियम 2011:** इस अधिनियम का उद्देश्य भ्रष्टाचार के खिलाफ लड. रहे कार्यकर्ताओं को कानूनी सुरक्षा प्रदान करना है। यह विधेयक सिर्फ सरकारी कर्मियो के लिए है। इसका उद्देश्य एक ऐसी नियमित प्रणाली प्रदान करना है जिससे लोक सेवकों और मंत्रियों द्वारा भ्रष्टचार या सत्ता का जानबूझकर दुरुपयोग करने के बारे में जानकारी देने वाले व्यक्तियों को प्रोत्साहित किया जा सके। इस विधेयक के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित है:भ्रष्टाचार की शिकायत करने वाले कर्मियो की पहचान गुप्त रहेगी। जरुरत पडने पर ऐसे लोगों को सुरक्षा प्रदान की जाएगी। भ्रष्टचार की झूठी शिकायत करने वालों के खिलाफ सजा का प्रावधान रखा गया है। न्यायपालिका एवं विशेष सुरक्षा समूह (SPG) को छोडकर सेना, खुफिया एजेंसिया और पुलिस को भी इस कानून के दायरे में लाया गया है। पद के दुरुपयोग को भी भ्रष्टाचार के दायरे में लाया गया

है।पाँच साल तक पुराने मामलों में ही शिकायत दर्ज होगी। इस अधिनियम की अहमियत यह है कि यह सरकारी महकमे में भ्रष्ट लोगो के खिलाफ शिकायतें सामने लाएगा। इससे केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त को मजबूती मिलेगी तथा साथ ही कई कर्मचारी जो डर के कारण चुप रहते थे वे ज्यादा सूचनाऐं सरकार से साझा करेंगें।

- **कंपनी अधिनियम, 2013** कॉर्पोरेट प्रशासन और कॉर्पोरेट क्षेत्र में भ्रष्टाचार और धोखाधड़ी की रोकथाम के लिए प्रावधान करता है। **'धोखाधड़ी' शब्द को** एक व्यापक परिभाषा दी गई है और कंपनी अधिनियम के तहत यह एक आपराधिक अपराध है।
- **2018 के संशोधन ने** लोक सेवकों द्वारा रिश्वत लेने के साथसाथ किसी भी व्यक्ति द्वारा रिश्वत देने को भी - अपराध बना दिया।
- लोकपाल और लोकायुक्त अधिनियम, 2013 यह लोकपाल की स्थापना का (राज्य) और लोकायुक्त (केन्द्र) प्रावधान करता है।वे कार्य करते हैं और कुछ सार्व का "लोकपाल"जनिक पदाधिकारियों के विरुद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों और संबंधित मामलों की जांच करते हैं।
- **केंद्रीय सतर्कता आयोग:** इसका कार्य सतर्कता प्रशासन की देखरेख करना तथा भ्रष्टाचार से संबंधित मामलों में कार्यपालिका को सलाह देना और सहायता प्रदान करना है।
- **दंड विधि अधिनियम (संशोधन), 1952** भारतीय दंड संहिता की धारा 165 के अंतर्गत निर्दिष्ट सजा को मौजूदा दो वर्ष के स्थान पर बढ़ाकर तीन वर्ष कर दिया गया।
- **1964 में संशोधन,**आईपीसी के तहत 'लोक सेवक' की परिभाषा का विस्तार किया गया। 'आपराधिक कदाचार' की परिभाषा का विस्तार किया गया और लोक सेवक की आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक संपत्ति रखने को अपराध बनाया गया।

8.3.4. भ्रष्टाचार रोकने में नैतिकता का महत्व(Importance of ethics in preventing corruption)

- **नैतिक सीमाएँ स्थापित करना:** नैतिक सिद्धांत यह परिभाषित करने के लिए एक रूपरेखा प्रदान करते हैं कि क्या सही है और क्या गलत। भ्रष्टाचार के संदर्भ में, नैतिकता स्पष्ट सीमाएँ निर्धारित करती है जो स्वीकार्य व्यवहार को अनैतिक या भ्रष्ट आचरण से अलग करती है।
- **जवाबदेही को बढ़ावा देना:** नैतिकता की मांग है कि व्यक्ति अपने कार्यों और निर्णयों की जिम्मेदारी लें। जब लोग नैतिक सिद्धांतों द्वारा निर्देशित होते हैं, तो वे अपने कार्यों के लिए पारदर्शी और जवाबदेह होने की

अधिक संभावना रखते हैं, जिससे भ्रष्ट व्यवहार में शामिल होने की संभावना कम हो जाती है जो दूसरों को नुकसान पहुंचा सकता है।

- **पारदर्शिता को बढ़ावा देना:** पारदर्शिता एक मुख्य नैतिक सिद्धांत है। नैतिक संगठन और व्यक्ति खुले तौर पर और ईमानदारी से काम करने की अधिक संभावना रखते हैं, जिससे भ्रष्टाचार को ऐसे माहौल में पनपने में मुश्किल होती है जहाँ कार्य और निर्णय जांच के अधीन होते हैं।
- **विश्वास का निर्माण:** विश्वास नैतिक व्यवहार की आधारशिला है। जब व्यक्तियों और संस्थाओं को भरोसेमंद माना जाता है, तो उनके भ्रष्टाचार में शामिल होने या उसे बर्दाश्त करने की संभावना कम होती है। समाज में उच्च स्तर का विश्वास भ्रष्टाचार के प्रलोभन को कम करता है।
- **नागरिक सद्गुण को प्रोत्साहित करना:** नैतिक मूल्य नागरिक सद्गुण को बढ़ावा देते हैं, जो व्यक्तियों को दूसरों की कीमत पर व्यक्तिगत लाभ प्राप्त करने के बजाय समाज के सर्वोत्तम हित में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करता है। नागरिक सद्गुण भ्रष्टाचार के लिए एक शक्तिशाली निवारक है।
- **कानून के शासन का समर्थन करना:** नैतिक व्यवहार कानून के शासन और कानूनी और विनियामक ढाँचों के प्रति सम्मान को बनाए रखता है। भ्रष्ट आचरण में अक्सर कानून को दरकिनार करना या उसका उल्लंघन करना शामिल होता है, और नैतिकता का पालन कानूनी मानदंडों के प्रति सम्मान को मजबूत करता है।
- **व्हिसलब्लोअर संरक्षण** : नैतिक संगठन और सरकारें भ्रष्टाचार की रिपोर्ट करने वाले व्हिसलब्लोअर की सुरक्षा को प्राथमिकता देती हैं। नैतिक मूल्य अनैतिक व्यवहार की रिपोर्टिंग को प्रोत्साहित करते हैं, जो भ्रष्टाचार को उजागर करने और संबोधित करने के लिए महत्वपूर्ण है।
- **वैश्विक प्रतिष्ठा:** अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, किसी देश की प्रतिष्ठा के लिए नैतिक व्यवहार आवश्यक है। नैतिक शासन और कम भ्रष्टाचार के स्तर के लिए जाने जाने वाले देश विदेशी निवेश और सहयोग के लिए अधिक आकर्षक होते हैं।
- **दीर्घकालिक स्थिरता** : भ्रष्ट आचरण अक्सर अल्पकालिक लाभ प्रदान करते हैं लेकिन दीर्घकालिक नुकसान पहुंचा सकते हैं। समाज के सतत विकास और समृद्धि के लिए नैतिक व्यवहार आवश्यक है।

भ्रष्टाचार का दायरा निरंतर बढ़ता जा रहा है। नित नए सामने आते भ्रष्टाचार के मामले भारतीय लोकतंत्र को भी गंभीर हानि पहुंचा रहे हैं।भ्रष्टाचार की उपस्थिति किसी भी लोकतंत्र के लिये स्वस्थता का लक्षण नहीं है। वर्तमान समय की अनेक समस्याओं की जड़ भ्रष्टाचार को माना जा सकता है। भ्रष्टाचार केवल नैतिकता पर प्रश्न नहीं है

बल्कि भारत जैसे विकासशील देश की आर्थिक उन्नति में सबसे बड़ी बाधा है इसलिये भारतीय लोकतंत्र के सशक्तीकरण, आर्थिक उन्नति, चहुंमुखी विकास एवं लोक-कल्याणकारी शासन की स्थापना के लिये भ्रष्टाचार उन्मूलन की अत्यंत आवश्यकता है।

8.4.पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

भारत में भ्रष्टाचार को रोकने के लिए कई संस्थाएँ बनाई गई हैं। इनमें से प्रमुख संस्थाएँ निम्न हैं-

8.4.1.केन्द्रीय सतर्कता आयोग (Central Vigilance Commission)

भारत का केन्द्रीय सतर्कता आयोग (Central Vigilance Commission) भारत सरकार के विभिन्न विभागों के अधिकारियों/कर्मचारियों से सम्बन्धित भ्रष्टाचार नियंत्रण की सर्वोच्च संस्था है। इसकी स्थापना सन् १९६४ में की गयी थी। इस आयोग के गठन की सिफारिश संथानम समिति (1962-64) द्वारा की गयी थी जिसे भ्रष्टाचार रोकने से सम्बन्धित सुझाव देने के लिए गठित किया गया था। केन्द्रीय सतर्कता आयोग सांविधिक दर्जा (statutory status) प्राप्त एक बहुसदस्यीय संस्था है।

केन्द्रीय सतर्कता आयोग किसी भी कार्यकारी प्राधिकारी के नियन्त्रण से मुक्त है तथा केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत सभी सतर्कता गतिविधियों की निगरानी करता है। यह केन्द्रीय सरकारी संगठनो मे विभिन्न प्राधिकारियों को उनके सतर्कता कार्यों की योजना बनाने, निष्पादन करने, समीक्षा करने तथा सुधार करने मे सलाह देता है।

केन्द्रीय सतर्कता आयोग विधेयक संसद के दोनो सदनों द्वारा वर्ष 2003 में पारित किया गया जिसे राष्ट्रपति ने 11 सितम्बर 2003 को स्वीकृति दी। इसमें एक केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त जो कि अध्यक्ष होता है तथा दो अन्य सतर्कता आयुक्त (सदस्य जो दो से अधिक नही हो सकते) होते हैं।

अप्रैल 2004 के जनहित प्रकटीकरण तथा मुखबिर की सुरक्षा पर भारत सरकार के संकल्प द्वारा भारत सरकार ने केन्द्रीय सतर्कता आयोग को भ्रष्टाचार के किसी भी आरोप को प्रकट करने अथवा कार्यालय का दुरपयोग करने सम्बन्धित लिखित शिकायतें प्राप्त करने तथा उचित कार्यवाही की सिफारिश करने वाली एक नामित एजेंसी के रूप में प्राधिकृत किया।

(अ). आयोग की संरचना (Composition of the Commission)

आयोग में एक अध्यक्ष व दो सतर्कता आयुक्त होते हैं जिनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा एक तीन सदस्यीय समिति की सिफारिश पर होती है। इस समिति में प्रधानमंत्री, लोकसभा में विपक्ष के नेता व केन्द्रीय गृहमंत्री होते हैं। इनका

कार्यकाल 4 वर्ष अथवा 65 वर्ष की आयु तक (जो भी पहले हो), तक होता है। अवकाश प्राप्ति के बाद आयोग के ये पदाधिकारी केन्द्र अथवा राज्य सरकार के किसी भी पद के योग्य नहीं होते हैं।भारत के राष्ट्रपति निम्नांकित दशाओं में आयोग के अध्यक्ष अथवा उसके सदस्यों को पद से विमुक्त कर सकते हैं-

- यदि वह दिवालिया घोषित हो गया हो।
- यदि वह नैतिक चरित्रहीनता के आधार पर किसी अपराध में केन्द्र सरकार की दृष्टि में दोषी पाया गया हो।
- अपने कार्यक्षेत्र से बाहर कोई लाभ का पद धारण करता हो।
- मानसिक अथवा शारीरिक कारणों से कार्य करने में राष्ट्रपति की दृष्टि में असमर्थ हो।
- कोई अन्य आर्थिक व लाभ का पद ग्रहण करता हो जो आयोग के अनुसार अनुचित है।
- राष्ट्रपति द्वारा आयोग के मुख्य आयुक्त व अन्य आयुक्तों को उनके दुराचरण व अक्षमता के आधार पर पद से हटाया जा सकता है।
- यदि वह केन्द्रीय सरकार के किसी अनुबंध अथवा कार्य में सहभाग करता हो।
- ऐसे किसी भी अनुबंध अथवा कार्य से प्राप्त लाभ में भाग लेता हो अथवा जिसके उपरांत प्रकट होने वाले लाभ व सुविधाएँ किसी निजी कंपनियों के सदस्यों के समान ही प्राप्त करता हो।

केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त के वेतन, भत्ते व अन्य सेवा शर्तें संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के समान ही होती हैं और सतर्कता आयुक्त की संघ लोक सेवा आयोग के सदस्यों के समान होती है, लेकिन कार्यकाल के दौरान इनकी सेवाओं में कोई अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।

(आ).केन्द्रीय सतर्कता आयोग के अधिकार एवं कार्य (Powers and functions of the Central Vigilance Commission)

केन्द्रीय सतर्कता आयोग के सतर्कता आयोग अधिनियम, 2003 के अंतर्गत इस आयोग के अधिकार एवं कार्य निम्नलिखित हैं-

दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन (केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो) के कार्यकरण का अधीक्षण करना जहां तक वह भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के अधीन अपराधों अथवा लोक सेवकों की कतिपय श्रेणियों के लिए दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत किसी अपराध के अन्वेषण से संबंधित है।

- दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन को अधीक्षण के लिए निदेश देना जहां तक इनका संबंध (केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 8 अनुभाग -के अन्तर्गत अपराधों के अन्वेषण से है।
- केन्द्रीय सरकार द्वारा भेजे गए किसी संदर्भ पर जांच करना अथवा जांच या अन्वेषण करवाना।
- केन्द्रीय सतर्कता आयोग अधिनियम, में विनिर्दिष्ट पदाधिकारियों के ऐसे प्रवर्ग 2 की उपधारा 8 की धारा 2003 से संबंधित किसी पदधारी के विरुद्ध प्राप्त किसी शिकायत में जांच करना या जांच अथवा अन्वेषण कराना
- भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के अधीन अभिकथितरूप से किए गए अपराधों में अथवा दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत किसी अपराध में दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन द्वारा किए गए अन्वेषणों की प्रगति का पुनर्विलोकन करना।
- भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के अधीन अभियोजनकी मंजूरी के लिए सक्षम प्राधिकारियों के पास लंबित आवेदनों की प्रगति का पुनर्विलोकन करना।
- केन्द्रीय सरकार तथा इसके संगठनों को ऐसे मामलों पर सलाह देनाजो इनके द्वारा आयोग को भेजे जाएंगे।
- विभिन्न केन्द्रीय सरकारी मंत्रालयों, विभागों तथा केन्द्रीय सरकार के संगठनों के सतर्कता प्रशासन पर अधीक्षण रखना ।
- किसी भी जांच का संचालन करते समय आयोग को सिविल न्यायालय के सभी अधिकार प्राप्त होंगे।
- संघ के कार्यों से संबंधित लोक सेवाओं तथा पदों पर नियुक्त व्यक्तियों से संबंधित अथवा अखिल भारतीय सेवाओं के सदस्यों से संबंधितसतर्कता अथवा अनुशासनिक मामलों का नियंत्रण करने वाले कोई भी नियम अथवा विनियम बनाने से पहले आयोग से किए जाने वाले अनिवार्य परामर्श पर केन्द्र सरकार को उत्तर देना ।
- केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त उस समिति के अध्यक्ष हैं तथा दोनों सतर्कता आयुक्त सदस्य हैं जिसकी सिफारिशों पर केन्द्रीय सरकार, प्रवर्तन निदेशक की नियुक्ति करती है।
- प्रवर्तन निदेशक की नियुक्ति से संबंधित समिति को यह अधिकार भी है कि वह प्रवर्तन निदेशालय में उप निदेशक तथा इससे ऊपर के स्तर के पदों पर अधिकारियों की नियुक्ति के लिए, प्रवर्तन निदेशक से परामर्श करने के पश्चात् अपनी सिफारिशें दें।
- केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त उस समिति के अध्यक्ष हैं तथा दोनों सतर्कता आयुक्त सदस्य हैं जिसे दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन (केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो) में पुलिस अधीक्षक तथा इससे ऊपर के स्तर के पदों, निदेशक को

छोड़कर, पर अधिकारियों की नियुक्ति तथा इन अधिकारियों के कार्यकाल का विस्तारण अथवा लघुकरण करने के लिए, निदेशक (केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो) से परामर्श करने के पश्चात् अपनी सिफारिशें देने का अधिकार प्राप्त है।

(इ).केन्द्रीय सतर्कता आयोग के काम करने की प्रणाली (Working of Central Vigilance Commission)

आयोग वैयक्तिक रूप में शिकायतें द्वारा अपने भाषणों में व्यक्त सूचनाएँ, लेखा-परोक्षण आपत्तियाँ एवं केन्द्रीय जाँच ब्यूरो से सूचनाएँ एकत्र करता है। सदाचार समिति जैसे सामाजिक संगठनों एवं उत्तरदायी नागरिकों तथा समाचार पत्रों द्वारा दिये जाने वाले सहयोग का भी वह स्वगत करता है। आयोग अधिकांश में ऐसी शिकायतें भी प्राप्त करता है जो राज्य सरकारों के क्षेत्राधिकार में आती हैं। जिन मामलों को वह ठीक समझता है उनके सम्बन्ध में राज्य सतर्कता आयोगों का ध्यान आवश्यक कार्यवाही हेतु आकर्षित करता है। इसी प्रकार राज्य सतर्कता आयोगों द्वारा केन्द्रीय सतर्कता आयोग के क्षेत्र में आने वाली जो शिकायतें प्राप्त की जाती हैं, वे केन्द्रीय सतर्कता आयोग को आवश्यक कार्रवाई हेतु प्रेषित कर दी जाती हैं।शिकायतें प्राप्त करने पर केन्द्रीय सतर्कता के समक्ष निम्न विकल्प होते हैं:

- केन्द्रीय सतर्कता आयोग किसी शिकायत को जाँच हेतु सम्बन्धित प्रशासकीय मन्त्रालय अथवा विभाग को भेज सकता है। ऐसे मामलों में मन्त्रालयीय या विभागीय सतर्कता अधिकारी आरोपों की प्रारम्भिक जाँच करने के पश्चात् अपना प्रतिवेदन केन्द्रीय सतर्कता आयोग को प्रस्तुत करता हैं। तत्पश्चात् आयोग मन्त्रालय अथवा विभाग को सम्बन्धित मामलों में अग्रिम कार्रवाई करने के आदेश देता है।
- केन्द्रीय सतर्कता आयोग केन्द्रीय जाँच ब्यूरो (Central Bureau of Investigation) को जाँच करने के आदेश दे सकता है। केन्द्रीय जांच ब्यूरो द्वारा अपनी जाँच के प्रतिवेदन अन्य सम्बन्धित तथ्यों एवं अभिलेखों सहित सतर्कता आयोग को प्रस्तुत किये जाते हैं और केन्द्रीय सतर्कता आयोग तत्पश्चात् सम्बन्धित मन्त्रालय या विभाग को अग्रिम कार्रवाई Windows के सम्बन्ध में परामर्श देता है।केन्द्रीय सतर्कता आयोग केन्द्रीय जाँच आयोग के निदेशक को किसी मामले को पंजीकृत करके उसकी जाँच के आदेश दे सकता है। निदेशक आयोग को जाँच-परिणामों से सूचित करता है कि उसके विरुद्ध क्या कार्रवाई की जाये।
- यदि किसी विधि के अन्तर्गत मुकदमा चलाने के लिए राष्ट्रपति की पूर्वस्वीकृति आवश्यक होती है तो केन्द्रीय जाँच ब्यूरो का निदेशक अपना अग्रिम प्रतिवेदन केन्द्रीय सतर्कता आयोग के माध्यम से गृह मन्त्रालय को

अग्रसारित करता है। साथ ही साथ, केन्द्रीय जाँच ब्यूरो अपने प्रतिवेदन की एक प्रति सम्बन्धित प्रशासकीय मन्त्रालय या विभाग को उसकी टिप्पणियों हेतु-यदि विभाग कोई टिप्पणी देना चाहता है प्रेषित करता है। मन्त्रालय या विभाग अपनी टिप्पणियाँ केन्द्रीय सतर्कता आयोग को प्रेषित करता है। केन्द्रीय जाँच ब्यूरो के प्रतिवेदन, सम्बन्धित सामग्री, विभागीय टिप्पणी आदि पर विचार करके केन्द्रीय सतर्कता आयोग कार्रवाई करने या न करने के सम्बन्ध में गृह मन्त्रालय को परामर्श देता है। अतः अग्रिम आदेश गृह मन्त्रालय ही जारी करता है।

- यदि राष्ट्रपति के अतिरिक्त अन्य कोई अधिकारी कार्रवाई सम्बन्धी आदेश देने का अधिकारी होता है तो निदेशक केन्द्रीय जाँच ब्यूरो को अपना जाँच-प्रतिवेदन उस अधिकारी को आवश्यक कार्रवाई की स्वीकृति हेतु प्रेषित करता है। यदि यह अधिकारी निदेशक द्वारा प्रस्तावित अनुमति प्रदान करने के लिए तैयार नहीं होता तो वह अपने मत एवं कारणों तथा केन्द्रीय जाँच आयोग के निदेशक के कागजात सहित सम्बन्धित प्रशासकीय मन्त्रालय एवं विभाग के माध्यम से केन्द्रीय सतर्कता आयोग को प्रेषित करता है। अधिकारी द्वारा सम्बन्धित मामले में केन्द्रीय सतर्कता आयोग के परामर्श पर ही अग्रिम कार्रवाई की जाती है।

मन्त्रालयों/विभागों द्वारा शिकायतों के सम्बन्ध में केन्द्रीय सतर्कता आयोग ने प्रशासकीय मन्त्रालयों/विभागों की कार्य पद्धति निर्धारित की है। इन शिकायतों को प्रशासकीय मन्त्रालयों/विभागों द्वारा निपटाया जाता है। केन्द्रीय सतर्कता अयोग का दायित्व प्रशासकीय मन्त्रालयों एवं विभागों को प्रशासकीय सच्चरित्रता सम्बन्धी सभी मामलों में परामर्श प्रदान करना है। इसे मन्त्रालयों एवं विभागों से प्रतिवेदन, वक्तव्य एवं सूचनाएँ प्राप्त करने का अधिकार भी है जिससे सामान्य नियन्त्रण एवं निरीक्षण तथा मन्त्रालयों एवं विभागों के भ्रष्टाचार विरोधी कार्यों को रोका जा सके। यह किसी भी शिकायत को सीधे अपने नियन्त्रण में ले सकता है। केन्द्रीय सतर्कता आयोग को उसके दायित्वों का समुचित रूप में सम्पादन करने एवं सूचना प्रदान करने हेतु प्रत्येक मन्त्रालय एवं विभाग आयोग को त्रैमासिक सावधिक सूचना निम्नलिखित बातों पर भेजता है: (क) शिकायतों का निपटारा एवं शेष शिकायतें; (ख) अनाम एवं छहा नाम से प्राप्त शिकायतों का विवरण; एवं (ग) तीन मास से अधिक समय से निलम्बित शासकीय अधिकारी। जब भी कोई शिकायत होती है और मामले की प्रारम्भिक जाँच की जाती है, तो यह जाँच सम्बन्धी प्रतिवेदन आयोग को अग्रसरित किया जाता है, जो उसका अध्ययन करके उससे सम्बन्धित अग्रिम कार्रवाई करने के बारे में परामर्श देता है।

8.4.2.केंद्रीय जांच ब्यूरो (Central Bureau of Investigation)

सीबीआई भारत सरकार की एक बहुआयामी जांच एजेंसी है और भ्रष्टाचार से संबंधित मामलों, आर्थिक अपराधों और पारंपरिक अपराध के मामलों की जांच करता है। यह आम तौर पर केंद्र सरकार और केंद्र शासित प्रदेशों और उनके सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के कर्मचारियों द्वारा किए गए अपराधों के लिए भ्रष्टाचार विरोधी क्षेत्र में अपनी गतिविधियों की रोकता है।

(अ). इतिहास (History) : माना जाता है कि द्वितीय विश्वयुद्ध की शुरुआत में ब्रिटिश सरकार के खर्चों में उल्लेखनीय रूप से तीव्र वृद्धि हुई थी, जिसकी वजह से देश में भ्रष्ट कारोबारियों तथा सरकारी अधिकारियों की लूट-खसोट काफी बढ़ गई थी। चूँकि स्थानीय पुलिस इस प्रकार के मामलों की पड़ताल करने में समर्थ नहीं थी, इसलिये ब्रिटिश सरकार को आवश्यकता महसूस हुई एक दक्ष और विशिष्ट बल की। इसलिये युद्ध तथा आपूर्ति विभाग में रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार के मामलों की जाँच-पड़ताल के लिये 1941 में विशेष पुलिस की स्थापना (Special Police Establishment-SPE) की गई थी। युद्ध के बाद के वर्षों में भी एक केंद्रीय जाँच एजेंसी की आवश्यकता महसूस की गई और तब 1946 में अस्तित्व में आया दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना अधिनियम (Delhi Special Police Establishment-DPSE Act)। इस अधिनियम ने विशेष पुलिस स्थापना की देखरेख गृह विभाग को हस्तांतरित कर दी और इसके कार्यों की परिधि में भारत सरकार के सभी विभागों को शामिल कर लिया गया। राज्यों की सहमति से इसे राज्यों में भी लागू किया जाता है। बाद में 1963 में दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना का नाम बदलकर केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (Central Bureau of Investigation-CBI) कर दिया गया। हालाँकि, आज भी सीबीआई का कार्यक्षेत्र 1946 में बने दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना अधिनियम से ही निर्धारित होता है।

(आ).सीबीआई की संरचना (Structure of CBI)

एक भ्रष्टाचार निरोधी जाँच एजेंसी के रूप में काम शुरू करने वाली सीबीआई को समय बीतने के साथ-साथ सरकार और न्यायपालिका के विभिन्न क्षेत्रों से पारंपरिक अपराध व विशिष्ट मामलों की जाँच के अनुरोध मिलने शुरू हो गए। 1980 के दशक की शुरुआत से संवैधानिक न्यायालयों ने भी खोजबीन और जाँच के लिये सीबीआई को मामले भेजने शुरू कर दिये। वर्ष 1987 में यह निर्णय लिया गया कि सीबीआई के तहत दो जाँच प्रभागों अर्थात् भ्रष्टाचार निरोधक प्रभाग और विशेष अपराध प्रभाग का गठन किया जाए। इसके बाद में सीबीआई भ्रष्टाचार और आर्थिक अपराधों के अलावा परंपरागत अपराधों जैसे हत्या, अपहरण, आतंकवादी अपराध इत्यादि जैसे चुनिंदा मामलों की जाँच का कार्य भी करने लगी। इसके अलावा, राजीव गाँधी हत्याकांड तथा बाबरी विध्वंस आदि जैसे राष्ट्रीय महत्त्व के बहुचर्चित मामलों की जाँच के लिये समय-समय पर स्पेशल सेल का भी गठन किया जाता रहा।

प्रतिभूति घोटाले से संबंधित मामलों और आर्थिक अपराधों में वृद्धि होने के कारण कार्य की अधिकता और भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण की वज़ह से 1994 में अलग से एक अपराध शाखा स्थापित की गई थी।इसे आयात-निर्यात, विदेशी मुद्रा, पासपोर्ट आदि तथा ऐसे अन्य सम्बद्ध केंद्रीय कानूनों के उल्लंघन के मामलों की जाँच करने की शक्ति दी गई थी। यह सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में बेईमानी, धोखाधड़ी और गबन के उन गंभीर मामलों की भी जाँच कर सकती थी, जो कई राज्यों में संगठित गिरोहों द्वारा किये जाते थे। इसके अलावा, यह सार्वजनिक सेवाओं तथा सार्वजनिक क्षेत्र की परियोजनाओं और उपक्रमों में व्याप्त भ्रष्टाचार के बारे में जानकारी एकत्र करती थी।वर्तमान में सीबीआई की संरचना इस प्रकार है –

- **भ्रष्टाचार विरोधी विभाग (Anti-Corruption Division):** यह डिवीजन रिश्वत और भ्रष्टाचार के मामलों और भ्रष्टाचार के निवारक पहलुओं से संबंधित कार्यों के संबंध में जानकारी एकत्रित करता है। वे केंद्र सरकार के नियंत्रण में सरकारी कर्मचारियों और सीबीआई के अधिकार क्षेत्र में आने वाले सरकारी अधिकारियों के तहत काम कर रहे सरकारी कर्मचारियों के खिलाफ मामलों की जांच करते हैं।
- **विशेष अपराध विभाग (Special Crimes Division):** सीबीआई का यह डिवीजन विभिन्न प्रकार के अपराधों और हत्याओं, अपहरण, बलात्कार, नशीले पदार्थों की तस्करी और अन्य अपराधों से संबंधित मामलों की जांच करता है, जो संगठित आपराधिक परिवारों और गिरोहों द्वारा किए जाते हैं, जो कि सार्वजनिक शांति और सुरक्षा के लिए एक बड़ा खतरा पैदा करते हैं। सीबीआई अन्य आईपीसी अपराधों के साथ-साथ डीएसपीई अधिनियम के तहत अधिसूचित स्थानीय और विशेष कानूनों के तहत अपराध की जांच और अभियोजन भी करता है।
- **आर्थिक अपराध विभाग (Economic Offences Division):** सीबीआई का यह हिस्सा 29 अप्रैल 1963 को स्थापित किया गया था। यह डीएसपीई अधिनियम की धारा 3 में उल्लेखित विभिन्न अर्थव्यवस्था संबंधित अपराधों से संबंधित है। इन अपराध में बैंक, स्टॉक एक्सचेंज, संयुक्त स्टॉक कंपनियाँ, पब्लिक लिमिटेड कंपनियों और अन्य में गंभीर धाखाधड़ी जैसे कार्य शामिल हैं।
- **अभियोजन निदेशालय (Directorate of Prosecution):** सीबीआई का यह विभाग उन लोगों पर कानूनी कार्रवाइयों से संबंधित है जो अन्य डिवीजनों द्वारा गिरफ्तार किए गए हैं। इसके कार्यों में न्यायालयों में परीक्षण, अपील और संशोधन लंबित मामलों का संचालन और पर्यवेक्षण शामिल है।

- **नीति और समन्वय विभाग (Policy and Coordination Division):** पॉलिसी डिवीजन उन सभी मामलों से संबंधित है जिनमें नीति, प्रक्रिया, संगठन, सतर्कता और सुरक्षा शामिल है। अन्य महत्वपूर्ण कार्यों में मंत्रालयाँ, प्रचार और सीबीआई में सतर्कता और सुरक्षा के संबंध में विशेष कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के साथ समन्वय शामिल है।
- **केंद्रीय फोरेंसिक प्रयोगशाला (Central Forensic laboratory):** इस प्रभाग में सीबीआई के पुलिस और अधिकारियों दोनों की जांच के लिए एक फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला शामिल है।

(इ). सीबीआई का अधिकार क्षेत्र व कार्य (Jurisdiction and functions of CBI)

डीएसपीई अधिनियम 1946 की धारा 2 के तहत केवल केन्द्रशासित प्रदेशों में अपराधों की जाँच के लिये सीबीआई को शक्ति प्राप्त है। हालाँकि, केंद्र द्वारा रेलवे तथा राज्यों जैसे अन्य क्षेत्रों में उनके अनुरोध पर इसके अधिकार क्षेत्र को बढ़ाया जा सकता है। वैसे सीबीआई केवल केंद्र सरकार द्वारा अधिसूचित मामलों की जाँच के लिये अधिकृत है। कोई भी व्यक्ति केंद्र सरकार, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों और राष्ट्रीयकृत बैंकों में भ्रष्टाचार के मामले की शिकायत सीबीआई से कर सकता है। इसके अलावा, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत मामलों में सीबीआई स्वयं कार्रवाई कर सकती है। जब कोई राज्य केंद्र से सीबीआई की मदद के लिये अनुरोध करता है तो यह आपराधिक मामलों की जाँच करती है या तब जब सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय इसे किसी अपराध या मामले की जाँच करने का निर्देश देते हैं। सीबीआई भारत में इंटरपोल के "राष्ट्रीय केंद्रीय ब्यूरो" के रूप में कार्य करती है। सीबी ई के इंटरपोल विंग भारतीय कानून प्रवर्तन एजसियों और इंटरपोल के सदस्य देशों से उत्पन्न जांच संबंधी गतिविधियों के लिए अनुरोधों का समन्वय करता है। सीबीआई के कार्य निम्नलिखित हैं:-

- केंद्र सरकार के कर्मचारियों के भ्रष्टाचार, रिश्वत और दुर्व्यवहार के मामलों की जांच करना;
- वित्तीय और आर्थिक कानूनों के उल्लंघन से संबंधित मामलों की जांच करना अर्थात निर्यात और आयात नियंत्रण, सीमा शुल्क और केंद्रीय उत्पाद शुल्क, आयकर,;
- विदेशी मुद्रा विनियम आदि से संबंधित कानूनों का उल्लंघन। हालांकि, ऐसे मामलों को संबंधित विभाग के अनुरोध के साथ परामर्श करने के बाद जाँच में शामिल किया जाता है;
- पेशेवर अपराधियों के संगठित गिरोहों द्वारा किए गए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय विध्वंस वाले गंभीर अपराधों की जांच करना;
- भ्रष्टाचार विरोधी एजेंसियों और विभिन्न राज्य पुलिस बलों की गतिविधियों को समन्वयित करना;

- अपराध आंकड़ों को बनाए रखना और आपराधिक जानकारी प्रसारित करवाना।

इस प्रकार सीबीआई यानी केंद्रीय जांच ब्यूरो भारत में जांच के लिए प्राथमिक एजेंसी है। भारत सरकार सीबीआई पर नियंत्रण रखती है। यह प्राथमिक एजेंसी है जो आपराधिक गतिविधियों की देखभाल करने के साथसाथ राष्ट्रीय - सुरक्षा का भी ख्याल रखती है।

8.4.3.लोकपाल और लोकायुक्त (Lokpal and Lokayukta)

खराब प्रशासन दीमक की तरह है जो धीरे धीरे-किसी राष्ट्र की नींव को खोखला करता है तथा प्रशासन को अपने कार्य पूर्ण करने में बाधा डालता है। भ्रष्टाचार इस समस्या की जड़ है।अधिकतर भ्रष्टाचार निरोधी संस्थाएँ पूर्णतः स्वतंत्र नहीं हैं। इनमें से कई एजेंसियाँ नाममात्र शक्तियों वाले केवल परामर्शी निकाय हैं और उनकी सलाह का शायद ही अनुसरण किया जाता है।इसके अलावा आंतरिक पारदर्शिता और जवाबदेही की भी समस्या है, क्योंकि इन एजेंसियों पर नज़र रखने के लिये अलग से कोई प्रभावी व्यवस्था नहीं है।इस संदर्भ में, एक स्वतंत्र लोकपाल संस्था भारतीय राजनीति के इतिहास में मील का पत्थर कहा जा सकता है, जिसने कभी समाप्त न होने वाले भ्रष्टाचार के खतरे का एक समाधान प्रस्तुत किया है। लोकपाल तथा लोकायुक्त अधिनियम, 2013 ने संघ के (केंद्र) कपाल और राज्यों के लिये लोकायुक्त संस्था कीलिये लोव्यवस्था की। ये संस्थाएँ बिना किसी संवैधानिक दर्जे वाले वैधानिक निकाय हैं।

(अ).इतिहास (History)

लोकायुक्त/लोकपाल (Ombudsman) स्वीडिश शब्द 'ओम्बुड' (Ombud) जिसका अर्थ है किसी का प्रतिनिधित्व करने वाला, से 'ओम्बुड्समैन' बना है। ओम्बुड्समैन का तात्पर्य उस संस्था से है जो कुप्रशासन से नागरिकों की रक्षा करती है। 'ओम्बुड्समैन' नामक यही संस्था भारत में लोकपाल/लोकायुक्त कहलाती है। ओम्बुड्समैन की स्थापना सर्वप्रथम सन् 1809 में स्वीडन में तत्पश्चात् फिनलैण्ड (सन् 1919), डेनमार्क (सन् 1955) तथा नर्वो (सन् 1965) में हुई। इन स्केन्डिनेवियन देशों के अतिरिक्त यह संस्था न्यूजीलैण्ड, ब्रिटेन, कनाडा तथा अमेरिका में भी कार्यरत है। ओम्बुड्समैन एक निष्पक्ष तथा कार्यकुशल संस्था मानी जाती है क्यांकि यह स्वतंत्रतापूर्वक किसी मुद्दे की जाँच कर सरकार को कार्यवाही करने का परामर्श देती है।1962 में न्यूजीलैंड और नॉर्वे ने यह प्रणाली अपनाई और ओम्बुड्समैन के विचार का प्रसार करने में यह बेहद अहम सिद्ध हुआ।वर्ष 1967 में व्हाट्ट रिपोर्ट (Whyatt Report) की सिफारिश पर ग्रेट ब्रिटेन ने ओम्बुड्समैन संस्था को अपनाया तथा लोकतांत्रिक विश्व में इसे अपनाने वाला पहला बड़ा देश बन गया। गुयाना प्रथम विकासशील देश था, जिसने वर्ष 1966 में ओम्बुड्समैन का विचार

अपनाया। इसके बाद मॉरीशस, सिंगापुर, मलेशिया के साथ भारत ने भी इसे अपनाया। भारत में सन् 1963 में सर्वप्रथम राजस्थान प्रशासनिक सुधार समिति (हरिश्चन्द्र माथुर समिति) ने यह सुझाव दिया था कि ओम्बुड्समैन जैसी संस्था भारत में भी होनी चाहिए। संसद सदस्य डॉ. एल. एम. सिंधवी ने यह माँग संसद में भी उठाई तथा प्रशासनिक सुधार आयोग ने भी यह इंगित किया था कि केन्द्रीय स्तर पर लोकपाल तथा राज्य स्तर पर लोकायुक्त संस्थाओं की स्थापना ओम्बुड्समैन प्रणाली के अनुसार की जानी चाहिए। आयोग की सिफारिश क्रे आधार पर सर्वप्रथम 9 मई, 1968 को लोकपाल तथा लोकायुक्त विधेयक संसद में प्रस्तुत किया गया हो जो लोकसभा में पारित हो चुका था लेकिन राज्यसभा में पारित न हो पाया क्योंकि लोकसभा भंग हो गई थीं। प्रधानमंत्री तथा राष्ट्रपति को लोकपाल के कार्यक्षेत्र से बाहर रखा गया था। इसके कार्यक्षेत्र पर विवाद हुआ। फिर सन् 1971 में पुनः यह विधेयक प्रस्तुत हुआ किन्तु लोकसभा भंग होने के कारण अधर में लटक गया। सन् 1977 में जनता पार्टी सरकार द्वारा नया 'लोकपाल विधेयक' संसद के सम्मुख लाया गया जिसमें प्रधानमंत्री को इसके क्षेत्राधिकारों में रखते हुए पूर्ण स्वतंत्रता की बात कही गई थी। राजनीतिक अस्थिरता के उस दौर में विधेयक पारित नहीं पाया। चौथी बार लोकपाल विधेयक राजीव गाँधी के शासनकाल में प्रधानमंत्री को इसके क्षेत्राधिकार से बाहर रखते हुए अगस्त, 1985 को प्रस्तुत हुआ जिसे स्वयं राजीव गाँधी की सरकार ने ही वापिस ले लिया था। पाँचवी बार लोकपाल विधेयक वी. पी. सिंह की राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने संसद के सम्मुख सन् 1990 में प्रस्तुत किया था। इस विधेयक में लोकपाल को सर्वप्रथम एक व्यक्ति की अपेक्षा एक संस्था के रूप में देखते हुए एक अध्यक्ष तथा दो सदस्यों का प्रावधान किया गया था किन्तु यह सरकार भी समय से पूर्व सत्ता से दूर हो गई तथा लोकपाल विधेयक सदैव की भाँति पारित न हो पाया। सन् 1996 में संयुक्त मोर्चा सरकार द्वारा सन् 1998 में वाजपेयी सरकार द्वारा भी लोकपाल विधेयक लोकसभा में पेश किया गया था किन्तु लोकसभा भंग होने के कारण पारित न हो सका। प्रधानमंत्री को लोकपाल के दायरे में लाते हुए एक नया विधेयक 4 अगस्त, 2001 को लोकसभा को लोकपाल के दायेर में लाते हुए एक नया विधेयक 14 अगस्त, 2001 को लोकसभा में प्रस्तुत किया गया।अन्ना हज़ारे के नेतृत्व में 'भ्रष्टाचार के विरुद्ध भारत आंदोलन' ने केंद्र में तत्कालीन UPA सरकार पर दवाब बनाया और इसके परिणामस्वरूप संसद के दोनों सदनों में लोकपाल व लोकायुक्त विधेयक, 2013 पारित हुआ।1 जनवरी, 2014 को राष्ट्रपति ने इसे अपनी सम्मति दे दी और 16 जनवरी, 2014 को यह लागू हो गया। राज्यों में लोकायुक्त की स्थापना लोकपाल की तुलना में उत्साहजनक कही जा सकती है। सर्वप्रथम उड़ीसा राज्य ने सन् 1970 में लोकायुक्त की स्थापना की। पत्पश्चात् महाराष्ट्र (1971), बिहार (1973), तमिलनाडु (1974), जम्मू कश्मीर (1975), मध्य प्रदेश (1981), आन्ध्र प्रदेश (1983), केरल (1983), हिमाचल प्रदेश (1983), कर्नाटक (1984), असम (1985), गजरात

(1986), तथा पंजाब (1995) राज्य ने लोकायुक्त की स्थापना की। प्रत्येक राज्य के लोकायुक्त की संरचना, कार्य प्रणाली तथा अधिकार क्षेत्र को प थक रखा गया। हिमाचल प्रदेश, उड़ीसा तथा केरल में लोकायुक्त के क्षेत्राधिकार में मुख्यमंत्री भी सम्मिलित है। प्रदेश में लोकायुक्त संस्था की स्थापना के साथ ही राज्य सतर्कता आयोग को समाप्त कर दिया गया। कतिपय राज्यों में लोकायुक्त के साथ उप लोकायुक्त का पद भी स जित है। इन राज्यों में राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, उड़ीसा, बिहार, केरल, कर्नाटक तथा असम सम्मिलित है। किसी राज्य में लोकायुक्त का कार्यकाल 5 तो किसी में 3 वर्ष निर्धारित है। इसी प्रकार नियुक्ति की प्रक्रिया भी भिन्न-भिन्न अपनाई जाती है।

(आ).लोकपाल की संरचना (Structure of Lokpal)

लोकपाल एक बहु सदस्यीय निकाय है जिसका गठन एक चेयरपर्सन और अधिकतम-8 सदस्यों से हुआ है।लोकपाल संस्था का चेयरपर्सन या तो भारत का पूर्व मुख्य न्यायाधीश या सर्वोच्च न्यायालय का पूर्व न्यायाधीश या असंदिग्ध सत्यनिष्ठा व प्रकांड योग्यता का प्रख्यात व्यक्ति होना चाहिये, जिसके पास भ्रष्टाचार निरोधी नीति, सार्वजनिक प्रशासन, सतर्कता, वित्त, बीमा और बैंकिंग, कानून व प्रबंधन में न्यूनतम 25 वर्षों का विशिष्ट ज्ञान एवं अनुभव हो।आठ अधिकतम सदस्यों में से आधे न्यायिक सदस्य तथा न्यूनतम 50 प्रतिशत सदस्य अनु .अनु/जाति . अल्पसंख्यक और महिला श्रेणी से होने चाहिये।/अन्य पिछड़ा वर्ग/जनजाति। लोकपाल संस्था का न्यायिक सदस्य या तो सर्वोच्च न्यायालय का पूर्व न्यायाधीश या किसी उच्च न्यायालय का पूर्व मुख्य न्यायाधीश होना चाहिये।लोकपाल संस्था के चेयरपर्सन और सदस्यों का कार्यकाल 5 वर्ष या 70 वर्ष की आयु तक है।सदस्यों की नियुक्ति चयन समिति की सिफारिश पर राष्ट्रपति द्वारा की जाती है।चयन समिति प्रधानमंत्री जो कि चेयरपर्सन होता है, लोकसभा अध्यक्ष, लोकसभा में विपक्ष के नेता, भारत के मुख्य न्यायाधीश या उसके द्वारा नामित कोई न्यायाधीश और एक प्रख्यात न्यायविद से मिलकर गठित होती है। लोकपाल तथा सदस्यों के चुनाव के लिये चयन समिति कम-से-कम आठ व्यक्तियों का एक सर्च पैनल (खोजबीन समिति) गठित करती है। लोकपाल अधिनियम, 2013 के अधीन कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग उन अभ्यर्थियों की एक सूची बनाएगा जो लोकपाल संस्था का चेयरपर्सन या सदस्य बनाने के इच्छुक हों।इसके बाद यह सूची उस प्रस्तावित आठ सदस्यीय खोजबीन समिति के पास जाएगी जो नामों को शॉर्टलिस्ट करेगी और प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में गठित चयन समिति के समक्ष प्रस्तुत करेगी।चयन समिति खोजबीन समिति द्वारा सुझाए गए नामों में से नाम चुन भी सकती है और नहीं भी चुन सकती। 2013 का अधिनियम यह भी प्रावधान करता है कि सभी राज्य सरकारें इस अधिनियम के लागू होने के एक साल के अंदर लोकायुक्त का पद स्थापित करें। लोकपाल एवं लोकायुक्त अधिनियम, 2013 को संशोधित करने के लिये

यह विधेयक संसद ने जुलाई 2016 में पारित किया।इसके द्वारा यह निर्धारित किया गया कि विपक्ष के मान्यता प्राप्त नेता के अभाव में लोकसभा में सबसे बड़े एकल विरोधी दल का नेता चयन समिति का सदस्य होगा।इसके द्वारा वर्ष 2013 के अधिनियम की धारा 44 में भी संशोधन किया गया जिसमें प्रावधान है कि सरकारी सेवा में आने के 30 दिनों के भीतर लोकसेवक को अपनी सम्पत्तियों और दायित्वों का विवरण प्रस्तुत करना होगा।संशोधन विधेयक द्वारा 30 दिन की समयसीमा समाप्त कर दी गई-, अब लोकसेवक अपनी सम्पत्तियों और दायित्वों की घोषणा सरकार द्वारा निर्धारित रूप में एवं तरीके से करेंगे।यह ट्रस्टियों और बोर्ड के सदस्यों को भी अपनी तथा पति पत्नी की परिसंपत्तियों की/घोषणा करने के लिये दिये गए समय में भी बढ़ोतरी करता है, उन मामलों में जहां वे एक करोड़ रुपये से अधिक सरकारी या 10 लाख रुपये से अधिक विदेशी धन प्राप्त करते हों।

(इ).लोकपाल का क्षेत्राधिकार एवं शक्तियाँ (Jurisdiction and powers of Lokpal)

- लोकपाल के क्षेत्राधिकार में प्रधानमंत्री, मंत्री, संसद सदस्य, समूह ए, बी, सी और डी अधिकारी तथा केंद्र सरकार के अधिकारी शामिल हैं।
- लोकपाल का प्रधानमंत्री पर क्षेत्राधिकार केवल भ्रष्टाचार के उन आरोपों तक सीमित रहेगा जो कि अंतर्राष्ट्रीय संबंधों, सुरक्षा, लोक व्यवस्था, परमाणु ऊर्जा और अंतरिक्ष से संबद्ध न हों।
- संसद में कही गई किसी बात या दिये गए वोट के मामले में मंत्रियों या सांसदों पर लोकपाल का क्षेत्राधिकार नहीं होगा।
- इसके क्षेत्राधिकार में वह व्यक्ति भी शामिल है जो ऐसे किसी निकायनिदे) समिति का प्रभारी/शक / कार है या रहा है जो केंद्रीय कानून द्वारा स्थापित हो या किसी अन्य संस्था का जो केंद्रीय सर (सचिव/प्रबंधक नियंत्रित हो और कोई अन्य व्यक्ति जिसने घूस देने या लेने में सहयोग दिया हो।/द्वारा वित्तपोषित
- लोकपाल अधिनियम यह आदेश देता है कि सभी लोकसेवक अपनी तथा अपने आश्रितों की परिसंपत्तियों व देयताओं को प्रस्तुत करें।
- इसके पास CBI की जाँच करने तथा उसे निर्देश देने का अधिकार है।
- यदि लोकपाल ने कोई मामला CBI को सौंपा है तो बिना लोकपाल की अनुमति के ऐसे मामले के जाँच अधिकारी को स्थानांतरित नहीं किया जा सकता।
- लोकपाल की जाँच इकाई को एक सिविल न्यायालय के समान शक्तियाँ दी गईं हैं।

- विशेष परिस्थितियों में लोकपाल को उन परिसंपत्तियों, आमदनी, प्राप्तियों और लाभों को जब्त करने का अधिकार है जो भ्रष्टाचार के साधनों से पैदा या प्राप्त की गई हैं।
- लोकपाल को ऐसे लोकसेवक के स्थानांतरण या निलंबन की सिफारिश करने का अधिकार है जो भ्रष्टाचार के आरोपों से जुड़ा है।
- लोकपाल को प्राथमिक जाँच के दौरान रिकार्ड को नष्ट करने से रोकने का निर्देश देने का अधिकार है।

लोकायुक्त को लोक सेवकों के विरुद्ध निम्नलिखित मामलों में आरोप एवं शिकायत प्राप्त कर जाँच कराने का अधिकार है:

- स्वयं या अन्य व्यक्तियों के लाभ या पक्षपात के लिए अपने पद का दुरुपयोग किया हो या दूसरे व्यक्ति की क्षति या अभाव का कारण बना हो;
- सरकारी कर्मचारी के रूप में व्यक्तिगत स्वार्थ या अनुचित या भ्रष्ट विचार से प्रेरित होकर काम किया हो;
- भ्रष्टाचार के आरोप में दोषी हो या सरकारी पद पर ईमानदार न रहा हो;
- ज्ञात आय से असंगत सम्पत्ति हो या परिवार का कोई अन्य सदस्य उसकी तरफ से असंगत सम्पत्ति रखता हो;
- जिस पद पर वह है उस पद पर लोक सेवक द्वारा ईमानदारी एवं सत्यनिष्ठा आचरण के मापदण्ड के अनुसार कार्य करने में असफल रहा हो।

(ई). सीमाएँ(limitations)

- लोकपाल संस्था भारत की प्रशासनिक संरचना में भ्रष्टाचार के विरुद्ध लड़ाई में बेहद ज़रूरी परिवर्तन बदलाव ला सकती है, लेकिन इसके साथ ही साथ उसमें कुछ खामियाँ और कमियाँ भी हैं जिन्हें दुरुस्त किये जाने की आवश्यकता है।
- संसद द्वारा लोकपाल एवं लोकायुक्त अधिनियम, 2013 पारित होने के पाँच वर्ष बाद किसी तरह से लोकपाल की नियुक्ति हो पाई, जो राजनीतिक इच्छाशक्ति में कमी का संकेतक है।
- लोकपाल अधिनियम में राज्यों से भी इसके लागू होने के एक साल के भीतर लोकायुक्त नियुक्त करने के लिये कहा गया है, परंतु केवल 16 राज्यों ने लोकायुक्त की स्थापना की।
- लोकपाल राजनीतिक प्रभाव से मुक्त नहीं है क्योंकि स्वयं नियुक्ति समिति राजनीतिक दलों के सदस्यों से गठित है।

- लोकपाल की नियुक्ति में एक प्रकार से चालाकी की जा सकती है क्यों कि यह निर्धारित करने का कोई मानदंड नहीं है कि कौन एक 'प्रख्यात न्यायविद' या 'सत्यनिष्ठा का व्यक्ति' है।
- वर्ष 2013 का अधिनियम व्हिसल ब्लोअर को कोई ठोस सुरक्षा नहीं देता। यदि आरोपी व्यक्ति निर्दोष पाया जाए तो शिकायतकर्त्ता के विरुद्ध जाँच शुरू करने का प्रावधान लोगों को शिकायत करने से हतोत्साहित ही करेगा।
- इसकी सबसे बड़ी कमी न्यायपालिका को लोकपाल के दायरे से बाहर रखना है।
- लोकपाल को कोई संवैधानिक आधार नहीं दिया गया है और लोकपाल के विरुद्ध अपील का कोई पर्याप्त प्रावधान नहीं है।
- लोकायुक्त की नियुक्ति से संबंधित विशिष्ट विवरण पूरी तरह से राज्यों पर छोड़ दिया गया है।
- कुछ सीमा तक CBI की कार्यात्मक स्वतंत्रता की आवश्यकता को इसके निदेशक की नियुक्ति में इस अधिनियम में संशोधन करके पूरा किया गया है।
- भ्रष्टाचार के विरुद्ध शिकायत उस तिथि से सात साल के बाद पंजीकृत नहीं की जा सकती जिस तिथि को ऐसी शिकायत में कथित अपराध किये जाने का उल्लेख हो।

(उ). सुझाव (Suggestion)

- भ्रष्टाचार की समस्या से निपटने के लिये कार्यात्मक स्वायत्तता तथा मानव शक्ति की उपलब्धता दोनों मामलों में ओम्बुड्समैन संस्था को मजबूत किया जाए। (लोकपाल)
- स्वयं को सार्वजनिक जाँच का विषय बनाने के लिये इच्छुक एक अच्छे नेतृत्व के साथसाथ अधिक पारदर्शिता-, अधिक सूचना के अधिकार तथा नागरिकों और नागरिक समूहों के सशक्तीकरण की आवश्यकता है।
- लोकपाल की नियुक्ति ही स्वयं में पर्याप्त नहीं है। सरकार को उन मुद्दों को भी हल करना चाहिये जिनके आधार पर लोग लोकपाल की मांग करते हैं। मात्र जाँच एजेंसियों की संख्या में बढ़ोतरी करना सरकार के आकार में तो वृद्धि करेगा, परंतु यह आवश्यक नहीं है कि इससे प्रशासनिक कार्यों में भी सुधार आए।
- इसके अलावा लोकपाल और लोकायुक्त उनसे वित्तीय, प्रशासनिक और कानूनी रूप से अवश्य स्वतंत्र होने चाहिये, जिनकी जाँच एवं जिन्हें दंडित करने के लिये उन्हें कहा जाता है।
- लोकपाल और लोकायुक्त नियुक्तियाँ पारदर्शिता से होनी चाहिये ताकि गलत प्रकार के लोगों के पदस्थापित होने की संभावना को कम किया जा सके।

- किसी एक संस्था या प्राधिकारी में अत्यधिक शक्ति के संचयन को टालने के लिये समुचित जवाबदेही व्यवस्था के साथ विकेंद्रीकृत संस्थानों के बाहुल्य की आवश्यकता है।

8.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(अ). भारतीय संविधान के किस अनुच्छेद के तहत, अखिल भारतीय सेवाओं के कर्मचारियों को मिली संवैधानिक सुरक्षा मिली है।

(आ). लोकपाल संस्था के चेयरपर्सन और सदस्यों का कार्यकाल कितना होता है ?

(इ). लोकपाल व लोकायुक्त विधेयक कब लागू हुआ ।।

(ई). ओम्बड्समैन की स्थापना सर्वप्रथम कब और कहाँ हुई थी ?

(उ). दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना का नाम कब केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (Central Bureau of Investigation-CBI)

कर दिया गया ?

(ऊ). केंद्रीय सतर्कता आयोग की स्थापना कब की गई थी?

8.6.सारांश (Summary)

भ्रष्टाचार किसी भी समाज में नैतिक और सामाजिक मूल्यों के पतन का परिचायक है। यह समस्या भारत समेत विश्व के अधिकांश देशों में एक बड़ी चुनौती बनकर सामने आई है।नीतियों और कानूनों की जटिलता,नैतिक मूल्यों का ह्रास,प्रशासनिक अक्षमता और लालफीताशाही, पारदर्शिता और जवाबदेही की कमी,राजनीतिक हस्तक्षेप,वेतन और भत्तों की कमी आदि अनेक कारन है जिनके कारण भ्रष्टाचार बढ़ता जा रहा है। कानूनी सख्ती,पारदर्शिता,जवाबदेही सुनिश्चित करना,ई-गवर्नेंस को बढ़ावा देकर ,नैतिक शिक्षा और नागरिकों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक कर,स्वतंत्र और निष्पक्ष जांच एजेंसियों को सशक्त बना कर, आदि कई उपाय है जिन्हे अपना कर इस समस्या को दूर करने का प्रयास किया जा सकता है। भारत में भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए संस्थागत व्यवस्था के अंतर्गत केंद्रीय सतर्कता आयोग (**CVC)** की स्थापना 1964 में संथानम समिति की सिफारिश पर की गयी।सीवीसी स्वतंत्र निकाय के रूप में काम करता है। इसका कार्य भ्रष्टाचार के खिलाफ सतर्कता सुनिश्चित करना है ।यह सरकारी अधिकारियों और कर्मचारियों के खिलाफ शिकायतों की जांच व ।मंत्रालयों और विभागों की सतर्कता प्रणाली का निरीक्षण करता है। भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए एक अन्य संस्था केंद्रीय जांच ब्यूरो (**CBI)** है

जिसकी स्थापना1941 में विशेष पुलिस प्रतिष्ठान के रूप में हुयी जिसे बाद में 1963 में सीबीआई के रूप में विकसितकिया गया। इसका कार्य भी भ्रष्टाचार और आर्थिक अपराधों की जांच करना व उच्च स्तरीय अपराध और राष्ट्रीय महत्व के मामलों का निपटाराकरना है।

लोकपाल की स्थापना लोकपाल और लोकायुक्त अधिनियम, 2013 के तहत की गई यह स्वतंत्र संस्था है जिसमें अध्यक्ष और अन्य सदस्य शामिल होते हैं इसका कार्य भी उच्च स्तरीय लोक सेवकों और मंत्रियों के खिलाफ भ्रष्टाचार की जांच करना, भ्रष्टाचार की शिकायतों को सुनना और उन पर कार्रवाई करना है। राज्यों में लोकायुक्त का गठन किया गया है। यह राज्य सरकार के अधिकारियों, मंत्रियों और लोक सेवकों के भ्रष्टाचार से संबंधित मामलों की जांच करता है। लोकायुक्त को अधिक सशक्त और संसाधनयुक्त बनाने की आवश्यकता।भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई में केवल संस्थागत ढांचे की ही नहीं, बल्कि जन-भागीदारी और राजनीतिक इच्छाशक्ति की भी आवश्यकता है। भारत में सीवीसी, सीबीआई, लोकपाल और लोकायुक्त जैसे संस्थानों को और अधिक सशक्त बनाने के साथ-साथ समाज में नैतिक मूल्यों को पुनः स्थापित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। पारदर्शिता, ई-गवर्नेंस और कानूनी सुधारों से भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई को प्रभावी बनाया जा सकता है।

8-7.सूचक शब्द (Key Words)

- **भ्रष्टाचार-**भ्रष्टाचार वह कृत्य है जिसमें किसी व्यक्ति को सार्वजनिक या निजी पद पर रहते हुए अपने स्वार्थ के लिए अनुचित लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से नियमों, कानूनों, और नैतिकता का उल्लंघन करना शामिल होता है।"
- **नौकरशाही (bureaucracy)-**नौकरशाही या ब्यूरोक्रेसी (bureaucracy) का अर्थ है, किसी बड़ी संस्था या सरकार के कामकाज के लिए बनाई गई संरचनाएं और नियम. इसमें कई स्तरों पर पदानुक्रम होता है और ज़िम्मेदारियां, अधिकार, और काम, व्यक्तियों, कार्यालयों, या विभागों के बीच बंटे होते हैं।
- **लोकपाल और लोकायुक्त-**लोकपाल और लोकायुक्त, भारत की भ्रष्टाचार विरोधी संस्थाएं हैं. इनका मकसद, सार्वजनिक कार्यालयों में भ्रष्टाचार और कुप्रशासन से जुड़ी शिकायतों को दूर करना है।
- **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो CBI-**केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो (Central Bureau of Investigation) या सीबीआई भारत सरकार की प्रमुख जाँच एजेन्सी है। यह आपराधिक एवं राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े हुए भिन्न-भिन्न प्रकार के मामलों की जाँच करने के लिये लगायी जाती है।

- **केंद्रीय सतर्कता आयोग-**केंद्रीय सतर्कता आयोग (सीवीसी) भारत में एक शीर्ष सरकारी संस्थान है जो देश के सार्वजनिक प्रशासन में ईमानदारी, पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा देने के लिए जिम्मेदार है। इसकी स्थापना 1964 में भ्रष्टाचार निवारण पर बनी संथानम समिति की सिफारिशों के परिणामस्वरूप की गई थी।

8.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- केंद्रीय सतर्कता आयोग की संरचना और कार्यों का विस्तार से वर्णन करें।
- केंद्रीय जांच ब्यूरो की संरचना और कार्यों का विस्तार से वर्णन करें।
- लोकपाल और लोकायुक्त की अवधारणा का विस्तार से वर्णन करें।
- भ्रष्टाचार के कारणों और प्रभावों का वर्णन करें।
- भ्रष्टाचार रोकने के उपायों का विस्तार से वर्णन करें

8.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(अ). भारतीय संविधान के अनुच्छेद 311 के तहत

(आ).5 वर्ष या 70 वर्ष की आयु तक है।

(इ). 1 जनवरी, 2014 को राष्ट्रपति ने इसे अपनी सम्मति दे दी और 16 जनवरी, 2014 को यह लागू हो गया।

(ई). सन् 1809 में स्वीडन

(उ). 1963 में

(ऊ).इसकी स्थापना 1964 में हुई थी

8.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

- अरोड़ा, आर. के. (**2008)** शासन में नैतिकता: नवीन मुद्दे और उपकरण। रावत: जयपुर
- अरोड़ा, रमेश के. (संपादक) (**2014)** लोक सेवा में नैतिकता, सत्यनिष्ठा और मूल्य। न्यू एज इंटरनेशनल: नई दिल्ली
- सी. भार्गव, आर. (**2006)** भारतीय संविधान की राजनीति और नैतिकता। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस: नई दिल्ली
- डी. चक्रवर्ती, विद्युत (**2016)** भारत में शासन में नैतिकता। रूटलेज: नई दिल्ली
- ई. चतुर्वेदी, टी. एन. (संपादक) (**1996)** सार्वजनिक जीवन में नैतिकता। आईआईपीए: नई दिल्ली

- एफ. गांधी, महाथिरिम (**2009)** हिंद स्वराज। राजपाल एंड संस: दिल्ली
- जी. गोडबोले, एम. (**2003)** सार्वजनिक जवाबदेही और पारदर्शिता: सुशासन के आवश्यक तत्व। ओरिएंट लॉन्गमैन: नई दिल्ली
- एच. हूजा, आर. (**2008)** भ्रष्टाचार, नैतिकता और जवाबदेही: एक प्रशासक द्वारा निबंध। आईआईपीए: नई दिल्ली
- आई. माथुर, बी. पी. (**2014)** शासन के लिए नैतिकता: सार्वजनिक सेवाओं का पुनर्निर्माण। रूटलेज: नई दिल्ली

NOTES

NOTES

NOTES

NOTES